झाँसीकी रानी

लक्ष्मीबाई ।

हिन्दी-गौरव-ग्रंथमाला का ११ वाँ ग्रंथ

झाँसीकी रानी

लक्ष्मीबाई ।

श्रीयुत् दत्तात्रय बलवंत पारसनीस

की

मराठी पुस्तक का

अनुवाद

प्रकाशक,

गांधी हिन्दी-पुस्तक-भण्डार,

साहित्य-भवन, जान्स्टनगंज, प्रयाग

प्रथम संस्करण पौष सं० १९७५ वि०

द्वितीय संस्करण फाल्गुन सं० १९८२ वि०

मूल्य सवा रुपया ।

विषय-सूची ।

परिचय ।

यह कहनेमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि आज तक जितनी ऐतिहासिक भारतीय वीर रानियाँ अपने-अपने वीर, तथा साहसी कार्योंसे सारे संसारको चकित करके अपनी अक्षय कीर्ति स्थापित कर गई हैं, उन सबमें अंतिम भारतीय वीर रानी झाँसीकी महारानी लक्ष्मीबाई अग्रगण्य थीं। सन् १८५७ के भारतीय सिपाही-विद्रोहके समयसे इस वीर रानीका नाम भारतवर्षमें सर्वत्र व्यापक हो गया है। इस वीर रानीके अतुल पराक्रम और साहसकी प्रशंसा सभी देशी और विदेशी बड़े प्रेम और अभिमानके साथ करते हैं। रानी लक्ष्मीबाईकी वीरताका हाल पढ़कर ऐसा कौन हतभागी होगा जो एक बार भारतकी प्राचीन वीरताका स्मरणकर आनन्द-सागरमें निमग्न न हो जाय। महारानीके जैसी गुणशालिनी, स्वाधीनता-प्रिय वीर रमणीका चरित भारतीय इतिहासमें सर्वोच्च स्थान पाने योग्य है। इतना होने पर भी महारानीके चरितका जैसा प्रकाश पड़ना चाहिए वैसा न पड़ा। इसका कारण यह है कि महारानी लक्ष्मीबाईका सम्बन्ध सिपाही-विद्रोहसे है। वे बागियोंकी अगुओंमें एक प्रधान और प्रबल अगुआ समझी जाती हैं। सिपाही-विद्रोहके कलङ्कका टीका उनके माथे पर लग जानेके कारण उनका जीवन-चरित लिखना बड़ा कठिन कार्य हो रहा है; परन्तु जिन महारानी लक्ष्मीबाईने बड़े-बड़े भीषण युद्धोंमें अति शूर-वीर, पराक्रमी और रण-कुशल अँगरेज़-योद्धाओंसे युद्ध करके उनको परास्त किया, उनकी उस वीरता, अतुल पराक्रम और साहसको बिना इतिहासमें स्थान

दिये हम लोग उनकी कीर्त्तिको कभी चिरस्थायी नही रख सकते। तात्पर्य यह कि जब तक किसी महान् विषयको इतिहासमे स्थान नही दिया जाता तब तक उसका चिरस्मरणीय रहना कठिन ही नही, बल्कि असम्भव है। अतएव अपने देशके महापुरुषोका वर्णन इतिहासमे लिखा जाना बहुत ही आवश्यक है। अन्यथा उनके अपूर्व-असाधारण कार्य यो ही नष्ट हो जायँगे। मानो उन्होने जन्म लेकर अपने देश, अपने समाज और अपनी जातिके लिए कुछ किया ही नही। और ऐसी दशामे न तो भविष्यत्मे उनकी सन्तान पर उनके अलौकिक कार्योंका प्रकाश पड़ सकता है और न उनकी सन्तान अपने पूर्वजोके अनुकरणीय कार्योंका अनुकरण करके सारे ससारको चकित और स्तम्भित कर सकती है। फिर उनके जन्म लेनेसे ही लाभ क्या ? अङ्गरेज़ीके विख्यात कवि पोपने अपनी अपूर्व कविता Temple of Fame अर्थात् 'कीर्त्ति-मठ' मे इतिहास लेखकोका एक प्रधान स्थान दिया है। कवि कहता है:—

"*Full in the passage of each spacious gate,*
The sage historians in white garments wait.
Graved over the seats the form of Time was found,
His lay he removed and both his pinions bound"

इससे सिद्ध होता है कि यह असंभव है कि प्रत्येक देशके महान्, अमूल्य मानव-रत्न समूह उस देशके इतिहासमे स्थान पाये बिना, प्रलय काल पर्यन्त अपनी अप्रतिम दिव्य प्रभासे ससारको प्रदीप्त करते रहेगे। सारांश यह कि प्रत्येक देशमे उस देशके महान् स्त्री-पुरुषोकी कीर्त्ति-ज्योतिको चिर प्रदीप्त बनाये रखनेका मूल आधार अक्षय-दीपक इतिहास ही है। सैकड़ो वर्षोंसे अपने देशके इतिहासके मर्मको भूल जानेके कारण इस ओर हमारे देशवासियोंका विशेष ध्यान नही था। भारतवर्षके हर-एक प्रान्तमे ऐसे सैकड़

हज़ारों वीर हो गये हैं जो शत्रु-सेनाको घास-मूलीकी तरह क्षण भरमें काटकर फेंक देते थे। कितनोंने ही हिन्दू-राज्यका झंडा अटक पार तक लहरा दिया। कितनोंने अपने राज काज-कुशलता आदि गुणोंसे विदेशीय लोगोंकी दाल नहीं गलने दी। कितनोंने स्वदेश और स्वधर्मकी रक्षाके लिए भीषण खड्गकी तीक्ष्ण-धारकी कुछ भी परवा न कर अपने असाधारण बुद्धि-बलसे संसारको चकित करके अपना जीवन सफल किया। जिस देशके इतिहासमें ऐसे ऐसे वीर और गुणी नर-रत्नोंके इतिहास नहीं लिखे गये वहाँ पर सिपाही-विद्रोहसे सम्बन्ध रखनेवाली और अपने बाहुबलसे भारत-के प्रभु अँगरेज़ोंके गर्वको खर्व करनेवाली एक बेचारी अबलाके इतिहासको कौन पूछता है? परन्तु विचार करने पर ऐसा कोई विचारशील पुरुष न मिलेगा जो यह न कहे कि सन् १८५७ का सिपाही-विद्रोह एक महान् राजनीतिक घटना होनेके कारण पूर्ण-रूपसे विचार करने और निष्पक्षपात दृष्टिसे आलोचना करने योग्य है। मेलसन आदि अनेक अँगरेज़-इतिहासज्ञ विद्वान् लोगोंने सन् १८५७ के सिपाही-विद्रोहके विषयमें अनेक बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखे हैं। और बहुतसे विद्वान् इतिहासज्ञ अँगरेज़ लोग अब भी इस विषय पर अनेक ग्रन्थ लिखते जाते हैं। उस समयके प्रख्यात-प्रख्यात कर्नलोंसे लेकर बड़े लाट गवर्नर जनरल तक का इतिहास मिलता है। उन्हीं अँगरेज़ ग्रन्थकारोंकी पुस्तकोंमें कहीं-कहीं, मौक़े-मौक़े पर भारतीय सुप्रसिद्ध पुरुषोंका भी कुछ वृत्तान्त लिखा हुआ है! उन लोगोंने उस समयके वीर मनुष्योंकी स्तुति और उनके गुणोंकी प्रशंसा करनेमें कभी आगा-पीछा नहीं किया। परन्तु हमें उनकी स्तुति, निन्दा अथवा प्रशंसासे कुछ प्रयोजन नहीं; क्योंकि अपने गुणोंको व्यक्त करना यह उनका काम है। हमारा कार्य तो यह है कि हम अपने पूर्वजोंकी मान-मर्यादाकी रक्षा करनेका उपाय सोचें।

क्योंकि बिना उनकी मान-रक्षा किये हम कभी संसारमें किसी बड़े और कठिन कार्यके करने योग्य नहीं हो सकते। भारतीय दंड-संग्रहके प्रणेता मेकालेका कथन है—

"A people which takes no pride in the noble achievements of their ancestors will never achieve any-thing worthy to be remembered with pride by their descendants. "जो मनुष्य अपने पूर्वजोंके उत्तम कार्योंकी सराहना नहीं करता वह कदापि अपनी सन्तानके लिए कोई अभिमान-जनक स्मरणीय कार्य नहीं कर सकता।"

सन् १८५७ की झाँसीकी वीर रानी, महारानी लक्ष्मीबाईका वृहत् जीवन-चरित न लिखे जानेके कारण दिनों दिन उनके चरित पढ़नेकी लोगोंकी इच्छा और उत्कंठा बढ़ती जाती है। महारानीको मरे अभी बहुत समय नहीं हुआ। उनकी कीर्तिका गान करनेवाले अभी बहुत लोग जीवित हैं। उनके मुखसे महारानीकी अप्रतिम वीरता और अपूर्व साहसकी कहानियाँ सुनकर लोगोंको उनके पूर्ण जीवन-चरित पढ़नेकी लालसा बढ़ती ही जा रही है। जिन महारानीकी तुलना फाँसीकी प्रसिद्ध सेना-नायिका "जॉन आफ़ आर्क" से की जाती है उनका चरित जाननेकी भला किसे इच्छा न होगी? सिपाही-विद्रोहका इतिहास लिखनेवाले प्रसिद्ध इतिहास-लेखक मेलसन साहबने भी रानीके सम्बन्धमें लिखा है—"अँगरेज़ी-सरकारकी दृष्टिसे रानीका दोष कुछ ही हो; परंतु उस शूर-वीर स्त्रीके सम्बन्धमें उसके स्वदेश-बंधु लोग यही समझेंगे कि उनके साथ बुरा वर्ताव होनेके कारणसे ही वे बागियोंमें शामिल हुईं। उनका पक्ष ठीक था। बुंदेलखंड और मध्यभारतमें भी असन्तोष फैलनेके कारणोंमेंसे मुख्य कारण लार्ड डलहौसीका उनके साथ बुरा वर्ताव था। उनको वह स्त्री सदैव वीर-नारी प्रतीत होगी।"

इस प्रकार जिनकी गुण-गाथाका शत्रु भी गान करते हैं। उनके चरितके जानने और पढ़नेकी ओरसे उस जाति और देशके लोग कभी उपेक्षा नहीं कर सकते। ऐसा करना उनके लिए बड़ी भारी कृतघ्नता है। इन्हीं सब बातोंका विचार कर महाराष्ट्र देशके प्रसिद्ध इतिहास-लेखक श्रीयुत रायबहादुर दत्तात्रय बलवंत पारसनीस ने महारानीका बृहत् चरित लिखनेका संकल्प किया। इसके बाद उन्होंने चरित लिखनेके लिए सामग्री इकट्ठी करना आरंभ की। कई वर्षोंके कठिन परिश्रम और खोजके बाद आपने मराठी भाषामें महारानीका एक बहुत ही सुन्दर जीवन-चरित लिखा। इस चरितके प्रकाशित होते ही चारों ओर पारसनीस महोदयकी विद्या, बुद्धि और खोजकी प्रशंसा होने लगी। महारानी लक्ष्मीबाईके चरितके सम्बन्धमें जहाँ-जहाँ पर लोगोंको भ्रम था उन्हीं-उन्हीं स्थलोंको आपने खूब ही विस्तार-पूर्वक प्रमाणोंके साथ लिखकर लोगोंके भ्रम-को निर्मूल करनेका प्रयत्न किया है। जो लोग उनके जीवनको दूषित और कलङ्कित करते थे उनका मुँह तोड़ उत्तर देकर उनके जीवनको निर्दोष और निष्कलंक सिद्ध किया है। अँगरेज़ ग्रंथ-कारोंके मतोंकी भी आपने खूब ही अच्छी तरह विवेचना की है। सारांश यह कि अब तक महारानी लक्ष्मीबाईका इतना वृहत्, खोज-पूर्ण, और सप्रमाण जीवन-चरित किसी भाषामें नहीं लिखा गया है। जिन प्रमाणोंको आपने अपनी पुस्तकमें दिया है उनकी खोज करना तो दूरकी बात है उस ओर लोगोंकी कल्पना भी नहीं पहुँच सकती थी। हिंदीमें महारानीकी कोई जीवनी नहीं है, और यह हिन्दी-साहित्यमें एक बड़ी भारी कमी थी। इस कारण पारसनीस महाशयकी लिखी जीवनीका यह अनुवाद प्रकाशित कर उस कमी-को पूरा करनेका यत्न किया गया है। आशा है, हिन्दीके पाठक भारतकी अप्रतिम शौर्यशालिनी महारानी लक्ष्मीबाईका दिव्य जीवन-

वृत्तान्त पढ़कर अपूर्व आनन्द लाभ करेंगे और अपने जीवनका मर्म समझनेमें कृतकार्य होंगे।

प्रथम संस्करण में इस पुस्तकके प्रारम्भमें टिप्पणी आदि कुछ आवश्यक भाग छूट गया था और पुस्तकके अन्तमें परिशिष्ट रूपमें दिया गया था अब वह यथा स्थान दे दिया गया है।

अन्तमें सर्व शक्तिमान् प्रभुसे प्रार्थना है कि वह महारानी जैसी देवियोंको जन्म देकर दीनहीन भारतका कल्याण करे।

—अनुवादक।

महारानी लक्ष्मीबाई।

पहला अध्याय

कुल-वृत्तान्त, जन्म, बाल्यावस्था, विवाह और झाँसीका वर्णन।

महाराष्ट्र देशमें सताराके समीप कृष्णा नदीके किनारे वाई नामका एक ग्राम है। उस ग्राममें कृष्णराव तांबे नामके एक सद्गुण-सम्पन्न महाराष्ट्र ब्राह्मण रहते थे। वे पेशवाईके समयमें एक उच्च पदाधिकारी थे। उनके बलवंत नामका एक शूर और पराक्रमी पुत्र था। उसने भी पूनाके पेशवाकी कृपासे फौजमें एक उत्तम पद पाया। उसके मोरोपंत और सदाशिव नामके दो पुत्र हुए। मोरोपंत पर चिमाजी आपासाहबकी, जो द्वितीय बाजीराव पेशवाके सहोदर थे, बड़ी कृपा थी। जिस समय महाराष्ट्रके अंतिम पेशवा बाजीरावने सन् १८१८ ईस्वीमें आठ लाखकी पेन्शन लेकर ब्रह्मावर्त्तमें रहना स्वीकार किया उस समय अँगरेज़ सरकारने चिमाजी आपा साहबको पेशवाईकी गद्दी पर बिठलाना चाहा; परंतु उन्होंने नाम-मात्रकी पेशवाईको स्वीकार न करके काशीजीमें अपना रहना निश्चय किया। मोरोपंत तांबे भी इनके कृपा-भाजन होनेके कारण इन्हींके साथ काशीजी गये और वहाँ उनका कुल काम-काज करते रहे। श्रीमान्‌की ओरसे उन्हें ५० रुपये मासिक वेतन मिलता था।

मोरोपंतकी पत्नीका नाम भागीरथी बाई था। यह स्त्री बड़ी सुशील, चतुर, रूपवान और अनेक गुण-सम्पन्न थी। पति और

पत्नीमें सदैव बड़ा प्रेम रहता था। संसारमें प्रेमसे बढ़कर और कोई पवित्र वस्तु नहीं है; यदि वह प्रेम सच्चा और शुद्ध हृदयसे किया गया हो। यदि दो मनुष्य प्रेमबद्ध होकर किसी दुस्तरसे दुस्तर कार्यको करना चाहें तो वह सरलता-पूर्वक किया जा सकता है। किसी कविने ठीक कहा है कि 'अगर दो दिल मिल कर चाहें तो पहाड़ भी तोड़ सकते हैं'। फिर यदि पति और पत्नीमें परस्पर सच्चा प्रेम हो तो यह बतानेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती कि संसार-यात्रा किस प्रकार उत्तम रीतिसे निर्वाह हो सकती है। ऐसा ही सच्चा प्रेम मोरोपंत और उनकी पत्नीमें था। इस पतिव्रता स्त्रीका वर्णन करते-करते हमें नीचे लिखी हुई पंक्तियोंका स्मरण होता है:—"पत्यनुकूला चतुरा प्रियंवदा या सुरूपसंपूर्णा। सहजस्नेह-रसाला कुलवनिता केन तुल्या स्यात्॥" ऐसे शुद्ध और पवित्र प्रेम-बीजके फल भला क्यों कर मीठे और उत्तम न होंगे? कार्त्तिक बदी १४ संवत् १८९१ (ता० १६ नवंबर सन् १८३५ ई०) को मोरोपंतके घरमें कन्याका जन्म हुआ। संतानकी उत्पत्तिका जो आनंद मनुष्यको होता है वह संसारमें सब लोगोंको विदित ही है; इसी प्राकृत रीत्यनुसार मोरोपंतको भी आनंद हुआ। उनके सब मित्र, स्नेही, बंधुओंने भी इस आनंदमें उनको बधाई दी। सब लोगोंने मिलकर आशीर्वाद दिया कि 'ईश्वर आपकी इस संतानको चिरायु करे और भविष्यत्में यह बड़े यश और पराक्रमको प्राप्त करे'। यद्यपि यह आशीर्वाद केवल वर्तमान समयके विचारों पर दृष्टि देकर साधारण रीतिसे दिया गया था, तथापि यही वाक्य समय पाकर सार्थक हुआ। काशीजीके विख्यात ज्योतिषियोंने जातकादिका विचार कर यह भविष्य कथन किया था कि "यह बालिका राजलक्ष्मीसे अलंकृत होकर अत्यंत शौर्यशालिनी स्त्री होगी"। उस समय उसके कोमल अंग और शांत मुखको देखकर

किसीको स्वप्नमे भी यह अनुमान न था कि यह बालिका इस प्रकार शूरवीर होगी और अपने पराक्रमी कामोसे जगद्विजयी अँगरेजोंको भी चकित कर देगी !

माता-पिताने इस कन्याका नाम मनूबाई रक्खा; यही कन्या पतिगृहमे जाकर लक्ष्मीबाईके नामसे प्रसिद्ध हुई। जिस समय चिमाजी आपासाहबने अपना भौतिक शरीर छोड़ा उस समय मोरोपतके कुटुम्ब पालनार्थ काशीमे कोई सहारा न रहा, परन्तु चिमाजीके भाई बाजोराव पेशवाने, जो उस समय ब्रह्मावर्तमे रहते थे, इन सबको अपने पास बुला लिया। बाजीरावकी भी मोरोपत पर बड़ी कृपा हो गई। वे अपना समय सुख-पूर्वक उन्हीके पास बिताने लगे। परन्तु दुर्दैव-वश उनकी पत्नीका देहांत हो गया और हमारी चरित्र-नायिका बालिका मनूबाई तीन हो चार वर्षकी अवस्था मे माता-विहीन हो गई। पत्नीके मरने पर मोरोपंत को सारा गृहकार्य स्वय अपने सिर पर लेना पड़ा। वे बालिका मनूका लालन-पालन अपने आपही करने लगे। मनू भी दिनो दिन चन्द्रकला की तरह बढ़ने लगी। वह अपने पिताके साथ-साथ सदा पुरुष-मडलीमें रहा करती थी। वह बाल्यावस्थासे ही बड़ी रूपवती थी। उसके विशाल नेत्र और गौर वर्णको देखकर कौन ऐसा अभागी पुरुष होगा जिसको आनन्द न होता होगा? बाजीराव पेशवा और उनके समीपवर्ती लोग उस बालिका का सौंदर्य देखकर उसको छबीली कहकर पुकारते थे। बाजीरावके दत्तक-पुत्र नानासाहब और रावसाहब भी उस समय बालक ही थे; वे दोनो मनूबाईके साथ नाना प्रकारके खेल खेला करते थे। प्राचीन शिक्षा-प्रणालीके अनुसार मनूबाईकी शिक्षाका भी प्रबन्ध किया गया। वह अपनी स्वाभाविक चपलताके कारण जो कुछ नाना साहब को करते देखती उसीके लिये हठ

करती। जब कभी वे घोड़े पर सवार होकर वायु-सेवनके लिए बाहर जाते थे तब वह भी उनके साथ घोड़े पर सवार होकर जाती थी। इस विषयमें यह किम्वदंती प्रसिद्ध है कि एक दिन नानासाहब हाथी पर सवार होकर घूमनेको निकले। मनूबाई भी हाथी पर सवार होनेकी ज़िद की। बाजीराव साहब ने नाना साहबसे लड़कीको हाथी पर बिठा लेनेका संकेत किया; परन्तु नाना साहबने देखी-अनदेखी करके अपने पिताके संकेत पर कुछ भी ध्यान न दिया। इधर लड़की अपने हठको नहीं छोड़ती थी! उसका हठ देखकर मोरोपंतको क्रोध आया। वे क्रोधित होकर बोले—"क्या तेरे भाग्यमें हाथी बदा है? क्यों निरर्थक हठ करती है?" लड़कीने चपलता-पूर्वक शीघ्र उत्तर दिया कि "हाँ, मेरे भाग्यमें एक छोड़ दस हाथी बदे हैं"। यह वाक्य समय पाकर यथार्थमें सत्य सिद्ध हुआ। कहनेका तात्पर्य यह है कि मनूबाईने बाजीराव पेशवाके दत्तक-पुत्रके साथ-साथ विद्याभ्यास, शारीरिक व्यायाम तथा युद्ध-कला आदिकी उपयुक्त शिक्षा प्राप्तकी। यही बालकपनकी शिक्षा उसकी भावी तेजस्विता और अलौकिक साहसकी नींव है।

किसी अच्छी बातका अनुकरण करना मानो पारस-पत्थर है। जिसको यह छूजाता है वह सोना हुए बिना नहीं रहता। बाल्यावस्थामें कोमल चित्त पर जो भाव अंकित हो जाते हैं वे ही आगे चलकर मनुष्यकी उन्नति अथवा अवनतिके कारण होते हैं। यही हाल हमारी चरित्रनायिका का हुआ। क्षत्रियत्वका बीज इस बालिकाके हृदयमें मानों यहींसे बोया गया।

कालचक्र किसीके रोके नहीं रुक सकता। वह अपना कार्य संसारमें किये ही जाता है। सांसारिक मनुष्य चाहे उससे शिक्षा लें अथवा न लें; उसका कार्य कभी बन्द होनेवाला नहीं। वह

सदैव एकसा अपना कार्य करता रहता है। इसी प्रकार अब हमारी चरित्र-नायिका बालिका, मनू कोरी बालिकाही नहीं रही। प्रकृतिने जो नियम निर्धारित कर दिये हैं वे समय पर फलीभूत हुए बिना नहीं रहते। तात्पर्य यह है कि बाल्यावस्थाके बाद युवावस्थाके चिह्न मनूबाईमें दिखाई पड़ने लगे। तब मोरोपंत को कन्याके विवाह की चिन्ता हुई। वे रात-दिन इसी विचारमें निमग्न रहते। ब्रह्मावर्तमें उनकी जातिका कोई ब्राह्मण न था, जिसके साथ वे अपनी लड़कीके पाणिग्रहणकी बातचीत करते। इस कारण वे अन्य स्थानोंमें लड़केकी खोज करने लगे। दैवात् एक दिन तात्या-दीक्षित नाम के एक प्रसिद्ध ज्योतिषी झाँसीसे बाजीरावसे मिलनेके लिये ब्रह्मावर्त आये। मोरोपंतने इस अवसरको अच्छा जान अपनी लड़की मनूबाई का जन्मपत्र ज्योतिषीजीको दिखलाकर कहा कि यदि इसके योग्य कोई वर आपके ध्यानमें झाँसी या किसी अन्य स्थानमें हो तो कृपा करके मेरे इस भारको हलका कीजिए। दीक्षितजीने जन्मपत्र देख कर कहा कि 'भविष्यत्में यह लड़की किसी राजपद पर आरूढ़ होगी'। उस समय ज्योतिषीजीके वाक्य सुनकर कौन था जिसको आनन्द न हुआ हो?

थोड़े ही दिनों पीछे सन् १८४२ ई० में झाँसीके महाराज श्रीमान् गंगाधररावके साथ मनूबाईका विवाह बड़ी धूमधामसे हुआ। विवाह समयकी एक अद्भुत घटना उल्लेख योग्य है। जिस समय भाँवरें पड़ रहीं थीं और वर-कन्याके दुपट्टोंकी गाँठ बाँधी जा रही थी उस समय मनूबाईने पुरोहितजी से कहा कि 'पुरोहितजी, ज़रा गाँठ खूब मज़बूत बाँधना'। यह वाक्य सुनकर लोगोंको बड़ा आश्चर्य्य हुआ। उस समय उस चतुर लड़कीका इस वाक्यसे यही अभिप्राय था कि मेरी और

पतिकी प्रेम-गाँठ दृढ़ बनी रहे। पतिगृहमे मनूबाईका नाम लक्ष्मी-बाई रक्खा गया। विवाहके पश्चात् गंगाधररावने लडकीके पक्ष-वालोको बहुत कुछ पुरस्कार दिया। मोरोपंत को भी ३००) रुपये मासिक देकर झाँसी-दरबारमें एक सरदारीकी जगह दी गई। मोरोपतकी प्रथम पत्नीका देहान्त हो गया था। उन्होने अब तक अपना दूसरा विवाह नही किया था, परन्तु झाँसी आने पर गुल-सरायके वासुदेव शिवराव खानवलकरकी कन्याके साथ उन्होने अपना द्वितीय विवाह किया। मोरोपतकी इस पत्नीका नाम चिमनाबाई था।

यहाँ पर अब झाँसीका भी थोड़ासा वर्णन करना आवश्यक जान पड़ता है। क्योकि पाठकोंको कहीं यह भ्रम न हो जाए कि महाराष्ट्र ब्राह्मणोंका राज्य बुन्देलखड प्रान्तमें किस प्रकार हुआ; वे तो दक्षिणके महाराष्ट्र-देश-निवासी हैं। इसलिए उनके यहाँ आनेका कारण और राज्य स्थापित करनेका वर्णन करना कुछ अप्रासगिक न होगा। मध्यभारतमे बुन्देलखंड* नामका एक

---

* बुंदेलखंड अर्थात् बुँदेले लोगोंके रहनेकी जगह। बुँदेले राजपूतोंकी एक जातिका नाम है। ये लोग बुँदेले नामसे क्यों प्रसिद्ध हुए, इसकी एक आख्यायिका यहहै :—

काशीजीमें जिस समय क्षत्रियोंका राज्य था उस समय उनके वंशमें पचम नामक एक राजा हुआ। उसको उसके भाइयोंने राज्यसे बाहर निकाल दिया। वह दुःखित अवस्थामें घूमता-फिरता विंध्याचल पर्वत पर विंध्यवासिनी देवीके मन्दिरमें गया और वहाँ देवीकी आराधना राज्य-प्राप्तिके लिए करने लगा। बहुत दिनो तक तपश्चर्या करनेके पश्चात् देवीको प्रसन्न करनेके लिए उसने अपना सिर काटकर देवीके आगे रख दिया। इस बातसे प्रसन्न होकर देवीने उसको जीवित कर दिया और उसे वरदान

अत्यन्त रमणीय, विस्तृत और प्रसिद्ध प्रदेश है। उसमे बहुतसी छोटे-बडी देशी रियासते हैं। झाँसी उन्हींमेसे एक प्रसिद्ध और बलाढ्य देशी-राज्यकी मुख्य नगरी थी। वर्तमान समयमें उसका भी प्राचीन वैभव सब नष्ट हो गया है। ओरछाके राजा वीरसिंहदेवका बनवाया हुआ प्रचण्ड किला अपनी वर्तमान जीर्णदशामे भी अपने पूर्व वैभव और विशाल स्वरूपका कुछ न कुछ परिचय देता ही है।

झाँसीकी प्राचीनताके विषयमे अधिक प्रमाण नहीं मिलते। केवल सन् १५०० ईस्वीसे इसका कुछ-कुछ वृत्तान्त प्रकट होता है। पहले पहल यह प्रान्त ओरछाके राजा वीरसिंहदेवके अधीन था। उस समय झाँसी एक छोटासा गाँव था। परन्तु वीरसिंहदेवने वहाँ एक बहुत बडा किला बनवाया। महाराज वीरसिंहदेव बड़े पराक्रमी राजा थे। इन्होने सन् १६०२ ईस्वीमे अकबर बादशाहके मन्त्री औ प्रसिद्ध इतिहास-लेखक अबुलफजलका युद्धमे बध किया था। इसी अनर्थके कारण अकबरने अपने पुत्र सलीमको फौज देकर बुन्देलखंड पर चढ़ाई करनेके लिए भेजा। परन्तु वीरसिंहने सन्मुख लड़ाई नहीं की। वे इधर-उधर आनाकानी करते रहे। अकबरकी मृत्युके पीछे उसका लड़का सलीम सन् १६०५ ईस्वीमे गद्दी पर बैठा। उसने वीरसिंहदेवका कसूर माफ कर दिया। परन्तु १६२७ ईस्वीमे जब दिल्लीकी गद्दी पर शाहजहाँ आरूढ़ हुआ तब फिर वीरसिंहदेवने लूटमार आरम्भ कर दी।

माँगनेकी आज्ञा दी। उसने कहा कि मुझे राज्य प्राप्त हो। देवीने प्रसन्न होकर उसे वर दिया कि तुझे राज्य प्राप्त होगा। उसके सिर काटनेसे कुछ रक्तबिंदु देवी पर पड़े थे, उन्हीं बिन्दुओंके पड़नेसे देवीने उसे बिन्दु अथवा बिंद कहकर सम्बोधन किया था। उसीका बिगडते-बिगड़ते बुँदेला शब्द हो गया है।

जब प्रजा इनके अत्याचारसे अति दुःखित हुई तब शाहजहाँ ने इनकी जागीर जब्त कर ली। उस समयसे १७०७ तक झाँसी-प्रान्त दिल्लीके अधीन रहा। सन् १७०७ में बहादुर शाह गद्दी पर बैठा तब झाँसी का परगना छत्रसालको जागीरमें मिला। छत्रसाल पँवार राजपूत था। इनकी राजधानी पन्ना थी। इनके पिताका नाम चम्पतराय था। छत्रसाल स्वधर्माभिमानी और बहुत बड़े शूरवीर राजा थे। इन्होंने सारे बुन्देलखंडका राज्य बड़ी उत्तमता-पूर्वक चलाया। उनके कामोंसे उनकी सारी प्रजा बहुत ही सन्तुष्ट रही। परन्तु जिनका स्वभाव दूसरोंका अभ्युदय देखकर जलना ही है उनको दूसरोंकी राहमें काँटे बोये बिना कल नहीं पड़ती। वे दूसरोंके सुख और वैभवको सहन नहीं कर सकते। किसी संस्कृत-कविने ठीक कहा है :—

अहो सहन्ते बत नो परोदयं
निसर्गतोऽन्तर्मलिना ह्यसाधवः।

अर्थात् स्वभावसे ही जिनका अन्तःकरण मलिन हो रहा है, ऐसे असच्चरित लोग दूसरेका अभ्युदय सहन नहीं कर सकते। मालवेके सूबेदार और इलाहाबादके नवाब मुहम्मदखाँ बंगस समय समय पर छत्रसालको तङ्ग किया करते थे। परन्तु ये भी बड़े पराक्रमी और शूर वीर थे। एक समय मालवाके सूबेदारने इनको कुछ कर देनेको लिखा और यह भी कहला भेजा कि यदि तुम कर देना स्वीकार न करोगे तो हमको तुमसे महा भयङ्कर संग्राम करना पड़ेगा। इसका उत्तर भी छत्रसालने बहुत ही उत्तम दिया, जिसका वर्णन एक कवि ने इस प्रकार किया है—

देवागढ़ देश नहीं, दक्खिन नरेश नहीं,
चाँदा बाद नाहीं जहाँ घने महल पाइ हो।

सौदागर सान नाहीं, देवनको थान नाहीं,
जहाँ तुम पाहुने लै बहुतक उठि धाइ हो।
मैं तों सुत चम्पतिको, युद्ध बिच लेहौं हाथ,
यही जिय जानि उलटी चौथि दे पठाइयो।
लिखके परवाना महाराज छत्रसालजूने,
औरनके धोखे यहाँ कबहूँ न आइयो॥

इस प्रकारके कटु और धृष्टताके वाक्य सुन कर मालवेके सूबेदारने क्रोध-वश होकर युद्धकी तैयारियाँ कर दीं। परन्तु अकेले छत्रसालसे लड़कर विजय-लाभ करना सहज नहीं है; यह सोच कर उसने अपनी सहायता के लिये मुहम्मदखाँ वंगसको बुलाया। उधर बादशाह से भी सहायताके लिए विनती की गई। मुहम्मदखाँका सारा सामान और बादशाहकी पूरी सहायता पाकर सूबेदार युद्धके लिए आ पहुँचा। इधर छत्रसालने भी महाराष्ट्र-देशके राजा श्रीमान् छत्रपति साहू महाराजके प्रधान मंत्री बाजीराव पेशवाको अपनी सहायताके लिये यह लिखा कि "आपके प्राचीन धर्म—गौ-ब्राह्मणोंकी रक्षा—के निमित्त ही मैंने यह युद्ध अपने ऊपर लिया है। उधर बादशाहकी पूर्ण सहायता, इधर मैं अकेला—केवल धर्मके सहारे खड़ा हूँ। यदि इस समय आप मेरी सहायता न करगे तो आपके सनातन वैदिक धर्मकी रक्षा होना कठिन है"। यह भी किंवदन्ती प्रसिद्ध है कि छत्रसालने नीचे लिखा हुआ दोहा बाजीरावके पास भेजा था।

जो गति ग्राह गजेन्द्रकी, सो गति भई है आज।
बाजी जात बुन्देलकी, राखो बाजी लाज॥

इसके उत्तरमें बाजीरावने लिखा कि हम पूर्ण-रूपसे आपकी धर्मरक्षाके निमित्त सहायता करेंगे। आप तो स्वयं वीर हैं। आप अकेले ही दिल्लीकी बादशाहतको तहस नहस कर सकते हैं। पत्रके

साथ एक दोहा भी उत्तरमें भेजा हुआ लोग बतलाते हैं। वह दोहा यह है—

वे होंगे छत्तापता, तुम होंगे छतसाल।
वे दिल्लीकी ढाल तू,-दिल्ली ढाहनवाल॥

बाजीरावने महाराज छत्रपति साहूजीसे अनुमति लेकर अपनी सारी फ़ौज साथ ली और बुन्देलखण्डकी ओर पयान किया। अनुमान २१-२२ दिनोंमें वे बुन्देलखण्ड जा पहुँचे। कई दिनों तक लड़ाई करनेके बाद शाही फ़ौज और मुहम्मदख़ाँ बंगसने जब देखा कि मरहठोंसे मुक़ाबिला करना मानों जान-बूझ कर कालके गालमें जाना है तब उन्होंने सोच-विचार कर सुलह कर ली। सुलह हो जाने पर छत्रसाल ने बाजीरावसे पन्नामें भेंट की। छत्रसाल ने बड़े भक्तिभावके साथ उनका स्वागत किया।

बुन्देल प्रभु छत्रसालने अपने राज्यका कुछ भाग बाजीरावको नज़र किया। इतना देने पर भी दानी छत्रसालको सन्तोष न हुआ। उसने मरते समय अपने राज्यके तीन भाग किये और बाजीरावको पुत्रके जैसा मान कर एक करोड़ आयका एक भाग उन्हें जागीरमें दे दिया †। बाजीरावने इस भागके तीन हिस्से करके तीन सूबेदार नियत किये। पहले भाग पर गोविन्दपन्त बुन्देले‡ को नियत किया; और सागर, गुलसराय और जालौन इत्यादि ४०

† छत्रसालके दो पुत्र थे—जगतराजदेव और हरदेव। इसी कारण उसने अपने राज्यके तीन भाग किये और उसमेंसे एक बाजीरावको दिया।

‡ गोविन्दपन्त बुन्देले पानीपतकी लड़ाईमें नजीबखां रुहेलेके हाथसे मारे गये। इनके दो पुत्र थे, जिन्होंने कुछ दिनों तक कालपीमें राज्य किया। इनके वंशज अब तक गुलसराय (संयुक्तप्रांत, ज़िला झाँसी) में विद्यमान हैं। उनको अँगरेज़ सरकारने अनुमान ३ लाखका इलाक़ा खानेके लिये छोड़ रक्खा है।

लाखका इलाका उनके अधिकार में दिया। दूसरा भाग बाँदा और कालपी प्रान्त-४० लाख का-शमशेरबहादुर† के सिपुर्द हुआ। बाकी २० लाख रुपयेका झाँसी-प्रान्त नारोशंकर मोतीवाले ‡ के अधीन हुआ। इस प्रकार तीन सूबेदार नियत करके बाजीराव दक्षिण को चले गये।

सन् १७५६ ईस्वीमें झाँसीके पूर्वाधिकारी गुसाइयोंने राजविद्रोह कर सूबेदार को अपने अधीन कर लिया। जब यह बात

---

† बाजीरावके पास एक यवन-वेश्या थी। उसका नाम मस्तानी था। उससे बाजीरावका एक पुत्र हुआ, जिसका नाम शमशेरबहादुर रक्खा गया। बाँदा और कालपीका इलाका इसी शमशेरबहादुरके अधीन किया गया था। वह सन् १८१६ तक बराबर इसीके वंशजोंके अधीन रहा। सन् १८१७ ईस्वीमें बाँदाका राज्य अँगरेज़ सरकारने अपने राज्यमें मिला लिया और उसके बदलेमें ४ लाख सालाना पेंशन नियत कर दी। शमशेर-बहादुरके वंशज अब तक इंदौरमें मौजूद हैं, जिन्हें १३ हज़ार सलाना पेंशन सरकारसे मिलती है।

‡ पेशवाईके समयके इतिहासको बहुत कुछ पढ़ने पर भी यह स्पष्ट प्रकट नहीं होता कि झाँसीकी सूबेदारी पर पहले पहल कौन नियत हुआ। हाँ, इस बातका पता लगता है कि पहले गङ्गाधरपन्त झाँसीके सूबेदार नियत हुए, पश्चात् गोविंदपंत बुन्देले। उनके बाद सन् १७४२ ईस्वीमें नारोशंकर सूबेदार नियत होकर आये। सन् १७५७ में पेशवाने नारो-शंकरको वापस बुला कर महदाजी गोविन्दको भेजा। उन्होंने रुहेलखंडको भी अपने अधिकारमें कर लिया। वे वहाँ केवल दो वर्ष तक रहे। उनके पश्चात् रघुनाथ हरी नेवालकर सूबेदार होकर आये। सन् १८५७ ईस्वी तक इन्हींके वंशधर झाँसीमें राज्य करते रहे। पहले कुछ दिनों तक इनके

पेशवाको मालूम हुई तब उन्होंने रघुनाथहरी नेवालकर नामक एक बुद्धिमान और बहादुर पुरुष को झाँसीका सूबेदार नियत करके दक्षिण से बुन्देलखंड को भेजा। रघुनाथ हरीने झाँसी में आकर गुसाइयोंका मानमर्दन किया। पेशवावोंका राज्य झाँसीमें फिरसे उत्तमता-पूर्वक स्थापित हुआ। जब यह समाचार पेशवाको

वंशके लोग पेशवाओं के कुछ-कुछ अधीन रहे; परन्तु कुछ दिनोंके बाद वे बिलकुल स्वाधीन राजा हो गये।

ग्यारहवे पृष्ठ की तीसरी पंक्ति में नारोशंकर मोती वाले का ज़िकर आया है, उनके विषय में फ़ोरस्ट साहब ने गवर्नमेंट सेलेक्शन्स में लिखा है:—

"In the reign of Shahu Raja of Satara, the first of the family [Raja Bahadar family] whose name was Naro Shankar Dani (of the sect of Rigvedi Brahman) was nominated by Nana Saheb Peishwa to collect the revenues of Jhansi in Hidustan. He held the office for fourteen years without contributing one rupee to Government, and eventually assumed a Nowbut as a military leader, for which reasons he was re-called to Poona. And, on his entry, he not only caused his Nowbut to be beaten throughout the city, but came directly to the Peishwa's Palace where he claimed apartments. Having sufficient address to satisfy the Peishwa of his conduct, he was henceforward treated as one of the great military chiefs of the empire and known by the name of Motiwala, from an enormous pearl which he wore."

पूनेमें विदित हुआ तब उन्होंने प्रसन्न होकर झाँसीकी सूबेदारी रघुनाथहरीको वंश-परम्पराके लिए दे दी। गुसाईंके शरण आने पर रघुनाथ हरीने उसे १० हज़ारकी जागीर वंश-परम्पराके लिए दी; यह जागीर अब तक उसके वंशजोंमें क़ायम है। रघुनाथ हरीने झाँसीके स्थायी सूबेदार होने पर बुन्देलोंसे राज्य-रक्षणार्थ बहुतसी सेना भी एकत्रित की। जिन गुसाइयोंने पहले गदर मचाया था उनके चार मठ—आनंत, आभात, आखात और आखात और नागा—थे; इसमें से हर एकमें एक-एक हज़ार आदमी रहते थे और हर एक आदमीको भोजनके लिए चार-चार रुपये मासिक मिलते थे। उन लोगोंसे काम केवल इतना ही लिया जाता था कि जब कभी लड़ाई की ज़रूरत पड़े तब वे गुँसाइयोंकी सहायता करें। रघुनाथ हरीने अपने बुद्धि-बल और कौशलसे इन सबको तितर-बितर करके सारा स्थान झाँसी प्रांतमें मिला लिया। बुन्देलखंडमें महाराष्ट्रीयोंको राज्य-मर्यादा बढ़ाने में, रघुनाथ हरीके भाई लक्ष्मणराव और शिवराम भाऊ ने बड़ी सहायता की। यही रघुनाथ हरी हमारी चरित-नायिका श्रीमती लक्ष्मीबाईके भर्तृ-वंशके मूल पुरुष हैं। इन्हींने बुंदेलखंडमें महाराष्ट्रीयोंकी विजय-ध्वजा स्थापित करके यह सिद्ध कर दिया कि मरहठोंमें कितना धर्माभिमान और तेजस्विता है।

रघुनाथ हरीने जब अपना बल और पराक्रम वृद्धावस्थाके कारण कम होते देखा तब उन्होंने अपने भाई शिवराम भाऊको झाँसी की सूबेदारी दे दी, और वे आप काशीजी जाकर ईश्वर चिंतन में निमग्न हुए। वे वहाँ १७९६ ईस्वीमें स्वर्गधाम पधारे। उस समय पूनामें पेशवाकी गद्दी पर द्वितीय बाजीराव विराजमान थे। उनके शासन कालमें सम्पूर्ण महाराष्ट्र देशमें अव्यवस्था और अंधेर हो रहा था। सब मरहठे सरदार स्वतंत्र होनेका उद्योग कर रहे थे।

इस परिस्थितिसे अँगरेजोंने भी अपना कुछ लाभ कर लेनेका उद्योग आरंभ किया। लेक साहबने झाँसीके सूबेदार शिवराव भाऊ और बृटिश सरकारमे एक नूतन सन्धि स्थापित की। तारीख ६ फरवरी सन् १८०४ को जो संधि-पत्र हुआ उसमे यह लिखा है कि शिवराव भाऊ और ब्रिटिश सरकार मित्र हैं। संकट समयमे उन्हे परस्पर सहायता करनी चाहिए। इनकी मित्रता को देख बुँदेलखंड के अन्यान्य राजा लोग भी ब्रिटिश सरकारके आश्रयमें रहनेकी इच्छा प्रकट करने लगे। यथार्थमे इन्हींके समयमे ब्रिटिश राज्य की जड़ बुन्द ‌ मजबूत हुई।

शिवराव भाऊके तीन पुत्र—कृष्णराव, रघुनाथराव, गंगाधर राव—थे। इनके पश्चात् कृष्णरावके पुत्र रामचन्द्रराव झाँसीकी सूबेदारी पर नियत हुए। रामचन्द्ररावके बालक होनेके कारण उनकी माता सखूबाई और झाँसी के पुराने राजमंत्री गोपालराव राज्यका काम चलाते थे। सखूबाई बड़ी क्रूर स्वभावकी स्त्री थी। रामचन्द्रराव जब राज्यका कार्य स्वयं देखनेके योग्य हुए तब उन्होंने सब काम स्वतन्त्र-रूपसे अपने हाथमे ले लिया। यह काम उनकी माताके मन न भाया। अपने हाथसे राज्याधिकारका चला जाना और पुत्रका स्वतन्त्र होना उन्हें सहन न हुआ। वे अपने पुत्रको नष्ट करने और राज्यका काम अपने आप चलानेके लिए नाना प्रकारके उपाय सोचने लगीं। वे उपाय सोच कर ही शांत न हुई, किन्तु उसकी सिद्धिके लिये यथासाध्य उद्योग भी करने लगीं। रामचन्द्ररावको जलमे तैरनेका बहुत शौक था। वे कभी-कभी लक्ष्मीताल पर इसी अभिप्रायसे जाया करते थे। उनकी मातासे जब कोई उपाय न बन पड़ा तब उन्होने लक्ष्मीतालमें गुप्त रीतिसे भाले गड़वा दिये। हा! राज्यलोभ कितनाभयङ्कर है!! हा

अनर्थकारी लोभ ! तू पुत्र-बध करनेके लिये भी तत्पर होगया !! संसारमें माताके लिये पुत्रसे बढ़कर और कोई सुख नहीं। फिर भी पुत्र कैसा ? राज्यधिकारी ! परन्तु लोभने उसे ऐसा घेर लिया कि वह अपने राज्याधिकारी पुत्रहीका बध करने लगी। हाय ! यह अनर्थ ! इस प्रकारकी कई एक कालिमायें स्वच्छ और पवित्र इतिहासमें देखनेमें आती हैं। पेशवा के घरानेमें भी आनन्दीबाईने अपने भतीजेका बध, राज्य-लोभ वश करवाकर अपना दुर्नाम महाराष्ट्र-इतिहासमें अजरामर कर लिया है। इसी प्रकार सखूबाई ने प्रत्यक्ष अपने पुत्रका इस नीच रीतिसे बध करनेका प्रयत्न करके अपन दुर्नाम झाँसीके इतिहासमें प्रसिद्ध किया ! परन्तु इस कहावतके अनुसार कि 'जाको राखे साइयाँ, मारि न सकिहैं कोय' रामचन्द्रराव भाग्यवश बच गये। लालू कोदलकर नामक एक स्वामिभक्त सेवक ने यह पाप जानकर रामचन्द्ररावको पूरा-पूरा भेद बतला दिया। रामचन्द्ररावने इस उपकार के बदले उसे बहुत कुछ पुरस्कार दिया। परन्तु जब सखूबाईको मालूम हुआ कि पापका भंडा फूट गया तब उसने क्रोधित होकर उस स्वामि-भक्त सेवकको धोखेसे मरवा डाला ! रामचन्द्रराव बहुत ही सरल स्वभावके पुरुष थे। माताके इस अन्यायको देखकर उन्होंने कुछ भी नहीं कहा; परन्तु झाँसी दरबारके राज-मन्त्रियोंसे यह दुष्कर्म देख कर रहा न गया। उन्होंने सखूबाईको इस नीच कर्मके बदले जन्म भर के लिये क़ैद कर दिया। क्या यह आश्चर्यकी बात नहीं है कि जिस घराने में लक्ष्मीबाईके समान वीर स्त्री उत्पन्न हो, उसी घरानेमें सखूबाई जैसी स्वपुत्र-हत्या करनेवाली पाषाण-हृदय स्त्री भी उत्पन्न हो ? परन्तु आश्चर्य क्या, गुलाबके पेड़ से सुगन्धित पुष्प और कांटे दोनों ही उत्पन्न होते हैं। यही तो इस संसारकी विचित्र गति है !

जिस समय रामचन्द्ररावकी अल्पावस्थाके कारण उनकी माता सखूबाई और राजमन्त्री गोपालरावके हाथमें झाँसीके राज्यसूत्र थे उस समय पूनाके दरबारमें द्वितीय बाजीरावके भ्रष्ट और अनीत-पूर्ण व्यवहारसे बहुत ही गड़बड़ हो गई थी। पेशवाईका सब अधिकार धीरे-धीरे अङ्गरेज़ोंके हाथमें चला जा रहा था। तारीख़ १३ जून सन् १८७१ ई० को पेशवा (द्वितीय बाजीराव) ने अङ्ग-रेज़ोंसे संधि की। उसके द्वारा बुन्देलखंडका सब अधिकार अङ्ग-रेज़ोंको सौंप दिया गया। इस नूतन प्राप्त अधिकारको स्थापित करनेके हेतु अङ्गरेज़ोंने झाँसीके सूबेदार बालक रामचन्द्ररावके साथ नूतन संधि की। रामचन्द्ररावकी ओरसे उनके मंत्री गोपाल-राव और अङ्गरेज़ोंकी ओरसे जान वाहुचप ने १७ नवंबर सन् १८१७ ई० को सीपरीकी छावनीमें संधि-पत्र लिखा। यह संधिपत्र अत्यन्त महत्वका है। उसके अनुसार ब्रिटिश-सरकारने झाँसी का राज्य रामचन्द्रराव को वंश-परम्पराके लिये अपनी ओरसे दिया।

सन् १८३५ ईस्वीमें रामचन्द्ररावकी मृत्युके पश्चात् उनकी कोई ख़ास सन्तति न होनेके कारण, कृष्णराव नामक एक लड़का गोद लिया गया। परन्तु वह दत्तक शास्त्रानुकूल न समझा जाकर शिवराव भाऊके दूसरे पुत्र रघुनाथरावको झाँसीके पोलिटिकल एजंट बेग्बी साहबकी अनुमतिसे, झाँसी दरबारने गद्दी पर बिठाया। रघुनाथराव दुर्व्यसनी और अत्याचारी थे। उनके समयमें राज्यकी आमदनी घट गई और प्रजाको बहुत दुःख भोगना पड़ा। यह देख अँगरेज़ सरकारने सन् १८३७ में झाँसी-राज्यकी व्यवस्था अपने हाथमें ली। सन् १८३८ ईस्वीमें रघुनाथरावका देहान्त हो गया। उनके मरने पर गद्दीके ये चार अधिकारी पाये गये—१ गंगाधर, २ रामचन्द्रका दत्तक पुत्र कृष्णराव, ३ राघुनाथरावका दासी-पुत्र

अलीबहादुर* और ४ रघुनाथरावकी स्त्री। इसका निश्चय करनेके लिए झाँसीकी गद्दी पर कौन बिठाया जाय, ब्रिटिश सरकार ने एक कमीशन नियत किया, जिसमें ग्वालियरके रेज़िडेंट लेफ्टिनेंट स्पेअर्स, सायमन फ्रेजर और कैप्टन डी० रास ये तीन मेम्बर थे। इस कमीशनने सरलता-पूर्वक यह निश्चय किया कि शिवराव भाऊके पुत्र गंगाधररावके अतिरिक्त और कोई दूसरा निकट-सम्बन्धी मनुष्य वारिस नहीं हो सकता। कमीशन के निश्चित कर देनेपर गंगाधरराव गद्दी पर बिठाये गये। यही गंगाधरराव हमारी चरित्र-नायिका लक्ष्मीबाईके पति हैं।

---

* रघुनाथरावके पास गजरा नामक एक स्त्री रहती थी, जिसके पेटसे दो पुत्र—अलीबहादुर और शमशेरबहादुर—पैदा हुए। गजराके मरने पर उसकी क़ब्र क़िलेके ऊपर ही बनाई गई; जो वहाँ अब तक मौजूद है। वहाँ प्रत्येक बृहस्पतिवारको मेला होता है। उसके खर्चके लिए १५०० का एक गाँव इनाममें दिया हुआ अब तक ज्यों-का-त्यों चला जाता है। इन दोनों लड़कोंको जो छः-छः हज़ार रुपयेकी जागीर दी गई थी, वह भी उनके वंशजोंके अधीन बनी हुई है।

दूसरा अध्याय

महाराजा गंगाधररावका शासन-समय ।

महाराजा गंगाधररावका विवाह हो जानेके बाद जब झाँसी राज्य पर पहलेका चढ़ा हुआ सब ऋण चुक गया तब उन्हें झाँसीका पूर्ण राज्याधिकार प्राप्त हुआ । इसकी सूचना बुन्देलखंडके पोलिटिकल एजेंट कर्नल स्लीमन साहबने ब्रिटिश-सरकारको दी । सरकारने महाराज गंगाधररावसे, राज्याधिकार देते समय यह शर्त कर ली कि बुन्देले लोगोंके उपद्रवसे राज्यकी रक्षा करनेके लिए झाँसी दरबारको अपने ख़र्चसे कुछ अँगरेज़ी फ़ौज रखना पड़ेगा। वृटिश-सरकारका अधिक आग्रह देखकर गंगाधररावने २,२७,४५८ रुपयेका प्रान्त सरकारको फ़ौज रखनेके लिये अलग निकाल दिया, और उन्होंने दो पलटनें और दो तोपख़ाने अपने स्वाधीन रख लिये । जब ये सब बातें सरकारने स्वीकार कर लीं तब उनके राज्याधिकार-प्राप्तिका उत्सव मनाया गया । पोलिटिकल एजेंटने राज्यके ख़जानेमें बचे हुए ३० लाख रुपये नक़द गंगाधररावके स्वाधीन किये और उनको सन्मान-पूर्वक खिलअत और पोशाक समर्पण की । इसी प्रकार बहुतसे सरदारों और जागीरदारोंने भी आनन्द-सूचनार्थ अनेक बहुमूल्य पदार्थ महाराजको भेंटमें अर्पण किये । झाँसीकी प्रजाने भी अपने-अपने घरोंमें उत्सव मनाया । इससे यह विदित होता है कि गंगाधरराव झाँसी-प्रान्तकी प्रजाको बहुत प्रिय थे ।

महाराजने राज्याधिकार पानेपर ऐसे अनेक काम किये, जिनसे प्रजाको सुख प्राप्त हुआ। पहले,पहल उन्होंने राज्य-व्यवस्थापक-सभाका प्रबन्ध किया। उसमें कार्य-दक्ष, चतुर और प्रामाणिक पुरुषोंको अच्छी-अच्छी जगह दी। राघव रामचन्द्र सन्त नामक एक बुद्धिमान् पुरुष राजमंत्रीके पदपर नियत किये गये। दरबारके वकीलका काम नरसिंहरावको सौंपा गया। अदालतके काम पर नाना भोपटकर नियत किये गये। इसी प्रकार हर एक छोटे-बड़े काम पर अच्छे-अच्छे आदमी चुन-चुन कर उन्होंने नियत किये। जिन-जिन स्थानों पर ठाकुर और बुन्देलोंने उपद्रव मचा रक्खा था वहाँ-वहाँ थोड़ी-थोड़ी फ़ौज भेज कर उन्होंने उसका यथोचित प्रबंध किया। इस प्रकार कार्य करनेसे झाँसी प्रांतमें चारो ओर शांति-ही-शांति दिखाई देने लगी। इस उत्तम प्रबंधसे झाँसी की प्रजा बहुत सुखी और सन्तुष्ट हुई।

महाराजा गंगाधरराव बड़े वैभवशाली पुरुष थे। उन्हें अपने राज्यको वैभव-सम्पन्न करने का बहुत बड़ा उत्साह था। वे अपने राज्यके पूर्वकी धन-सम्पत्ति और पूर्वजोंके-सा राजसी ठाठ बढ़ानेके लिए बहुत कुछ प्रयत्न किया करते थे। तृतीय रघुनाथ रावके समयमें जो अन्यायसे काम हुआ था और जिसके कारण झाँसीका अधिकांश वैभव नष्ट हो गया था, उसे पुनः अच्छी दशामें लानेके लिए उन्होंने अपने शासन-समयमें बहुत कुछ प्रयत्न किया इस समय झाँसीमें महारानी लक्ष्मीबाईका आना मानो राजलक्ष्मी हीका पुनः प्रवेश करना था। राज्य-कोषकी दशा सुधर जाने पर रत्न भांडारमें पहलेके जैसे राज्यलक्ष्मीके चिह्न देख पड़ने लगे। महाराजको हाथी-घोड़े रखनेका बड़ा शौक था; इसी कारण बहुतसे हाथी-घोड़े इकट्ठे किये गये। उनमें सिद्धबकस नामका एक बहुत ही उत्तम और सुन्दर हाथी था। वह महाराजकी निजकी सवारीके काममें आता

था। उसका सारा सामान सोनेका बनवाया गया था। राज्य-वैभव दिखानेके लिए हाथी-घोड़ेका का सब सामान अम्बारी, हौदा, जीन आदि सोनेका तैयार कराया गया। काशीजीसे एक बहुत उत्तम तामझाम (मियाना), जिसपर नक़्क़ाशीका काम बड़ी कुशलतापूर्वक किया गया था, मँगवाया गया। इस प्रकार उन्होंने राजसी ठाठ इकट्ठा करने का यथासाध्य उद्योग किया। स्वयं झाँसी राज्य और ठाकुर लोगोंकी सब मिलाकर ५००० के क़रीब फ़ौज थी। २००० गोल पुलिस, ५०० घोड़ोंका रिसाला १०० खास पायगाके सिपाही और ४ तोपखाने थे। इस व्यवस्थासे गंगाधररावके शासन-समयकी उत्तमता और उनके दीर्घ प्रयत्नका फल स्पष्ट व्यक्त होता है।

गंगाधररावका स्वभाव जितना नम्र था, उनकी आज्ञामें उतनी ही सख़्ती भी थी। उनका यह एक साधारण नियम था कि राज्य-संबंधी व्यवस्थामें जो-जो कार्य जिस-जिस मनुष्यको सौंप दिये गये थे वे कार्य उसके द्वारा नियत समय पर अवश्य हो जाने चाहिए। किसी काम में नियत समय से अधिक विलम्ब होने पर स्वयं उसका विचार करते थे। ओरछा, दतिया, समथर, चरखारी, पन्ना छत्रपुर इत्यादि स्थानोंके बुन्देले राजा उनको "काका साहब" नाम से सम्बोधन करके मान देते थे। सारांश यह कि गंगाधरराव बड़े चतुर, दयालु, कार्य-दक्ष और राजनीति-निपुण थे। इसीलिए उस समयके अंगरेज़-अधिकारी उनका बहुत सम्मान करते थे। उन्होंने अपने शासन समयमें ब्रिटिश-गवर्नमेंट तथा झाँसी-राज्यकी वंश-परम्परागत मित्रताको बहुत दृढ़ कर दिया था।

राज्यको व्यवस्था पूर्णरूपसे होजाने पर महाराजा गंगाधररावकी इच्छा तीर्थयात्रा करनेकी हुई। इसके प्रबन्धके लिए गवर्नर-जनरलको लिखा गया। अँगरेज-सरकारने उनकी यात्रा का पूरा

प्रबन्ध कर दिया । तब वे माघ सुदी सप्तमी सम्वत् १९०७ (सन् १८५० ई०) को सकुटुम्ब काशीजीकी ओर रवाना हुए । जगह-जगह पर सरकार ने उनके सम्मानका यथोचित प्रबन्ध पहले ही करवा रक्खा था । महाराजका स्वभाव इतना तेजस्वी था कि यदि यत्किंचित भी उनका अपमान होता तो वे उसे सहन नहीं कर सकते थे । काशी पहुँचने पर वहाँके एक अधिकारी ने उनको न पहचान कर उनका यथोचित मान नहीं किया; परन्तु पीछेसे जब उसे मालूम हुआ कि ये झाँसीके महाराजा गंगाधरराव हैं, तब उसने उनसे क्षमा करनेके लिये प्रार्थना की । इसी प्रकार राजेन्द्र बाबू नामक किसी एक महाशयने उनको खड़ी ताज़ीम नहीं दी, इसीसे महाराजाने अपना अनादर जान राजेन्द्र बाबूको दंड दिया । इस पर बाबू साहब ने अँगरेज़-सरकारसे निवेदन किया । वहाँसे उनको यह उत्तर मिला कि गंगाधारराव बहुत बड़े राजा हैं; यदि तुमको उन्हें खड़ी ताज़ीम देना स्वीकार न था तो तुम अपने घरमें बैठे रहते । अस्तु ।

इसी यात्रा में महाराजने प्रयाग, गया इत्यादि अन्य तीर्थोंकी की भी यात्रा की और अपने अनुकूल बहुत कुछ दान-धर्म किया । महारानी लक्ष्मीबाईने काशी जाकर अपनी जन्मभूमि के दर्शन किये । तीर्थ-यात्रा से लौट आने पर शहरमें बहुत बड़ा आनंदोत्सव मनाया गया । इसी वर्ष ईश्वरकी अपारकृपा से अगहन सुदी ११ संवत् १९०८ सन् १८५१ ई० को महारानी लक्ष्मीबाईके गर्भसे पुत्र उत्पन्न हुआ । इस कारण सारे शहर और राज्यमें आनन्द मनाया गया । महाराजा गंगाधररावने पुत्र-जन्मके आनंदमें बहुत बड़ा जलसा किया । परंतु यही आनंद तीन मासके अनन्तर दुःखमें बदल गया; अर्थात् वह बालक कालका कलेवर हुआ ! संसारमें पुत्र-वियोगसे बढ़कर और कौन दुःख हो

सकता है ? कहावत भी प्रसिद्ध है कि "लड़का पैदा होनेसे सौ वर्षकी नींव गड़ जाती है और मरनेसे सौ वर्षकी नींव उखड़ जाती है।"

पुत्र-वियोगके कारण महाराजके मनको बहुत बड़ा धक्का लगा। इससे उनका स्वास्थ्य नित्य प्रति बिगड़ता गया। जब सन् १८५२ ई० में उनका स्वास्थ्य अधिक बिगड़ता हुआ दिखाई दिया तब औषधोपचार आरम्भ हुआ। उससे किसी क़दर स्वास्थ्यमें अंतर पड़ा; परन्तु कमज़ोरी ज्यों-की-त्यों बनी रही। अक्टूबर सन् १८५३ ई० में झाँसीमें महालक्ष्मीके शारदीय नवरात्रका बहुत बड़ा उत्सव था। उस समय महाराजने सदैवकी तरह अपनी कुल-स्वामिनी देवी महालक्ष्मीकी भक्ति व्यक्त करनेके लिए जो थोड़ासा परिश्रम किया उससे उनका स्वास्थ्य और भी अधिक खराब हो गया। विजया-दशमीके दिन बहुत बड़ा दरबार किया गया। उस समय झाँसीकी प्रजाको अपने राम-राज्यके सुखका अनुभव लेते हुए और मनमें आनंदित होते हुए इस बातका स्मरण हुआ कि महाराजा गंगाधररावने अपनी प्रजाको सुखी रखनेके लिए कितना कष्ट सहा है। सारी प्रजाने ईश्वरसे यही प्रार्थना की कि महाराज चिरायु हों; परन्तु ईश्वरकी इच्छाके सामने जीव-मात्रकी इच्छा कोई चीज़ नहीं। कर्मानुसार जैसा होना है, ईश्वर यथार्थमें वैसा ही करता है। विजया-दशमीके बाद महाराज संग्रहणी-रोगसे पीड़ित हुए; और इसके बाद दिन-प्रति-दिन उनका स्वास्थ्य बिगड़ता ही गया। झाँसीके नामी-नामी वैद्य और हकीमोंको अपना चातुर्य दिखानेके लिए अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने पृथक्-पृथक् और मिल-जुल कर अपनी-अपनी योग्यतानुसार बहुत-कुछ प्रयत्न किया; परन्तु सारा परिश्रम निष्फल गया! झाँसीके असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट मेजर मालकम साहबको महाराजका सारा हाल लिखकर

भेजा गया। उन्होंने भी महाराजकी स्वास्थ्य-रक्षाके लिए स्वयं प्रबंध किया।

इस देशमें जब कोई काम पुरुषार्थ द्वारा होते नहीं दिखाई पड़ता तब उसके लिए देवी-देवताओंकी आराधनाकी जाती है। झाँसी-दरबारने भी महालक्ष्मीकी पूजा, होम, जप, तप, अनुष्ठान आदिका कार्य आरम्भ कर दिया। जब महारानी लक्ष्मीबाईको महाराजा गंगाधररावका स्वास्थ्य अधिकाधिक बिगड़ता हुआ दिखाई देने लगा तब वे बहुत व्याकुल हुई। उनकी भूख-प्यास सब जाती रही। चिन्ताकी ज्वालासे उनका सारा शरीर दग्ध होने लगा। सच है, स्त्रीके लिए पति-प्रेम एक अलौकिक वस्तु है; क्योंकि हमारे यहाँ स्त्रियाँ अपने पतिको देव-तुल्य मानती हैं। झाँसी दरबार को भी इनकी दशा देखकर चिन्तामग्न होना पड़ा। नवम्बर मास के दो सप्ताह ज्यों-त्यों करके निकल गये। तीसरे सप्ताह का आरम्भ होते ही सारे चिह्न विपरीत दिखाई पड़ने लगे। यह देखकर सब लोगोंका चित्त और भीअधिक व्याकुल हुआ। तब झाँसी-दरबारके राजमंत्री नरसिंहराव और महारानी लक्ष्मीबाईके पिता मोरोपन्त महाराजके समीप गये और उन्होंने राज्य-व्यवस्था विषयक कुछ बातें छेड़ी। उसको सुनकर महाराजने कहा—"यद्यपि मुझे अभी तक अपने जीनेकी आशा है तथापि धर्मानुसार मुझे दत्तक-पुत्र लेनेकी बड़ी इच्छा है। हमारे घरानेमें वासुदेव नेवालकरका आनंदराव नामका एक पुत्र है, उसको दत्तक लेना चाहिए"। आनन्दरावकी उमर उस समय अनुमान ५ वर्षके थी। वह देखने में खूबसूरत और बुद्धिमान् था। इसलिए महारानी लक्ष्मीबाई और स्वयं महाराजने उसको गोद लेनेका निश्चय किया। झाँसीके विद्वान् पण्डित विनायकरावने धर्मानुसार दत्तक-विधान करवाया। झाँसी-दरबारसे राज-मंत्री नरसिंहराव, मोरोपंत

तांबे, लाहोरीमल आदि सब लोगोंने बड़े समारोहके साथ व्यवस्था की। उस समय झाँसीके मुख्य-मुख्य धनाड्य पुरुष निमंत्रित होकर आये थे। बुन्देलखंडके असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट मेजर एलिस और स्थानीय सेनाधिकारी कप्तान मार्टिन भी वहाँ उपस्थित थे। इन सब लोगोंके सामने दत्तक-विधान होकर आनन्दरावका नाम दामोदरराव-गंगाधरराव रक्खा गया। महाराजने आनन्द-पूर्वक स्वयं दमोदररावका, राज्य-प्रणाली के अनुसार, सत्कार किया। निमंत्रित मान्य पुरुषोंका रीत्यनुसार, इत्र-पान आभूषणादिसे यथायोग्य सत्कार किया गया।

जब उसका कार्य समाप्त हो गया तब महाराजने दरबारके राज-मंत्री नरसिंहराव और अपने स्वसुर मोरोपंतको अपने समीप बुलाकर एक खलीता लिखवाया। उस समय महाराजके पास झाँसीके असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट भी बैठे हुए थे। खलीता लिख जाने पर महाराजने उसको स्वयं अपने हाथसे एलिस साहब के हवाले किया। उसमें यह लिखा था—"ब्रिटिश सरकारका राज्याधिकार बुन्देलखंडमें स्थापित होनेसे पहले मेरे वंशजोंने किस प्रकार उनकी सहायता की, यह बात यूरोप भरमें प्रसिद्ध है। और मैं भी ब्रिटिश-सरकार की आज्ञा पालन करता आया हूँ। इसका हाल बहुतेरे पोलिटिकल एजेंट साहबोंको ज्ञात है। मैं आजकल रोग-ग्रस्त हूँ। मैं अब तक ब्रिटिश-सरकारके साथ अच्छा वर्ताव करता आया हूँ; और सरकारने भी सदैव मेरे ऊपर कृपा-दृष्टि रक्खी है। परन्तु अब मुझे खेद है कि मेरे पीछे मेरे घरानेके नष्ट होनेका समय आ गया है। ऐसा न हो, इस कारण ब्रिटिश-सरकारका ध्यान उस संधि पर, जो मेरे घरानेसे हुई है, दिलाता हूँ। मैंने उसी संधिके अनुसार आनन्दराव नामक एक पाँच वर्षके बालकको गोद लिया है। उसका नाम दामोदर-गंगाधरराव रक्खा

गया है। यह बालक मेरे ही वंशका है। वह मेरा नाती लगता है। मुझे यह आशा है कि ईश्वरकी कृपा और सरकारके अनुग्रहसे मैं इस बीमारीसे शीघ्र ही अच्छा हो जाऊँगा। मेरी अवस्थाके अनुसार मुझे संतति होना भी संभव है। यदि ऐसा हुआ तो फिर विचार किया जायगा। परन्तु यदि मेरा परलोकवास हो जाय तो जिस प्रकार मैं अब तक सरकारके साथ उत्तम बर्ताव करता आया हूँ उसकी ओर ध्यान देकर इस बालक पर भी सरकारकी कृपा-दृष्टि रहनी चाहिए। जब तक मेरी स्त्री जीवित रहे तब तक वही इस राज्यकी स्वामिनी और बालककी माता समझी जाकर राज्य-व्यवस्था उसीके आधीन रहे। उसे किसी प्रकारका दुःख न पहुँचे।"

इस खलीतेको एलिस साहबके हाथमें देते समय महाराजका अंतःकरण दुःखसे भर आया। उन्होंने मेजर साहबसे अपनी इच्छा पूरी करनेके लिए बार-बार बिनती की। मेजर साहबने भी अति विनीतभाव से उत्तर दिया कि—"महाराज, आपका खलीता ब्रिटिश सरकारके पास भेजकर जो कुछ मेरे करनेसे होगा उसके लिये मैं अवश्य प्रयत्न करूँगा"। इतनी देर तक बातें करते रहनेसे कमजोरीके कारण महाराज बे-होश हो गये। यह देख मेजर साहब और कप्तान मार्टिन साहब उनको दवाई देकर अपने बंगले पर चले गये। महारानी लक्ष्मीबाई महाराजके समीप परदेमें बैठी हुई थीं। साहब लोगोंके चले जाने पर। वे महाराजके समीप आईं। उस समय उनकी जो दशा हुई वह लेखनी द्वारा व्यक्त करना कठिन है। मेजर एलिस साहबने अपने बंगले पर जाकर बुँदेलखंडके पोलिटिकल एजेंट मेजर मालकम साहबको इस प्रकार वृत्तांत लिखा कि "आज सबेरे महाराज के बुलाने पर मैं राजभवनमें गया था। वहाँ मेरी और कप्तान मार्टिन साहबकी महाराजसे भेंट हुई। महाराजकी दशा बहुत खराब है। इस पत्रके साथ भेजा हुआ खलीता

मुझे सुनाया गया था। उसके पढ़े जानेके बाद महाराज बे-होश हो गये और मैं वहाँ से बँगले पर वापस चला आया।"

एलिस साहबके चले जाने पर महाराजको औषधोपचारसे कुछ आराम हुआ। उनको थोड़ीसी निद्रा भी आगई। परन्तु महारानी लक्ष्मीबाईका मुख उदास और पीला पड़ गया था। उनका मन अत्यंत व्याकुल हो रहा था। जब दो पहरके चार बजे (ता० २० नवम्बरको) महाराजकी नींद खुली तब महलके सामने हज़ारों आदमियोंकी भीड़ लग गई और सब लोग एक स्वरसे यही पूछने लगे कि महाराजका क्या हाल है ? मेजर एलिस साहब महाराजको मिलनेके लिए अपने बँगलेसे रवाना हुए, इतनेमें रेसिडेंसीके समीप ही एक सवारने जाकर साहबको यह विषम समाचार सुनाया कि "महाराजका हाल इस समय बहुत ही खराब है। उनको पल-पल पर बे-होशी आती है और उनका बोल भी बंद हो गया है। अब भेंट होनेकी कोई आशा नहीं है!" महाराजका बोल बंद हुआ देखकर लक्ष्मीबाईकी आँखोंसे अश्रुको धारा बहने लगी। उन्होंने एकदम बड़े दुःखके साथ चिल्लाकर अपनी कुल-स्वामिनी महालक्ष्मी देवीका नाम लेकर पुकारा और कहा कि "हे जगज्जननी, तू मेरा पहले ही गला काट डाल! मुझे यह दुःख देखनेके लिए जीवित मत रख!" इसप्रकारको चिल्लाहट सुन उनके पिता और कई एक पुरुष दौड़ आये। उन्होंने महारानीको समझा-बुझाकर शांत किया।

महाराजको बहुतसी बहु-मूल्य औषधियाँ दी गईं। इस उनकी बे-होशी कुछ कुछ दूर हुई और उन्होंने बहुत ही धीमे स्वरसे पूछा कि एजेंट साहब कहां हैं? इस बातको सुन तुरंत एलिस साहबके पास सवार भेजा गया। पहला सवार उनको ऊपर लिखा हुआ समाचार सुना ही रहा था कि इतनेमें दूसरा सवार भी उनके

पास जा पहुँचा। उसने कहा कि आपको महाराजा साहबने महल-में शीघ्र बुलाया है। एलिस साहबने अपने साथ डाक्टर एलनको लेकर राजभवनकी ओर पयान किया। उस समय महाराज जनान-ख़ानेके पासके एक कमरेमें लाये गये थे। एलिस साहबके पहुँचने पर महाराजको बहुत आनंद हुआ। वे प्रेम-पूर्वक उनसे बोलनेका प्रयत्न करने लगे; परंतु उनकी बे-होशीकी ओर ध्यान देकर साहबने उनको बोलनेका निषेध किया। डाक्टर साहबने रोगका पूर्ण-रूपसे निदानकर महाराजसे औषधि खानेके लिए आग्रह-पूर्वक निवेदन किया। परंतु महाराजने हिंदू-धर्मकी हानि समझ अँगरेज़ी औषधि खानेसे इन्कार किया। अन्तमें बहुत कुछ कहने-सुनने पर गङ्गाजल डालकर अँगरेज़ी औषधि खाना उन्होंने स्वीकार किया। डाक्टर एलन साहबने अपने बँगले पर जाकर तुरन्त बहु-मूल्य औषधि एक ब्राह्मणके हाथ राजमहलमें भेजदी। परन्तु महाराजके आत्माको इस प्रकार धर्म-भ्रष्ट होना स्वीकार न था, अतएव उन्होंने अँगरेज़ी औषधि पान करनेसे साफ़ इन्कार कर दिया।

महाराज गङ्गाधररावने अँगरेज़ी औषधि न खानेका हठ किया। वैद्य और हकीम तो जवाब दे ही चुके थे; अब डाक्टरकी औषधि न खाकर उससे भी निराश होना पड़ा। इस विषयमें सर एडविन अर्नोल्ड नामके एक अँगरेज़ ग्रन्थकारने इस प्रकार लिखा है—

"महाराजा गङ्गाधररावको पुत्र-लाभ होकर झाँसीमें हिंदू राजाओंकी गद्दी सदा बनी रहती; परंतु यद्यपि वे राजकीय विषयोंमें सुशील थे, तथापि प्राचीन धर्मावलंबी होनेके कारण उन्होंने अँगरेज़ डाक्टरकी औषधिको खाना स्वीकार नहीं किया।"

महाराजा गङ्गाधररावने मृत्युसे पहले एक और खलीता बुन्देल-खण्डके पोलिटिकल एजेंट मेजर मालकम साहबके पास भिजवा दिया था। इसमें भी वही बातें लिखी गई थीं जो एलिस साहबके

खलीतेमें थीं। इस खलीतेमें विशेष बात यह थी कि सन् १८१७ ई० में रामचन्द्ररावके साथ जो संधि हुई थी, उसके निम्नवाक्योंपर सरकारका ध्यान दिलाया गया था :—"झाँसी-राज्य और ब्रिटिश-सरकारकी मित्रता चिरकाल बनी रहे इस हेतु ब्रिटिश-सरकार रामचन्द्ररावको तथा उनके वारिसोंको और उन वारिसोंके उत्तराधिकारियोंको, बुन्देलखण्डमें अँगरेजी अमलादारीके आरंभमें जो प्रान्त शिवराव भाऊके अधीन था उसके और संप्रति झाँसी-राज्यके अधीन जो प्रान्त हैं उनके वंश-परंपरागत स्वामी नियत करके यह स्वीकार करती है कि वे उन प्रान्तोंके स्वाधीन राजा रहेंगे। अन्तमें इस खलीतेमें गंगाधररावने यह भी लिखा था कि "मैंने इस खलीते का सब हाल मेजर एलिस और कप्तान मार्टिन साहबको स्पष्ट रीतिसे समझा दिया है। मैंने अपने वंशके आनन्दराव नामके एक बालकको गोद लिया है; इस विषयका खलीता मैंने उन्हींको दे दिया है। मुझे विश्वास है कि वे उसे आपकी सेवामें अवश्य भेजेंगे।"

इस प्रकार सब बातोंकी व्यवस्था हो जाने पर महाराजा गंगाधररावको दृढ़ विश्वास और पूर्ण संतोष हुआ कि ब्रिटिश सरकार हमारी अन्तिम प्रार्थनाको अवश्य स्वीकार करेगी और झाँसीका राज्य चिरकाल तक हमारे घरानेमें बना रहेगा। उन्होंने महारानी लक्ष्मीबाईको अपने समीप बुलाकर बहुतकुछ समझाया और कहा कि "तुम किसी प्रकारकी चिन्ता मत करो। ब्रिटिश सरकारको सारा हाल विदित कर दिया गया है। मुझे आशा है कि मेरी प्रार्थना पर सरकार अवश्य ध्यान देगी। मेरे पीछे अँगरेज-सरकारकी कृपासे तुम्हें किसी प्रकारका कष्ट न होगा।"

परन्तु दुर्भाग्य-वश, महाराजा गंगाधररावकी मृत्यु-समयकी अंतिम प्रार्थना पर और झाँसीके राज-घरानेके साथ ब्रिटिश-सर-

कारकी जो मित्रता थी उस पर भी गवर्नर-जनरल साहबके दरबार में कुछ ध्यान नहीं दिया गया; और अंतमें एक हिंदू अबलाको व्यर्थ कष्ट सहना पड़ा! इस विषयमें इंग्लैण्डकी पार्लिमेन्टके एक मेम्बर मिस्टर डब्लू० एम० टारेन्स (W. M. Torrens) साहबने इस प्रकार लिखा है :—

"The Rajah wrote to the Governor-General respectfully commending his youthful choice to his consideration and care, and asking for the recognition of his widow as Regent during the minority. He appealed to the second article of the subsisting treaty, which guaranteed the territory to heirs of his family in *perpetual succession, whether heirs by descent, consanguinity, or adoption*, and he trusted that "in consideration of the fidelity he had always evinced towards Government, favour might be shown to this child." *He was allowed to die in the delusion that native fidelity would be remembered.* The Empire was grown so strong that the autocrat of Fort William thought it could afford to forget fidelity."

"महाराजा गंगाधररावने गवर्नर-जनरल साहबको जो खलीता भेजा था उसमें उन्होंने अपने दत्तक-पुत्र पर कृपा-दृष्टि रखनेकी विनय-पूर्वक सिफ़ारिश की थी, और यह लिखा था कि दत्तक-पुत्र की बाल्यावस्थामें मेरी स्त्री राज्यकी प्रबन्ध-कर्त्री (रीजेन्ट) नियत की जावे। उन्होंने उस खलीतेमें संधि-पत्रकी दूसरी धाराका प्रमाण दिया था, जिसके द्वारा झाँसी राज्यका हक़ उनके वंशजोंको वंश-परम्पराके लिए प्राप्त हुआ था—ये वंशज चाहे उसी वंशमें उत्पन्न हुए हों, या सगोत्री हों, या दत्तक लिए गये हों। उनका यह विश्वास था कि 'मैंने अँगरेज़-सरकारके साथ जो सदैव राज-

भक्तिका बर्ताव किया है उसके बदले मेरे दत्तक-पुत्र पर निस्सन्देह कृपा की जायगी,

तारीख़ २१ नवम्बर सन् १८५२ ई० को महाराज का हाल कुछ और ही दिखाई पड़ने लगा। नाड़ीका चलना बन्द हो गया। मृत्युके भयङ्कर चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे। चारों ओर उदासीनता छा गई। महाराजा गंगाधररावने शांति और धैर्य-पूर्वक इस मृत्युलोकका त्याग किया! इस संसारमें जन्म, मृत्यु और सुख दुःख प्राणिमात्रको लगा हुआ है। कविकुल-चूड़ामणि कालिदासकी "मरणं प्रकृतिः शरीरिणाम्", इस उक्तिके अनुसार कोई भी शरीरधारी मृत्युसे बच नहीं सकता।

महाराजा गंगाधररावकी मृत्युका समाचार शीघ्र ही सारे शहरमें फैल गया। राज-महलमें रोना-पीटना आरंभ हो गया। हा! प्रिय पतिकी मृत्युसे हमारी चरित्र-नायिका लक्ष्मीबाईकी क्या दशा हुई होगी, इसका अनुमान करना कठिन है; उन पर यह वज्रपातही हुआ! केवल अठारह वर्षकी छोटी अवस्थामें उन्हें यह कठिन और दुःसह वैधव्य दशा प्राप्त हुई! उनकी उस समयकी दशाका महान् दुखदाई वर्णन इस क्षुद्र लेखककी लेखनीसे नहीं हो सकता!

महाराजके मरने पर उनकी लाश स्मशानमें राजसी ठाटके साथ पहुँचाई गई। जिस समय लाश चिता पर रक्खी गई उस समय झाँसीके एजेंट एलिस और कप्तान मार्टिन और इरेग्युलर क्यावेलरीके सिपाही अशुभ-सूचक वस्त्र पहन कर वहाँ आये थे। स्मशानमें झाँसीके सब सरदार, रईस और प्रजागण इस शोकसे शोकित हो चारों ओर हाहाकार करते हुए दिखलाई पड़ते थे। मेजर एलिज, कप्तान मार्टिन और कई एक अँगरेज़ इस दुःखदाई समयमें महारानीको शांति देनेके लिए राजमहलमें पधारे। वे लोग

लक्ष्मीबाईको धैर्य और शान्तिके वाक्य कह कर बिदा हुए। झाँसी-का राज्य-कोष वहाँके क़िलेमें था। उसका प्रबंध करनेके लिए एलिस साहब क़िले पर गये। वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि ख़ज़ाने में अनुमान २,४५,७३८ रुपये हैं। उस पर उन्होंने कोषाध्यक्ष पंडित ज्वालानाथके समक्ष मुहर लगाकर सब मकानोंमें ताले डाल दिये; और क़िलेके संरक्षणार्थ महाराज सेंधिया नरेशकी कंटिन्जंट फौज की नवीं पलटनके १००,१५० सिपाही नियत कर दिये। महाराजकी मृत्युके पश्चात् किसी प्रकारकी गड़बड़ न होने पावे, इसलिए झाँसी दरबारके प्रतिष्ठित लोगोंसे मिलकर साहब बहादुरने अपना सब काम ठीक कर लिया। उधर कप्तान मार्टिन साहबने भी सेनाका प्रबंध बड़ी उत्तमता-पूर्वक किया।

झाँसीके महाराजा गंगाधररावकी मृत्युका समाचार असिस्टेंट पोलिटिकल एजेण्ट मेजर एलिस साहबने बुंदेलखंडके पोलिटिकल एजेंट मेजर मालकम साहबको तारीख २१ नवम्बर सन् १८५३ ई० को लिख भेजा था। इस पत्रके पहूँचते ही उन्होंने हिन्दुस्थान-सरकारके फ़ारेन (पर-राज्य संबंधी) सेक्रेटरी के सूचनार्थ २५ नवम्बरको इस प्रकार पत्र भेजा:—

"मान्यवर"

१—श्रीयुत गवर्नर-जनरल साहब बहादुरको यह समाचार लिखते मुझे दुःख होता है कि झाँसीके महाराजा गंगाधरराव-का तारीख २१ नवम्बरको देहान्त हो गया।

"२—मृत्यु के एक दिन पहले महाराजने पाँच बर्षका एक लड़का दामोदर गंगाधरराव नामका गोद लिया, और कहा कि यह हमारा नाती है; परंतु मुझे ऐसा मालूम होता है कि यह लड़का महाराजके पूर्वज रघुनाथरावकी पाँचवीं पीढ़ीमें से है और उसको अँगरेज़ी रीत्यनुसार महाराज का चचेरा भाई मानना चाहिए।

"३—मेजर एलिस साहब ने महाराजकी भेंट और उनकी मृत्युके विषयमें जो पत्र मेरे पास भेजे थे वे श्रीमान्‌की सेवामें अवलोकनार्थ भेजे जाते हैं। उसी प्रकार महाराजने आनन्दराव नामक लड़केको गोद लेनेके बारेमें जो एक खलीता मेरे पास उसी तारीख़ को भेजा है यह भी इसके साथ भेज दिया गया है।

"४--मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि झाँसी के महाराज ने अपनी मृत्युके समय यकायक गोद लेनेका विचार किया, यह देखकर झाँसी के दरबारके प्रत्येक मनुष्यको आश्चर्य हुआ होगा। क्योंकि सब लोग यह आशा करते थे कि राज्यकी सारी सम्पत्ति महारानी के जीतेजी उन्हीं के अधीन रखनेकी प्रार्थना ब्रिटिश-सरकारसे की जायगी। परंतु जब उन्होंने यह देखा कि झाँसीके उस सूबेदार (शिवराव भाऊ) के वंशमें, जिसके साथ ब्रिटिश-सरकार ने प्रथम संधि की थी, कोई भी वारिस नहीं है और न अपने ही वंशमें कोई निकट का संबन्धी रिश्तेदार है, तब उन्होंने दत्तक लेनेका विचार किया होगा।

"५—भारत-सरकारकी सूचनार्थ मैं झाँसी-राजघरानेका एक वंश-वृत्त इस पत्रके साथ भेजता हूँ। इस वंश-वृत्तसे यह विदित होगा कि यह लड़का महाराजके पूर्वज प्रथम रघुनाथरावके वंश का है।

"६—मैंने मेजर एलिस साहबको तारीख़ २ को एक सूचना-पत्र भेजा था; उसकी एक प्रति भारत-सरकारके पास तारीख़ ३ को भेज दी गई है। उसी सूचना-पत्रके अनुसार मेजर साहब अपनी कार्रवाई कर रहे हैं। जब तक झाँसी राज्यकी व्यवस्थाके संबंधमें सरकारकी अंतिम आज्ञा विदित न होगी तब तक स्वर्गवासी महाराजकी दत्तक-विधिकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जावेगा।

"७—झाँसी-राज्यका ब्रिटिश-सरकारसे किस प्रकार का संबंध है, यह दिखलानेके लिए नीचे कुछ थोड़ेसे प्रमाण भी दिये जाते हैं, जो सरकारको निस्सन्देह ग्राह्य होंगे। इन बातोंका उचित विचार करनेसे यह प्रकट होगा कि झाँसीके महाराजाको अपने राज्यका, किसीको, उत्तराधिकारी बनानेका हक़ है या नहीं।

"८—सन् १८०४ ईस्वीमें बुंदेलखण्डसे हमारा सम्बन्ध हुआ। उस समय हमने शिवराम भाऊके साथ, उनको पेशवाके नौकर और मांडलिक समझकर, संधि की। जब सन् १८१७ ईस्वीमें पेशवाने झाँसीके सब हक़ ब्रिटिश-सरकारको दे दिये, तब हमने शिवराम भाऊके नाती रामचन्द्ररावको झाँसी-राज्यका स्वामित्व वंश-परम्पराके लिए दिया। इसीलिए उनको सन् १८३२ ई० में सूबेदारके बदले राजाका ख़िताब दिया गया।

"९—रामचंद्ररावका देहांत सन् १८३५ ईस्वीमें हुआ। उनके कोई पुत्र न था। इस कारण मुझे स्मरण है कि झाँसीका राज्य खालसा करनेका प्रश्न उठाया गया था। परंतु उस समय शिवराम भाऊके दो पुत्र रघुनाथराव और गंगाधरराव जीवित थे। यह देखकर राज्यका हक़ उन्हींको क्रम-क्रमसे दिया गया। अब गंगाधररावकी मृत्युसे उनके वंशका अंत हो गया है।

"१०—मुझे इस समय यह भी लिख देना आवश्यक प्रतीत होता है कि सन् १८३५ ईस्वीमें जब रामचंद्ररावकी मृत्यु हुई तब झाँसी-राज्य पर दो आदमियोंने अपना हक़ प्रकट किया था। एक उनका दत्तक-पुत्र और दूसरा उनकी स्त्रीका दत्तक-पुत्र। परन्तु उस समय उन दोनोंके हक़ ना-मंजूर किये गये। उस समय जो पत्र-व्यवहार हुआ था उससे यह मालूम होगा कि झाँसीका राज्य जिन शर्तों पर ब्रिटिश-सरकारके अधीन हुआ है, उनके अनुसार

वहाँके राजा या रानीको सरकारकी आज्ञा बिना दत्तक लेनेका अधिकार नहीं है ।

"११—महाराजा गंगाधररावने अपने पश्चात् राज्यभार जिस स्त्रीको सौंपनेकी इच्छा प्रकट की है वह अत्यंत योग्य और समथ है; परंतु वर्तमान समय के विचारों पर ध्यान देते हुए मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार इस प्रदेशको अपने स्वाधीन करनेमें विलंब नहीं करेगी । ऐसी दशामें मुझे यह विश्वास है कि सरकारकी ओरसे रानी साहबको स्वर्गवासी राजाकी सारी निज सम्पत्ति और झाँसीका राजमहल देकर उनकी मान-मर्यादा पूर्ण-रीतिसे बनाये रखने और उनके कुटुम्बी पुरुषोंको सुखसे रहनेके लिए कुछ मासिक द्रव्य देकर उनको प्रसन्न रखनेकी आज्ञा होगी ।

"१२—रानी साहबाके यथार्थ खर्चके लिये कितना द्रव्य नियत किया जाय, यह बतलाना कठिन काम है । बुन्देलखंडमें मरहठोंका यही एक अंतिम घराना है; और जिन कारणोंसे पेशवा और विनायकरावके पाससे धर्मार्थ द्रव्य मिलनेकी आशा थी उनके न रहनेसे इस राज्यके सब आश्रितजन उदर-पोषणार्थ रानी साहबा हीके पास आवेंगे । इन सब बातों पर ध्यान देकर मैं यह सूचित करता हूँ कि रानी साहबाको ५०००) मासिकसे कम न दिया जाय ।

"१३—झाँसीका राज्य बहुत दिनोंसे हमारे अधीन है । उसकी व्यवस्था मेजर रास साहबने उत्तम प्रकारसे की । अतएव मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यदि सरकार इस राज्यको खालसा करनेका विचार करे तो उसकी व्यवस्था उसीके पड़ोसी सेंधिया-सरकारके प्रान्तके समान करनेमें हम लोगोंको कुछ भी कठिनाई नहीं पड़ेगी ।

"१४—यदि सरकार इस प्रान्तको मेरे अधीन रखना चाहे तो मैं तयार हूँ । परंतु मुझे और मेरे सहकारी मेजर एलिस साहबको मालके महकमेका कुछ भी अनुभव नहीं है; और मुझे ग्वालियर

और बुन्देलखंडके राज्य-संबंधी बखेड़ोंका निपटारा करनेके लिए बार-बार दौरे पर जाना पड़ता है। इसलिए मैं विनय-पूर्वक यह सूचित करता हूँ कि बुन्देलखंडके जो ज़िले जबलपुरके कमिश्नर कप्तान अर्सकिन साहबके अधीन हैं उन्हींमें यह प्रान्त भी शामिल कर दिया जाय।"

अपनी रिपोर्ट सरकारके पास भेजकर उन्होंने झाँसीके बन्दोबस्तका उद्योग आरंभ किया। झाँसीमें महाराजा सेंधियाकी कंटिन्जंट फ़ौजमेंसे छटवीं पलटनका एक भाग और बंगाल-नेटिव-इनफेंटीकी एक पलटन रखनेका निश्चय किया; इससे अतिरिक्त झाँसी और करेरा नामके दो क़िलोंके बन्दोबस्तके लिए ब्रिगेडियर पार्सन्स साहबसे चार पलटनें और लेनेकी व्यवस्था की गई।

इधर झाँसी-दरबारके लोगोंका दत्तक-पुत्रके नाम पर राज्य चलानेका पूरा विश्वास था। क्योंकि महाराजा गंगाधररावने अपने जीते-जी ही पोलिटिकल एजेन्ट के सम्मुख गोद लेनेका सारा काम किया था। उन्होंने ब्रिटिश-सरकारको खलीता भेजकर दत्तक स्वीकारार्थ प्रार्थना भी की थी। उन्हें उसके स्वीकार होनेकी इसी बातसे आशा थी कि सन् १८१७ ईस्वीमें रामचंद्ररावके साथ जो शर्तें हुई थीं उनके अनुसार झाँसीका राज्य उन्हींके घरानेमें वंश-परम्परा स्थिर रखने का वचन ब्रिटिश-सरकारने दिया था, और झाँसी राज्यकी व्यक्त की हुई कृतज्ञता तथा ब्रिटिश-सरकारकी समय-समय पर की हुई सहायताको ऐसी दयालु सरकार कदापि भुला नहीं सकती।

तीसरा अध्याय

झाँसी-राज्यका पतन और अँगरेज़ी अमलदारीका आरम्भ।

इस संसारमें ऐसा कौन है जो सदा एक ही स्थितिमें बना रहे? जिसे आज हम सुखी देखते हैं वही कल किसी-न किसी कारणसे दुखी हो जाता है। जिस प्रकार मनुष्यको सुख-दुःख होता है उसी प्रकार राष्ट्र या देश भी कभी उन्नत दशा और कभी अवनत दशा में रहता है। जो देश वैभव-गिरिके अत्यंत ऊँचे शिखर पर पहुँच जाते हैं वे सहसा नष्ट भी हो जाते हैं; और जो निरन्तर दुर्दैव-पंकमें फँसे पड़े रहते हैं वे अल्प समयमें उन्नतावस्थाको प्राप्त हो जाते हैं। यह इस कालचक्रकी विचित्र गतिकी लीला है!

जिस समय अँगरेज़ इस देश में व्यापार के लिए आये, उस समय उनके मन में राज्य-प्राप्ति की इच्छा न थी। पाठकोंको इस बातका अनुभव हिन्दुस्तानमें अँगरेज़ी राज्यके विस्तारकी ओर थोड़ासा ध्यान देनेसे हो जायगा। जिन लोगोंको, अँगरेज़ोंको इस देशमें अपने व्यापारके लिए, सन् १७५२ ई० में, दिल्लीके बादशाहका परवाना हासिल करने लिए बड़ी नम्रतासे बिनती करनी पड़ी थी; उस समय इन लोगोंके अधीन सन् १७५२ ई० में सिर्फ़ ३ कोठियाँ और २० वर्गमील भूमि थी। वही फिर बढ़ते-बढ़ते, सन् १८५७ ई० में, ६,५०,००० वर्गमील हो गई, और इस समय तो सारा हिन्दुस्तान उनके अधीन है! मुसलमान बाद-

शाहोंने जो कार्य ८०० वर्षोंमें भी पूरा न कर पाया उसको इन चतुर वणिक्वृत्ति और कुटिल राजनीत-निपुण लोगोंने सौ-डेढ़-सौ वर्षों हीमें बड़ी उत्तमतासे कर दिखाया !

इस विषयमें बंगालके गवर्नर साहबने दिल्लीके बादशाहको उस समय जो पत्र भेजा था, उसमें लिखा है—

"जान रसल बालूके एक छोटे-से छोटे कणके समान है। उसका मस्तक आपके पैर रखनेका स्टूल है। आप स्वतन्त्र सम्राट और संसारके आधार-स्तम्भ हैं। आपके तख़्तकी तुलना सुलेमानके तख़्तसे की जा सकती है, और आपकी कीर्ति साइरसके समान है। अँगरेज़ोंको बंगाल, बिहार और उड़ीसामें बिना महसूल दिये व्यापार करनेकी इजाज़त दी गई है; अतएव वे आपके आज्ञाधारी दास हैं। आपकी जो कुछ आज्ञा हो उसको पालनेके लिए वे सदा तत्पर हैं। हम लोगोंने आपकी पवित्र आज्ञाओंका सदा पालन किया है...........अब हमारी यह प्रार्थना है कि उक्त स्थानोंमें बिना किसी रोक-टोकके हम लोगोंको व्यापार करने की इजाज़त बनी रहे।"*

*"The supplication of John Russel, who is as the minuest grain of sand, and whose forehead is the tip of his footstool, who is the absolute monarch and prop of the universe, whose throne may be compared to that of Soloman's, and whose renown is equal to that of cyrus... The Englishmen, having traded hither to in Bengal, Orisaa and Behar custom-free (except in Surat), are yonr Majesty's most obedient slaves, always intent upon your commands. We have readily observed your most sacred orders, and have found fovour; we have, as

सन् १७५२ ई० में वारन हेस्टिंग्ज़ने इस देशके राजाओं और प्रजा पर जो अत्याचार किया था उसका इंग्लैण्डकी पार्लिमेण्ट-सभामें विचार करते समय यह निश्चय किया गया था कि "हिंदुस्थानमें अपने राज्य का विस्तार करने या वहाँका देश अपने अधिकार में लेनेका प्रयत्न करना ब्रिटिश-राजनीति, उसकी प्रतिष्ठा और इच्छासे विरुद्ध है।"

कोर्ट आफ़ डायरेक्टर्सने लिखा है—

"हमारे नूतन प्राप्त राज्यकी मर्यादा इतनी विस्तृत है कि जब हम अपनी वर्तमान स्थितिका विचार करते हैं तब आईन बनाने-वालोंकी उस गम्भीर सूचनाकी बुद्धिमत्ता और आवश्यकता हमारे मन पर अंकित हुए बिना नहीं रहती, जिससे यह निश्चय किया गया था कि हिन्दुस्तानमें राज्य-प्राप्ति या राज्य-विस्तारका काम करना ब्रिटिश राज-नीति, इज्ज़त और इच्छाके विरुद्ध है।"*

परंतु यह निश्चय छः वर्षसे अधिक समय तक न ठहरने पाया, सन् १७९० ई० में लार्ड कार्नवालिसने टीपू सुलतान पर चढ़ाई की

---

becomes servants, a deligent regard to your part of the sea......We crave to have your Majesty's permission in the above-mentioned places, as before, and to follow our business without molestation."

* " The territories which we have lately acquired...... are of so vast and extensive a nature, that we cannot take a view of our situation without being seriously impressed with the wisdom and necessity of that solemn declaration of the Legislature, that to pursue schemes of conquest and extention of dominion in India, are measures repugnant to the '*wish, honour and policy*' of the British Nation."

और उसका आधा राज्य हस्तगत कर लिया। फिर ६ वर्ष के बाद सन् १७९९ ई० में लार्ड वेलस्लीने टीपू सुल्तानका सारा राज्य ही अपने अधीन कर लिया। थोड़े ही दिनोंके बाद कर्नाटक-प्रांत और अवध के नवाब से लिया हुआ प्रान्त अँगरेज़ी-राज्यमें मिला लिया गया। इसके कोर्ट-आफ़-डायरेक्टर्सको बहुत संतोष हुआ; परंतु अल्प समय में ही इनके राज्यकी मर्यादा बहुत बढ़ जाने के कारण उन्होंने घबराकर पुनः निश्चय किया कि अब हिंदुस्तान में राज्य प्राप्तिका कोई प्रयत्न न किया जाय। अर्ल आफ़ मोइराके गवर्नर-जनरल होते ही नेपाल-युद्ध आरंभ हुआ जिसमें बहुत बड़ा प्रान्त ब्रिटिश-सरकारके अधिकारमें आ गया। तात्पर्य यह कि ब्रह्मदेश, आसाम, कुर्ग, सिंध, पंजाब आदि बड़े-बड़े प्रदेश क्रमशः अँगरेज़ी-अमलदारीमें शामिल हो गये। जब लार्ड डलहौसी सन् १८४८ ई० में यहाँ आये तब उन्होंने यह निश्चय किया कि जो देशी रियासतें लावारिस होती जायँ वे ब्रिटिश-राज्यमें शामिल कर ली जाया करें और जिन रियासतोंको दत्तक लेनेके लिए सरकारकी मंजूरी लेनी पड़ती है उनको लावारिस समझकर ब्रिटिश-राज्यमें शामिल कर लेना चाहिए। इस विषयमें उनका जो मत था वह उन्होंने स्वयं इस प्रकार प्रकट किया है—

"मैं किसीके लिए यह सम्भव नहीं समझता कि वह इस राजनीति पर कोई आपत्ति कर सके कि जो प्रदेश पहले ही से अपने कब्जेमें है उसके बीचमें यदि कोई ऐसी छोटी छोटी रियासतें हों जो लावारिस हो गई हों, तो उन्हें अपने क़ब्ज़ेमें लेकर, उचित अवसर आ पड़ने पर, अपने मुल्कका विस्तार बढ़ाया जाय—उसकी उन्नति की जाय। इन छोटी-छोटी रियासतोंसे हम लोगोंको सिर्फ़ तकलीफ़ ही मिल सकती है। मेरी समझमें ये हमारे राज्यकी मजबूतीका कारण हो नहीं सकतीं। अतएव इनको अपने राज्यमें

मिला लेनेसे इनसे होनेवाली तकलीफ़ें दूर हो जायँगी और हमारे ख़ज़ानेकी बढ़ती भी हो सकेगी। ऐसा करनेसे उन रियासतोंको हमारी राज्य-प्रणालीका लाभ अवश्य होगा—मैं यह कह सकता हूँ कि इसीमें उन रियासतोंकी हर तरहकी भलाई है। यह मेरी पक्की और विचार-पूर्वक निश्चित राय है कि अपनी उचित और बुद्धि-मत्तापूर्ण राजनीतिसे काम लेनेमें अँगरेज़ी गवर्नमेन्टका आवश्यक कर्तव्य है कि मुल्क ले लेनेमें या आमदनी बढ़ानेके ऐसे उचित मौक़ोंको, जो आप-ही-आप समय-समय पर हाथ आवें, कभी न छोड़ना चाहिए। ऐसे मौक़े चाहे इस तरह पैदा हों कि रियासतका किसी क़िसमका कोई वारिस ही न हो; चाहे इस तरह कि असली वारिस न होनेसे अँगरेज़-सरकारके इजाज़त देने ही पर हिन्दू-शास्त्रके अनुसार गोद लेकर कोई वारिस बनाया जा सकता हो। इन दोनों मौक़ोंको हाथसे निकल जाने देनेकी भूल कदापि न करनी चाहिए।”

जिस समय बुंदेलखंडके पोलिटिकल एजेन्ट मालकम साहब-की रिपोर्ट भारत-सरकारके पास पहुँची उस समय गवर्नर जनरल साहब अवध-प्रान्तमें दौरे पर गये थे। जब चार पाँच महीने बीत गये और सरकारकी ओरसे कुछ जवाब न आया तब महारानी लक्ष्मीबाईने एक खलीता मेजर एलिस साहबके द्वारा भारत-सर-कारको भेजा। उसका सारांश यह है :—

“इस प्रान्तमें ब्रिटिश-सरकारका राज्य स्थापित होनेसे पहले हमारे ससुर शिवराव भाऊने सरकारकी जो सहायता की थी वह झाँसीके दफ़्तरसे प्रकट होती है। इस सहायताके बदले ब्रिटिश-सरकारने हमारे घराने पर जो कृपा-दृष्टि की थी उससे हमारा सदा कल्याण हुआ है।”

"सन् १८४२ ई० में हमारे पति महाराज गंगाधररावके साथ कर्नल स्लीमन सहाबने जो संधि की थी उससे सन् १८१७ ई० में रामचंद्ररावके साथ की हुई संधिकी शर्तें रद्द नहीं की गईं; किंतु यह वचन दिया गया था कि वे सब शर्तें पूर्ववत् पाली जायँगी और होनेवाले सब फ़ायदे झाँसी-राज्यको प्राप्त होंगे।"

"शिवराव भाऊके सौजन्य-पूर्ण बर्ताव और ब्रिटिश-सरकारके संबंधमें उनके हृदय के अटल प्रेमकी ओर ध्यान देकर उन्होंने अपनी मृत्युके समय जो इच्छा प्रकट की थी कि झाँसीका राज्य रामचंद्ररावको वंश-परंपराके लिए दिया जाय, उसे स्वीकार करके उक्त संधि की गई है।"

"झाँसी-सरकारका प्रेम-भाव और विश्वास दृढ़ करनेके हेतु उक्त संधिसे यह निश्चय हो चुका है कि रामचंद्रराव, उनके वारिस और गद्दीनशीन शिवराव भाऊके राज्यके वंश-परंपराके स्वामी हैं। इसका अर्थ यही है कि स्वर्गमें मोक्ष-प्राप्तिके हेतु अपने पश्चात् उत्तर-क्रिया करनेके लिए जो दत्तक-पुत्र लिया जायगा उसको ब्रिटिश-सरकार मंजूर करे और उसके द्वारा घरानेका नाम क़ायम रक्खे!"

"हिन्दू-शास्त्रके अनुसार मृतपिताको पिंड-दान करने और उसकी श्राद्धादि क्रिया करनेका अधिकार औरस-पुत्रके समान दत्तकपुत्रको भी है। इसीलिए दत्तक लेनेकी रीति सारे भारतवर्षमें प्रचलित है। इसी रीतिके अनुसार हमारे मृतपतिने १६ नवम्बर-को दीवान नरसिंहराव आपा, लाला लाहौरीमल, लाला तट्टीचंद आदि अनेक सज्जनोंके सम्मुख मुझे बुलाकर यह कहा कि मेरा स्वास्थ्य बहुत बिगड़ा हुआ है, और अब औषधियोंसे कुछ लाभ नहीं होता। अतएव गद्दीका वारिस होने के लिए अपने गोत्रके

किसी योग्य बालकको हिन्दू-शास्त्रके अनुसार गोद लेनेका मेरा विचार है।"

"तब उन्होंने रामचन्द्र बाबाको बुलाकर अपने गोत्रके अनेक बालकोंमेसे वासुदेवरावके पुत्र आनन्दराव नामके पाँच वर्षके बालक को पसद किया। अनन्तर विद्वान् पडितो और शास्त्रियो को बुलाकर दत्तक विधान किया गया। दूसरे दिन सबेरे पंडित विनायकरावने सकल्प पढ़ा और आनन्दरावके पिता वासुदेवरावने यथाविधि पुत्र-दान किया। इस पुत्रका नाम दामोदरराव गंगाधरराव रक्खा गया और दत्तक-विधि समाप्त की गई।"

"महाराजकी आज्ञानुसार मेजर एलस और कप्तान मार्टिन साहब को दतक-विधिके समय राजमहलमे पधारनेके लिए निमंत्रण पत्र भेजा गया था। उसके अनुसार वे दोनो २० तारीखको १० बजे राजमहलमे आये थे। उस समय हमारे पतिने सरकारकी इजाजत हासिल करनेके लिए उनको एक खलीता दिया, जो वहीं पर पढ़कर उन्हे सुनाया गया था। मेजर एलिस साहबने यह वचन दिया था कि महाराजकी इच्छानुसार हम सरकार को सब हाल सूचित कर देंगे।"

"दूसरे दिन अर्थात् सोमवार तारीख २१ नवम्बरको हमारे पतिका देहान्त हुआ। उनका सारा क्रिया-कर्म दमोदरराव गंगाधरराव हीने किया।"

"इस बालकको हमारे पतिने ब्रिटिश-सरकारकी कृपाके अधीन किया है। अब उसकी रक्षा और पालनका भार उन्ही पर है। सरकारसे हमारी अन्तिम प्रार्थना यह है कि जिस प्रकार दतियाके राजा परीक्षित, जालौनके बालाराव और ओरछाके तेजसिंहके लिए हुए दत्तकोंको सरकारने मञ्जूर किया उसी प्रकार इस दत्तकके लिये भी सरकार अपनी मञ्जूरी दे। झाँसीके सन्धि-पत्रमें (Daw-

ana) "हमेशा" शब्दका उपयोग किया गया है—यह शब्द उक्त राजाओंके संधि-पत्रोमे प्रयुक्त नही हुआ है—अतएव उन राजाओ की अपेक्षा दत्तक लेनेका हमारा हक्क अधिक है।"

यह खलीता गवर्नर-जनरल साहबकी सेवामे भेजा गया। महारानी लक्ष्मीबाईकी प्रार्थना स्वीकार करानेके लिए झाँसीके पोलिटिकल एजेन्ट मेजर एलिस साहबने तारीख २४ दिसम्बर सन् १८५३ ई० को एक पत्रमे यह लिखाथा कि "जिस तरह ओरछा से राज्यके साथ हमने संधि की है उसी तरह झाँसीके राज्यके साथ भी की है। दोनो संधियो का आशय एकसा है। ऐसी अवस्थामे एक राज्य को दत्तक की मंजूरी देना और दूसरेको न देना उचित नही है। कोर्ट आफ डायरेक्टर्सने अपने तारीख २७ मार्च सन् १८३६ ई० के पत्रमे यह स्वीकार किया है कि देसी राजाओ को दत्तक लेनेका पूरा हक है। अब यदि यह बहाना किया जाय कि जिन घरानो को ब्रिटिश-सरकारने पूर्व सहायता के बदले राजपद पर चढ़ाया है, वे अन्य घरानोंके समान प्राचीन नही हैं; और यदि इसी बहानेसे उनका हक क़बूल न किया जाय तो मेरी राय में यह बात डायरेक्टरोकी आज्ञाके विरुद्ध और उनकी उदारताका नाश करनेके समान होगी।"

परन्तु यह पत्र बुन्देलखण्डके एजेन्टके दफ्तर हीमे बहुत दिनों तक पड़ा रहा!

झाँसीकी गद्दी खाली देखकर गंगाधरराव के प्राचीन निवासस्थान खानदेशके रहनेवाले भाई-बन्दोंमें से सदाशिवराव-नारायण नामके किसी एक मनुष्यने झाँसीका राज्य पानेके लिए मेजर मालकम साहब को एक प्रार्थना-पत्र भेजा। इस प्रार्थना-पत्र को गवर्नर जनरल की सेवामें भेजते समय तारीख ३१ दिसम्बर १८५३ ई० को मालकम साहबने अपनी सिफारशी चिट्ठी मे यह लिखा है

कि 'यदि मृतराजाके पुरखोके किसी वारिसका हक क़बूल करना होतो यह मनुष्य सबसे ज्यादा नज़दीकका रिश्तेदार है, जो गद्दी पानेका हकदार हो सकता है ।'

जब सन् १८५४ ई० के फरवरी महीनेमें लार्ड डलहौसी साहब दौरेसे कलकत्तेको लौट आये तब झाँसी-राज्यका विचार आरभ हुआ । भारतसरकारने परराज्य-सबधी सचिव मिस्टर जे० पी० ग्रंट साहबने झाँसी-राज्यकी एक बहुत बड़ी मिसल तैयारकी। उसमे झाँसी-राज्यकी प्राचीनता और उसके साथ ब्रिटिश-सरकारके संबंध का सक्षिप्त इतिहास देकर इसी बात पर जोर दिया गया था कि झाँसीका राज्य अँगरेजी राज्यमे मिला लिया जाय । इस पर वादविवाद करके लाट साहब और उनके कौंसिलर लोगोने निश्चय किया वह यह है.—

"१—झाँसीके महाराज गंगाधररावका देहान्त सन् १८५३ ई० नम्बर मासके अतमें हुआ । उनके कोई पुत्र नही था । इसलिए उन्होने अपनी मृत्युके दिन पहले एक लड़केको दत्तक लिया। महाराज गंगाधररावकी स्त्री महारानी लक्ष्मीबाई यह प्रार्थना करती हैं कि भारत-सरकार उक्त दत्तक पुत्रको झाँसीकी गद्दीका वारिस कबूल करे।

"२—सेक्रेटरीने झाँसी राज्यका जो संक्षिप्त वृत्तांत (नोट) लिखा है उससे यह स्पष्ट विदित होता है कि ब्रिटिश-सरकार और झाँसी-राज्यका संबध किस प्रकारका है। इस बात पर विचार-पूर्वक ध्यान देकर और झाँसी-राज्यके साथ पहलेसे जो हमारा पत्र-व्यवहार हुआ है उस पर ध्यान देकर, मैं इस विषय पर अपनी सम्मति प्रकट करता हूँ कि झाँसीके राजा साहबके अधीन जो प्रांत था उसकी उचित व्यवस्था किस प्रकार की जानी चाहिए ।

"३—मेरी यह राय है कि इस प्रांतका स्वत्व ब्रिटिश-सरकारके हाथमें आ गया है। उस स्वत्वको ब्रिटिश-सरकारके हाथमें रहने देना ही हक़ और राजनीतिकी दृष्टिसे उचित होगा।

"४—जिन सिद्धान्तोंके अनुसार झाँसी-राज्यकी व्यवस्था की जानी चाहिए उनका पूरा-पूरा विचार हाल हीमें नागपुर और टेहरीके राज्योंके संबंधमें वादविवाद करते समय किया जा चुका है। बुंदेलखंडकी छोटी-छोटी रियासतोंके विषयमें लेफ्टिनेंट गवर्नर सर चार्लस मेटकाफ़ साहबने जो नियम बतलाया है और जिसको सरकारने सन् १८३७ ई० में स्वीकार कर लिया है उस पर ध्यान देनेसे और आश्रित राज्योंके विषयमें सन् १८४६ ई० में कोर्ट आफ़ डायरेक्टर्सने जो नियम निर्धारित किया है, उस पर विचार करनेसे यही निश्चय होता है कि झाँसी-राज्यको लावारिस समझ कर अँगरेज़ी-राज्यमें मिला लेनेका हमको पूर्ण अधिकार है।

"५—जिस लेखमें उक्त सिद्धान्तोंका वर्णन है उसको मैं यहाँ प्रकाशित करता हूँ :—

"कोर्ट आफ़ डायरेक्टर्सने यह स्पष्ट रीतिसे कहा है कि "भारतवर्षमें सर्व-साधारण नियम और रूढ़िके अनुसार जो रियासतें सतारा-राज्यके समान स्वतंत्र नहीं हैं उनका स्वामित्व सार्वभौम-सरकारकी अनुमतिके बिना किसी दत्तक-वारिसको प्राप्त नहीं हो सकता। इस प्रकारकी अनुमति देनेके लिए हम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीतिसे किसी प्रकारके वचनोंसे बद्ध नहीं हैं। और जब इस प्रकारकी अनुमति दी न जायगी तभी ऐसा समझा जायगा कि हमने अपने क़ब्जेमें आये हुए प्रांतकी भलाईकी ओर उचित ध्यान दिया है।"

"बुंदेलखंडके राजाओंके विषयमें सर चार्लस मेटकाफ़ साहब लिखते हैं—"प्रश्न यह है कि क्या जिनकी औरस संतान नहीं है

वे दत्तक लेकर अन्य वारसोंका हक़ या जब कोई वारिस हो न हो तब सार्वभौम सरकारको प्राप्त होनेवाला हक़ मार सकते हैं ? क्या सरकार इस प्रकारके दत्तक को स्वीकार करनेके लिए वाध्य है ?"

"इस प्रश्नका निर्णय करते समय ऐसे राजाओंमें, जो वंश-परंपरा-गत गद्दीके हक़दार हैं और उन जागीरदारोंमें, जिन्हें उक्त राजाओंसे या सार्वभौम-सरकारकी ओरसे जागीर मिली है, जो भेद है उस पर फ्रेजर साहबने ध्यान नहीं दिया।"

"इसलिए मेरी यह राय है कि यदि हिन्दू राजाओंकी औरस सन्तान न हो तो उन्हें दत्तक लेनेका हक है ; और ऐसे दत्तकको, यदि वह हिन्दू-धर्मशास्त्रके अनुसार हो, तो ब्रिटिश-सरकार अवश्य मंजूर करे।"

"अब जिन जागीरदारोंको राजाकी ओरसे जागीर मिली हो उनके उत्तराधिकारी नियत करनेका अधिकार उन्हीं राजाओंको जिन्होंने जागीर प्रदान की थी : या जागीर-दानकी शर्तोंसे अनुसार उन लोगोंको है, जिन्होंने युद्ध करके या अन्य किसी तरह उन जागीरदारोंके हक़ स्वयं अपने अधीन कर लिये हैं। इन शर्तोंका ख़ास मतलब यही रहता है कि औरस सन्तानके सिवा दत्तक-पुत्र या अन्य कोई वारिस न हो। अतएव ऐसे मामलोंमें जिन राजाओंने जागीर प्रदान की है उन्हें या उनके स्थानमें स्थापित होनेवाले अन्य राज्याधिकारियोंको यह अधिकार है कि जब कोई जागीर औरस पुत्रके न होनेसे लावारिस हो जाय तब वे उसको वापस ले लें।"

"६—झाँसीका राज्य सताराके समान—किंबहुना उससे भी अधिक "आश्रित" है। वह सार्वभौमत्वके नातेसे ब्रिटिश-सरकारके दिये हुए इनामके तौर पर एक जागीरदारके कब्ज़ेमें था। अतएव

औरस पुत्र न होनेसे उसको वापस लेनेका अधिकार ब्रिटिश-सरकारको है ।

"७—यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि झाँसीका राज्य "आश्रित" है । वह स्वतंत्र राज्य कभी नहीं था; इतना ही नहीं, किन्तु टेहरीका राज्य जितना स्वतंत्र माना जाता है, उतना भी वह नहीं है । वस्तुतः झाँसी टेहरीका ही एक भाग है, जिसको टेहरीके प्रधान स्वामी पेशवाने किसी एक सूबेदारको सौंप दिया था ।

"सन् १८०४ ई० में शिवराव भाऊके साथ ब्रिटिश-सरकारने जो संधि की थी, उसमें भी यही लिखा था कि "झाँसीके सूबेदार पेशवाके आश्रित है"। जिन्होंने सन् १८०३ ई० में लार्ड लेक साहबको 'वाजिबउल-अर्ज़' लिखा दिया, वे शिवरावभाऊ खुद यह बात कबूल करते हैं कि "पेशवाकी आज्ञानुसार मैं इस प्रांतका राज-काज करता था ।"

"जब शिवरावभाऊने भारत-सरकारसे यह प्रार्थना की थी कि संधिके अनुसार हमारे पोतेको गद्दी दी जाय, तब उन्हें यही उत्तर दिया गया था कि "पेशवाकी सम्मतिके बिना यह कहनेका हमको कुछ अधिकार नहीं है कि झाँसीका राज्य वंश-परम्पराके लिए चलाया जायगा ।"

"जिस समय यह पत्र-व्यवहार हो रहा था उस समय इस बातका भी निर्णय किया गया था कि झाँसीके सूबेदार किस दर्जेके हैं ।"

"बुन्देलखंड में गवर्नर-जनरल के जो एजेंट हैं उन्होंने लिखा है कि "काग़ज़-पत्रोंके देखनेसे यह विदित होता है कि भाऊ झाँसी-राज्य का कारभार स्वतंत्र मालिक के तौर पर न करते थे, किन्तु वे 'आमिल'—सूबेदार के तौर पर वहाँ काम करते थे ।

उनकी सूबेदारीको क़ायम रखना पूना-दरबार की आज्ञा पर अवलम्बित है।"

"इन सब क़ाग़ज-पत्रोंके यह बात सिद्ध होती है कि झाँसीकी सूबेदारी पेशवाके 'आश्रित' है और उसको वंश-परंपराके लिए चलानेका अधिकार पेशवा हीको है। इसी सिद्धान्तको मानकर अँगरेज़-सरकारने सन् १८१५ ई० में रामचंद्रावको सूबेदारीका अधिकार देना उचित समझा; क्योंकि उन्होंने (अँगरेज़ सरकारने) यह सोचा कि "यदि हम रामचंद्ररावको गद्दी पर बिठलावें तो यह काम पेशवाओंका स्वामित्व अपनी ओर ले लेने और उनका मन दुखानेके समान होगा। इससे यह भी पाया जायगा कि ब्रिटिश-सरकारने रामचंद्ररावका हक़ क़बूल किया।"

"यद्यपि सन् १८१७ ई० में झाँसी-राज्यका पेशवाओंका सब स्वामित्व ब्रिटिश-सरकारकी ओर आ गया, तथापि सरकारने यह क़बूल नहीं किया कि रामचंद्ररावका हक़ झाँसी-राज्य पर वंश-परंपराके लिए है। परंतु ब्रिटिश-सरकारके साथ शिवरावभाऊकी अच्छी मित्रता थी; इसलिए उनकी इच्छाके अनुसार जो प्रांत उनके क़ब्ज़ेमें था वह कुछ शर्तों पर रामचंद्ररावको वंश-परंपराके लिए दिया गया। अतएव सन् १८१७ ई० के संधि-पत्रकी दूसरी धाराके अनुसार "जिस प्रांतका शिवरावभाऊ उपभोग करते थे, उसके मालिक रामचंद्रराव और उनके उत्तराधिकारी हुए।"

"इस तरह यद्यपि झाँसीके सूबेदारको वंश-परंपराके लिए गद्दी मिल गई, तथापि उनका दर्जा छोटा ही बना रहा और सन् १८३२ ई० तक उन्हें राजाका पद प्राप्त नहीं हुआ।

"सन् १८३५ ई० में रामचंद्ररावका देहान्त हुआ। उन्होंने अपनी मृत्युकेएक दिन पहले एक लड़केको गद्दीका वारिस बनानेके लिए गोद लिया था; परन्तु उसको सरकारने मंज़ूर

नही किया। उनके पश्चात् उनके चाचा रघुनाथरावको राज्या-धिकार प्राप्त हुआ। रघुनाथराव सन् १८३८ ई० मे परलोक सिधारे। उनके बाद उनके भाई गंगाधररावको गद्दी पर बैठाया। वही गगाधरराव हालमे परलोकवासी हुए हैं।

"८—गंगाधररावका कोई औरस पुत्र नही है। इसी तरह जिन्हे झाँसीका राज्य वश-परम्पराके लिए दिया था उन रामचन्द्र-रावका भी कोई औरस पुत्र नही है। जबसे झाँसी-राज्यके साथ ब्रिटिश-सरकारका संबध हुआ तबसे वहाँ जिन सूबेदारो या राजाओंने राज्य किया उनमेसे किसी एकका भी औरस पुत्र नही है। अतएव वश-परम्पराके लिए चलनेवाले झाँसी-राज्यका कोई भी वारिस नही है।

"९—गगाधररावने अपनी मृत्युके एक दिन पहले जो लड़का गोद लिया है वह वश-वृक्षके अनुसार बहुत दूरका सबधी प्रतीत होता है। जो मनुष्य आसन्न मरण है उसकी की हुई दत्तक-विधि सशय-युक्त समझी जाती है। इस मामलेमें तो सशयके और भी विशेष कारण हैं। यह बात सब लोगोको विदित है कि मृत राजा साहबने दत्तक लेनेका विचार इससे पहले कभी प्रकट नही किया था। पोलिटिकल एजेन्टने भी अपनी रिपोर्टमे यही लिखा है कि "झाँसीके राजा साहबने मरते समय यकायक दत्तक लेनेका विचार किया। इससे मै समझता हूँ कि झाँसी-दरबारके प्रत्येक मनुष्यको आश्चर्य हुआ होगा। सब लोग यही समझते थे कि वे अपना सब राज्य अपनी रानीके अधीन रहने देनेके लिए सरकारसे प्रार्थना करेंगे। परन्तु ऐसा मालूम होता है कि दत्तकका यह अड़ंगा इस लिए लगाया गया होगा कि ब्रिटिश-सरकारने झाँसीके जिस सूबे-दारके साथ प्रथम सधि की थी उस शिवरावभाऊके वंशमे कोई भी वारिस नही है।

"१०—महारानी लक्ष्मीबाईने गवर्नर-जनरल साहबको जो खलीता भेजा है उसमें उन्होंने यह बिनती की है कि जिस तरह बुन्देलखंडके टेहरी, दतिया और जालौनके राज्योंको दत्तक लेनेका हक़ मंजूर किया गया है उसी तरह झाँसीका भी मंजूर किया जाय।

"टेहरी और दतिया स्वतंत्र राज्य हैं। उनके उत्तराधिकारियोंके नियम झाँसी सरीखी 'आश्रित' रियासतको लगाये नहीं जा सकते। हाँ, यह बात सच है कि यद्यपि जालौन भी एक 'आश्रित' रियासत है तथापि उसको दत्तक लेनेका अधिकार दिया गया है। परन्तु इसके संबंधमें यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि जब ब्रिटिश-सरकार किसी समय स्नेह-बद्ध होकर या राजनीतिक विचारोंसे किसी रियासतको दत्तक लेनेकी आज्ञा देती है तब उसका यह अर्थ नहीं करना चाहिए कि सरकारने उस रियासतका तथा अन्य रियासतोंका दत्तक लेनेका हक़ क़बूल कर लिया। यह माननेके लिए भी कोई प्रमाण नहीं है कि जालौन-रियासतको उक्त अधिकार प्राप्त हो गया है; क्योंकि जबसे दत्तक लिया गया है तबसे यह रियासत सरकार हीके अधीन समझी जाती है।

"११—वर्तमान दत्तकको मंजूर करनेके लिए रानी साहबाने एक और कारण बतलाया है। वह यह है कि सन् १८१७ ई० के संधि-पत्रकी दूसरी धाराके अनुसार ब्रिटिश-सरकारने यह क़बूल किया है कि रामचन्द्रराव और उनके वारिस और उनके पश्चात् गद्दी पर बैठनेवाले झाँसीके वंश-परम्पराके जागीरदार हैं। इस परसे यह बात क़बूल नहीं की जा सकती कि सरकारका यह इरादा था कि "यदि कोई भी लड़का गोद लिया जाय तो उसको ब्रिटिश-सरकार वारिस मुक़र्रर करेगी।"

"इस विषय पर अधिक वादविवादकी आवश्यकता नहीं है।

इसका निर्णय दफ़्तरके ऐतिहासिक प्रमाणों हीसे हो चुका है। पहले रामचन्द्ररावने भी दत्तक लिया था; परन्तु सरकारने उसको मंज़ूर नहीं किया और राज-पद एक दूसरे ही मनुष्यको दिया। यह बात सब लोगोंको विदित है।

"१२—ऊपर लिखी हुई बातोंसे यह सिद्ध होता है कि झाँसी एक 'आश्रित' रियासत है। वहाँके अधिकारी "सार्वभौम सरकार-की सनदके अनुसार जागीर पाये हुए" बुँदेलखंडके अन्य 'आश्रित' जागीरदारोंमेंसे एक जागीरदार हैं। अतएव "जिन्होंने जागीर दी है या जिन्होंने जागीर देनेवालोंका हक़ युद्ध करके या अन्य उपायसे प्राप्त कर लिया है उनको जागीर-दानकी शर्तों के अनुसार उत्तरा-धिकारी नियत करनेका पूरा अधिकार है। इन शर्तोंका खास मतलब यही रहता है कि औरस पुत्रके सिवा दत्तक-पुत्र या अन्य कोई वारिस न हो। इसी तरह यह भी सिद्ध हुआ है कि मृत राजाके कोई औरस पुत्र नहीं है; और झाँसीके जिन सूबेदारों या राजाओंके साथ ब्रिटिश-सरकारका कुछ समय तक सम्बन्ध था उनमेंसे किसी एकका भी कोई वारिस नहीं है। अंतमें यह भी सिद्ध हुआ है कि अंतिम राजा (गंगाधरराव) की दत्तक लेनेकी इच्छा उनकी प्रजाको भी मालूम न थी; और जिस राजा (राम-चंद्रराव) को ब्रिटिश-सरकारकी ओरसे झाँसीका राज्य वंश-परम्पराके लिए दिया गया था उसके लिये हुए दत्तकको भी सर-कारने मंजूर नहीं किया। इन सब बातोंसे यह स्पष्ट विदित होता है कि मृत राजा गंगाधररावका लिया हुआ दत्तक ना-मंजूर करनेका हक़ सरकारको निस्सन्देह है।

"१३—और इस हक़के अनुसार औरस-पुत्र न होनेके कारण झाँसी-राज्य को खालसा करनेका सरकारको पूर्ण अधिकार है।

"वास्तव में सरकारको इस प्रान्तसे कुछ फ़ायदा या लाभ

नहीं है; क्योंकि वह बहुत बड़ा राज्य नहीं है और उसकी आय भी थोड़ीसी है। परन्तु वह सरकारी मुल्क में है। यदि वह सरकारके क़ब्ज़ेमें आ जाय तो हमको बुन्देलखंडके अपने सब प्रान्तों की अन्दरूनी राज्य-व्यवस्था सुधारनेमें कोई कठिनाई न होगी। यदि झाँसी का राज्य हमारे क़ब्ज़ेमें आ जाय तो वहाँकी प्रजाका अत्यंत कल्याण होगा। इस विषयके संबंधमें कुछ थोड़ीसी बातें स्वानुभवसे नीचे लिखी जाती हैं।

"१४—रामचन्द्ररावके बाद दो आदमी झाँसीकी गद्दी पर बिठलाये गये। पहले रघुनाथरावको गद्दी दी गई। वे कुष्ट-रोगसे पीड़ित थे। उनकी सिर्फ़ तीन ही वर्षकी अमलदारीसे यह बात प्रकट हो गई कि वे राज्य करनेके योग्य नहीं हैं। पहले झाँसी राज्यकी आमदनी १८ लाख रुपये थी। वह राचंद्ररावके समयमें कुछ थोड़ीसी घट गई थी; परन्तु रघुनाथरावके समयमें तो वह तीन ही लाख रह गई। दूसरी बार सरकारने गंगाधररावको गद्दी पर बैठाया। ये भी राज्य करने योग्य न थे। इसीलिए बहुत दिनों तक राज्यके सब सूत्र हमने अपने हाथमें रक्खे थे और उनको कोई अधिकार नहीं दिया गया था।

"१५—रानी साहबाने जालौन रियासतका उदाहरण देकर दत्तक मंज़ूरी की प्रार्थना की है; परतु दत्तक लेनेसे उस रियासतकी जो दशा हुई है वह किसी तरह अनुकूल नहीं है। सन् १८३२ ई० में उस रियासतको दत्तक लेनेकी आज्ञा दी गई। उस समय उसकी आमदनी १५ लाख रुपये थी। आठ वर्षके बाद वह आधेसे भी कम हो गई। उस समय के गवर्नर जनरलने उस रियासतकी दशाका जो वर्णन किया है उसका उल्लेख सेक्रेटरीने अपने नोटमें इस प्रकार किया है:– "इस रियासत का राजा ११ वर्षकी अवस्थाका है। उसका पालन उसकी बहिन और मंत्री

करते हैं। फ़ज़ूल खर्च से नौ-दस वर्षमें ३० लाखका ऋण हो गया है। राज्यमें चारों ओर अंधेर मच गया है। गाँव-गाँवमें लूट-मार होने लगी है। खेतोका काम बंद हो गया है, और सब जमीन ऊजड़ हो गई है। जो प्रदेश किसी समय अच्छा उपजाऊ और आबाद था, वह धीरे-धीरे वीरान हो रहा है।"

"१६—इस तरह झाँसी और जालौनमें दत्तक और बे-क़ायदा वारिस मंजूर करने से बुरे परिणाम हुए हैं। इन बातोंसे सचेत होकर मैं यह निश्चय करता हूँ कि राजनीति और कर्तव्य की ओर ध्यान देकर ब्रिटिश-सरकार झाँसी-राज्यके संबधमें अपना हक पूरे तौरसे अमलमें लावे, और गगाधराव के लिये हुए दत्तकको ना-मंजूर करके और झाँसी को लावारिस समझकर उसे अँगरेजी राज्यमें मिला लिया जाय।

"पोलिटिकल एजेन्टकी सूचनाके अनुसार रानी साहबाको अच्छी तरह वेतन दिया जाय और उस प्रान्तकी व्यवस्था लेफ्टनेन्ट गवर्नरके अधीन रहे।"

तारीख़ २७ फरवरी सन् १८५४ ई०।

यह लिखते हुए हमे बड़ा खेद होता है कि लार्ड डलहौसी और उनके मंत्रियोने झाँसी और ब्रिटिश-सरकारकी परस्पर मित्रता पर कुछ भी ध्यान नही दिया। इतना ही नहीं, वरन् उन लोगोने झाँसीके राजाओंकी कृतज्ञता और खुद अँगरेज-सरकारके समय-समय पर दिये हुए वचनो पर भी ध्यान नही दिया। लार्ड डलहौसीने झाँसीको अँगरेजी-राज्यमे मिला लेनेके जो कारण बतलाये हैं, उनकी मेजर इवाल्स बेलने अपने "Indian Empire"—भारतवर्षीय-साम्राज्य नामके ग्रन्थमे खूब कड़ी आलोचना की है। यह ग्रन्थ प्रत्येक विचारशील मनुष्यको अवश्य पढ़ना चाहिए। झाँसीके संक्षिप्त इतिहाससे यह बात भली भाँति प्रकट होती है

कि झाँसीके राजाओंका ब्रिटिश-सरकारके साथ किस प्रकारका सम्बन्ध, था और उनके साथ "दोस्त-सरकार" के रिश्तेसे 'वंश-परम्परा' तक कायम रहनेवाली, अत्यन्त महत्वकी कितनी सन्धियाँ की गई थीं । इन सन्धियोंके वास्तविक अर्थकी ओर ध्यान न देकर देशी रियासतों पर अपना हक़ साबित करना, हिन्दू-धर्मशास्त्रके अनुसार प्रत्येक देशी रियासतका दत्तक लेनेका पूरा अधिकार स्वीकार कर और उसमें कभी हाथ डालनेका वचन देकर भी दत्तक ना-मंज़ूर करना, दत्तक लेनेके सम्बन्धमें झाँसीकी प्रजाकी प्रतिकूलता न होने पर भी सिर्फ़ एक पोलिटिकल एजेन्ट-की रिपोर्टसे उसको संशयात्मक मानना, झाँसीका अधिकार और दर्जा बराबरीका होने पर भी उसके राजाओंकी गणना कनिष्ट श्रेणीमें करना, रियासतके किसी पुराने बखेड़ेका सम्बन्ध नई बातोंसे लगाकर अपनी ही सम्मति पर ज़ोर देना; और अन्तमें यह कहकर अपनी महान् उदारताका परिचय देना कि झाँसी-राज्यकी प्राप्तिसे हमारा कुछ लाभ नहीं है—हमने उसे झाँसीकी प्रजाके कल्याण हीके लिए लिया है, यह सब लार्ड डलहौसीकी अनुपम राजनीतिका नमूना है । यह अत्यन्त खेदकी बात है कि एक प्राचीन और सुप्रसिद्ध हिन्दू-राजघरानेको अपनी दृढ़ मित्रता, प्रेम-भाव, सहायता और कृतज्ञताके पलटे सारी दुनियामें न्यायका डङ्का बजानेवाले अँगरेज़ अधिकारियोंसे इस प्रकारका पारितोषिक मिले !

ब्रिटिश सरकारने जो सन्धियाँ की थीं उनके वास्तविक अर्थके विषयमें पार्लिमेन्टसभाके मेम्बर मिस्टर डब्लू० एम० टारेन्स साहबने लिखा है । *

"सन्धियोंकी भाषा प्रायः संक्षिप्त होती है और शब्द साधारण

*" Treaties have throughout all time been for the most part brief in language, general in the terms employed, and

अर्थके द्योतक होते हैं। उनसे यह बात पाई नहीं जाती कि काल्पनिक और आकस्मिक भावी घटनाओंका निःशेष पूर्व-ज्ञान प्राप्त करके उन सबका यथोचित प्रबन्ध कर दिया गया है। परन्तु उनका वास्तविक और निश्चित उद्देश यही होता है कि सरल भाषामें शान्ति और मित्रताके बन्धनोंका स्थूल-वर्णन किया जाय। इन सन्धियोंका संकेतार्थ भी यही होता है कि जब किसी मामलेमें जरूरत हो तब उनका उपयोग वैसा ही किया जाना चाहिए जैसा दोनों पक्षके लोगोंको मंजूर हो, या जैसा किसी अपक्षपाती पंचके निर्णयसे सिद्ध हो। यही परस्पर व्यवहार-सम्बन्धी हक्का स्पष्ट नियम है। इस नियमके अनुसार जाँच करने पर यही विदित होता है कि जब वारिसका हक वंश-परम्पराके लिए (चिरकालके लिए)

---

confessedly intendent, not as exhaustive anticipations of all imaginable contingencies but as laying down broadly, and in simple formsof speech the outlines of peace and amity; upon the implied condition that the application of these terms to any and every case that might thereafter arise should be such as the common understanding of both communities would admit, or the judgment of an impartial arbiter declare. Tested by this obvious rule of international right, the guarantee of *perpetual inheritance* was undoubtedly intended, and undoubtedly understood, to imply the devolution of title, dignity, and power to whatever heirs could, from time to time, establish their respective claims, —not according to the *lex loci* of the foreign and alien party to the compact, but according to the *lex loci* of the State whose autonomy the treaty had been confessedly framed to assure."

दिया गया था तब उसका यही अर्थ समझा गया था कि समय समय पर जो कोई वारिस पर होंगे उन्हें राज्यका सब हक़, अधिकार और वैभव प्राप्त होगा। इस बातका निर्णय विदेशियोंके आइनके अनुसार नहीं किया जायगा; किन्तु वह उस रियासत (राज्य) के कायदोंके अनुसार किया जायगा जिसकी स्वाधीनता की रक्षाके हेतु संधि की गई थी।

ईस्ट-इन्डिया-कम्पनीको इंग्लैण्डके राजा तृतीय जार्जकी ओरसे जो सनद मिली थी, उसमें लिखा है :—

"उक्त देशके निवासियोंके नागरिक (मुल्की) और धार्मिक रीति-रवाजोंका यथोचित आदर करनेके हेतु यह क़ायदा बनाया जाय कि कुटुम्बोंके पिता और स्वामियोंके हक़ और अधिकार उसी प्रकार सुरक्षित रहेंगे जिस तरह वे हिन्दू या मुसलमानोंके क़ायदोंके अनुसार बरते जाते थे।"*

उधर कलकत्तेकी कौंसिलमें बैठकर डलहौसी साहबने झाँसीको ब्रिटिश-सरकारके राज्यमें मिला लेनेकी आज्ञा दे दी; और इधर झाँसीके महलमें रहनेवाली लक्ष्मीबाई पति-वियोगसे दुखित होकर अपने दत्तक-पुत्रकी भावी दशाके विषयमें रात-दिन चिंता कर रही थीं। तारीख ३ दिसंबर सन् १८५३ ई० को उन्होंने जो खलीता सरकारको भेजा था उसका जवाब दो महीने व्यतीत हो जाने पर भी नहीं आया। तब उन्होंने तारीख़ १६ फरवरी सन् १८५४ ई०

---

* "And in order that regard shonld be had to the civil and religious usages of the said natives, be it enacted that the rights and authorities of fathers of families and masters of families, according as the same might have been exercised by Hindu or Mahomedan law, shall be preserved to them respectively within their said families &c."

को एक और खलीता मालकम साहबके मार्फत गवर्नर-जनरलको भेजा। इस खलीतेमे भी उन्ही सब बातोका जिक्र किया गया था जिनसे झाँसीके राजाओका दत्तक लेनेका हक़ साबित होता था। इस खलीतेको मालकम साहबने तारीख़ २८ फरवरी सन् १८५४ ई० को गवर्नर-जनरलके पास भेज दिया और उसीके साथ अपनी ओरसे एक पत्र भी भेजा, जिसमे उन्होने रानी साहबा के अनुकूल सम्मति दी थी। बड़े आश्चर्यकी बात है कि जिस हाकिमने एक बार प्रतिकूल मत प्रकट किया था उसीने इस समय महारानी लक्ष्मीबाईके अनुकूल अपनी सम्मति दी! परंतु "का वर्षा जब कृषी सुखाने" इस कहावतके अनुसार जब झाँसी-राज्यके भाग्यका फ़ैसला कलकत्तेकी कौंसिलमे हो चुका था तब मालकम साहबकी अनुकूल रायसे क्या लाभ हो सकता था? यदि यही राय वे पहले प्रकट करते तो निस्संदेह झाँसी-राज्य पहला सा बना रहता और महारानी लक्ष्मीबाईको किसी प्रकारका कष्ट न सहना पड़ता। होन-हारको कौन टाल सकता है? परंतु विशेषता यही है कि तारीख़ २८ फरवरीको मालकम साहबका उक्त पत्र कलकत्ते भेजा गया और उसके एक ही दिन पहले अर्थात् तारीख़ २७ फरवरीको डल-हौसी साहबने झाँसीको अँगरेजी-राज्यमें मिला लेनेकी आज्ञा दे दी! इसीको दैवयोग कहते हैं!

ऊपर लिखा हुआ खलीता भेजनेके बाद महारानी लक्ष्मीबाई और उनके दरबारके लोग यह आशा कर रहे थे कि अब दत्तककी मंजूरी शीघ्र ही आ जायगी और झाँसीका राज्य दामोदररावके नामसे चलाया जायगा। इस संसारमें हम लोग आशा हीके सहारे-से बहुत कुछ काम करते हैं। यदि यह आशा न होती तो हम लोग इस अथाह संसार-समुद्रमे डूब कर मर जाते। परतु हम उसी आशा-रूपी कल्पवृक्षके नीचे वैठकर इस असार संसार हीको सुख

मान रहे हैं। यही हाल बेचारी लक्ष्मीबाईका था। वे अपने मनमे यही आशा कर रही थी कि राज्यके सबधमे अपने पतिने जो व्यवस्था-पत्र सरकारको भेजा है वह अवश्य स्वीकृत होगा और अपने भेजे हुए खलीतो पर सरकारके दरबारमे विचार किया जाकर अपने दत्तक पुत्र दामोदररावको शीघ्र ही राज्याधिकार दिया जायगा। परंतु "मनसा चिंतयेत्कार्य दैवमन्यत्त चिंतयेत्" इस उक्तिके अनुसार महारानी लक्ष्मीबाईके भाग्यमे कुछ और ही लिखा था। झाँसीको अँगरेज़ी-राज्यमें मिला लेनेकी सरकारकी आज्ञा पाते ही बुंदेलखडके पोलिटिकल एजेंट मेजर मालकम साहबने एक इश्तिहार मेजर एलिस साहबके पास भेज दिया:—

यह प्रकाशित किया जाता है कि "तारीख २१ नवम्बर सन् १८५३ ई० को महाराज गंगाधररावका देहांत हुआ। उन्होने अपनी मृत्युसे पहले दामोदररावको गोद लिया था, परतु श्रीमान् गवर्नर-जनरल साहबने यह दत्तक ना-मजूर किया। इसलिए भारत-सरकारकी, तारीख ७ मार्च सन् १८५४ ई० की आज्ञाके अनुसार झाँसीका राज्य ब्रिटिश-राज्यमे मिला लिया गया। इस इश्तिहारसे सब लोगोको प्रकट किया जाता है कि सम्प्रति झाँसी-प्रांत बुन्देलखंडके पोलिटिकल एजेंट मेजर एलिस साहबके अधीन किया गया है। अब झाँसी प्रांतकी सब प्रजा अपनेको ब्रिटिश-सरकारके अधीन समझकर मेजर एलिस साहबको कर दिया करे और सुख तथा सतोषसे रहे।"

जिस समय झाँसीको अँगरेजी-राज्यमे मिला लेनेका समाचार मेजर एलिस साहबने महारानी लक्ष्मीबाईको सुनाया उस समय वे अत्यत शोकसे मूर्च्छित हो गई। कुछ होश आने पर एलिस साहबने उन्हें बहुतेरा समझाया और कहा कि पोलिटिकल एजटकी आज्ञानुसार "आपका उचित सम्मान किया जायगा और आपके

निर्वाहकी उदारतासे व्यवस्था की जायगी* ।" यह कहकर जब इलिस साहब जाने लगे तब लक्ष्मीबाईने शोकाकुल होकर बड़ी नम्रतासे, मनस्विता के साथ, कहा—"मैं झाँसी न दूँगी" ।

Dalhousie's Administration of British India नामक ग्रन्थमें लिखा है—

"झाँसी राज्यको ब्रिटिश-राज्यमे मिला लेनेकी सूचना इस प्रतापी लार्ड साहबने अपने एजेन्टको दी । महारानी लक्ष्मीबाईने एजेन्ट साहबको परदेके बाहर आदरसे बैठाया । जिस समय ब्रिटिश-राज-प्रतिनिधिने महारानीको यह दुखदायी समाचार सुनाया कि अब झाँसी-राज्य पर उनका स्वामित्व नहीं है—वह शक्तिमान् अँगरेजोके राज्यमे मिला लिया गया है—उस समय लक्ष्मीबाईने ऊँचे, किंतु मधुर स्वरसे यह उत्तर दिया कि 'मेरा झाँसी देंगा नहीं ।' उनका यह अभिमान व्यर्थ हुआ ! झाँसी अँगरेजी-राज्यमे मिला ली गई और बालक आनन्दरावका हक़ ना-मंजूर किया गया ।※

---

*मालकम साहबने गवर्नर-जनरलकी मञ्जूरी से यह निश्चय किया था कि महारानी लक्ष्मीबाईको ५०००) रु० मासिक वेतन दिया जाय । पर महारानी लक्ष्मीबाईने इसे स्वीकार नहीं किया ।

*"The notice of annexation was sent by this illustrious Lord to the Court of Regent Ranne Luchmee Bai received the Agent of Lord Dalhousie most courteously, separated by a purdah When the British representative informed her of this heart-rending news that Jhansi thenceforth ceased to belong to her, that it was incorporated with the domains of the mighty English, Luchmee Bai in a loud yet melodious voice, replied to the Agent of the English in these few significant words 'Mera jhansi denga nahe,' I will-

झाँसी-राज्यकी स्वाधीनता का ह्रास हो जानेके बाद मेजर मालकम साहबने महारानी लक्ष्मीबाईके संबंधमें नीचे लिखी हुई सूचनाएँ भारत-सरकार के पास उसकी स्वीकारता के लिए भेजी:—

१—महारानी लक्ष्मीबाईको झाँसीके खजाने से या जहाँसे वे पसंद करें ५०००) रुपये हर महीने—जब तक वे जीती रहे—दिये जायँ।

२—झाँसीका राजमहल महारानी लक्ष्मीबाई को रहने को दिया जाय और उसपर उन्हीं का स्वामित्व समझा जाय।

३—महारानी लक्ष्मीबाईके जीवन-समयमें उन पर या उनके नौकरो पर ब्रिटिश-सरकारकी अदालत का कोई अधिकार न रहे।

४—स्वर्गवासी महाराज गंगाधररावकी इच्छाके अनुसार उनके निजका धन रियासतके लेन-देनका हिसाब करके जो बाक़ी रहे वह, और राज्यके सब जवाहिरात महारानी लक्ष्मीबाईको दिये जाँय। उनके रिश्तेदारोंकी एक फिहरिस्त बनाई जाय और उनके निर्वाहकी कुछ व्यवस्था की जाय।

लार्ड डलहौसीने उक्त सब सूचनाएँ स्वीकार कीं, परंतु मृत राजाकी निजकी सम्पत्ति और रियासतके जवाहिरातके संबंधमें उन्होने अपने ता० २५ मार्च सन् १८५४ ई० के पत्रमें यह लिखा कि यद्यपि गगाधररावका दत्तक-पुत्र आईनके अनुसार राज्यका अधिकारी नहीं हो सकता, तथापि उनकी निजकी सम्पत्ति और रियासतके जवाहिरात आदि पर उसीका स्वामित्व है। अतएव यह सम्पत्ति महारानी लक्ष्मीबाईको नहीं दी जा सकती। बस इस आज्ञाके अनुसार झाँसीके पोलिटिकल एजेटने झाँसीके खजानेसे

---

not give up my Jhansi) Vain boast! Jhansi was annexed. The infant Anandrao's rights were denied"

६ लाख रुपये निकालकर दामोदरराव के नाम से अँगरेज़ी खज़ाने में जमा कर दिये और यह निश्चय किया कि जब दामोदरराव बालिग़ हों तब उनको यह द्रव्य व्याज-सहित वापस दिया जाय। इसके अतिरक्त रियासतके सब जवाहिरात और सोने-चाँदीके आभूषण आदि "दामोदररावके लिये लक्ष्मीबाईके अधीन कर दिये गये। जब राज्य ही चला गया तब राज-वैभव किस तरह रह सकता है! राजा रामचंद्ररावकी मृत्युके पश्चात् झाँसीके सब राजा क़िले में रहते थे। अब पोलिटिकल एजेंट की आज्ञासे महारानी लक्ष्मीबाईको झांसी का क़िला ख़ाली करके शहरमें जाकर महलमें रहना पड़ा।

ज्योंही झांसीका राज्य अँगरेज़ोंके हाथ आ गया त्यों ही उन्होंने झाँसी-राज्यकी सेनाको छः छः मासका वेतन देकर सदा के लिए बिदा कर दिया और उसके स्थानमें अँगरेज़ी सेनाकी भरती की। बंगाल इन्फेन्ट्रीकी १२वीं पल्टन क़िले की रक्षा के लिए नियत की गई और यह निश्चय किया गया कि जब ज़रूरत हो तब सी. पी. की छावनीसे कप्तान हेनसे या ब्रिगेडियेर हिल साहब से सहायता ली जाय। झाँसीके क़िलेमें जो युद्ध-सामग्री कई पीढ़ियोंसे इकट्ठी की गई थी वह भी इसी समय नष्ट कर दी गईं और पेशवाके समयकी बड़ी-बड़ी तोपें निरुपयोगी कर डाली गईं! जिस समय झाँसी-राज्यके स्वामि-भक्त सेवक अँगरेज़-सरकार से वेतन पाकर अपने अपने घरों को जाने लगे उस समय उनके चेहरों पर शोक और उदासीनताकी छाया दिखाई पड़ती थी!

प्रसिद्ध इतिहासकार 'के' साहबने लिखा है—

"झाँसीका प्रत्येक मनुष्य जिनका अत्यंत आदर करता है और जिनका स्वभाव अत्यंत सुशील है, वे लक्ष्मीबाई बृथा ही इस बात पर ज़ोर देती रहीं कि मेरे पतिके घरानेने ब्रिटिश-सरकारके साथ

सदैव भक्ति-पूर्वक बर्ताव किया है; वे वृथा ही इस बातका वर्णन करती रहीं कि झाँसी के राज-घरानेने सरकारको बहुत सहायता की है और सरकारने भी उस सहायताको धन्यवाद-पूर्वक स्वीकार किया है; वे व्यर्थ ही संधियोंकी उन शर्तों पर सरकारका ध्यान दिलातीं रहीं जो उनके देशके नियम और रीति-रवाजके अनुसार उत्तराधिकारी नियत करनेके प्रतिकूल न थीं और वे व्यर्थ ही उदाहरण देकर यह प्रार्थना करती रहीं कि जिस तरह अन्य रियासतों पर अनुग्रह किया गया है उसी तरह झाँसी पर भी कृपा की जाय ? परंतु सरकारकी आज्ञा वज्र के समान अखण्डनीय थी। सरकारने यह निश्चय कर लिया था कि झाँसीको अँगरेज़ी-राज्यमें मिला लेनेसे दोनों का कल्याण होगा। लार्ड डलहोसीने लिखा है—'झाँसी सरकारी ज़िलोंके बीचमें है। अतएव उसको अपने क़ब्ज़ेमें ले लेने से हमको बुँदेलखण्डमें अपने सब प्रांतों की अन्दरूनी राज्य-व्यवस्था सुधारनेमें सुभीता होगा। झाँसीको अँगरेज़ी-राज्य में मिला लेने से जो लाभ होगा वह हमारे अनुभवके कुछ फलोंके उल्लेखसे प्रकट होगा।" अब अनुभवके फलोंसे यह बात भली भाँति प्रकट हो गई है कि झाँसीके लोगोंने इस मिलाने को कितना पसंद किया !*

"In vain the widow the late Rajah, whom the Political Agent described 'as a lady hearing a high charactor and much respected by every one at Jhansi, protested that her husband's house had ever been faithful to the British Government,—in vain she dwelt upon services rendered in former days to that Government, and the acknowledgements which they had elicited from our rulers—in vain she pointed to the terms of the treaty which did not to her simple understanding bar succession in accorda

अपनी राज-भक्तिके प्रकट करनेमें सबसे आगे था। उसको "ला-वारिस"के कमज़ोर बहानेसे अपने कब्ज़ेमें ले लेनेकी सार्वभौम सरकारकी कार्रवाई इस देशके राजाओं और मंत्रियोंकी दृष्टिमें केवल घृणाके योग्य और कोपजनक ही न थी; किंतु उससे सरकारकी बेईमानीके सिवा दूसरी बात ही उन लोगोंके ध्यानमें नहीं आ सकती थी।"*

जब झाँसी-राज्यको अँगरेज़ी-राज्यमें मिला लेनेके कारण बेल साहबके लेखानुसार इस देशके राजाओंके मनकी यह हालत हुई तब स्वयं महारानी लक्ष्मीबाई और झाँसीकी प्रजाकी क्या स्थिति हुई होगी? लार्ड डलहौसी साहबने लिखा है—"झाँसीकी प्रजा-के कल्याणके लिये" झाँसीका राज्य अँगरेज़ी-राज्यमें मिला लिया गया है। परंतु देशी रियासतोंकी स्वाधीनताका नाश होते ही उनकी जो दुर्दशा हो जाती है उसका वर्णन जान सलिवन साहबने *B Plea for Princess of India* नामके ग्रन्थमें इस तरह किया है:—

"जब किसी देशी रियासतकी स्वाधीनताका नाश किया जाता है तब कोई एक अङ्गरेज कमिश्नर बनकर राजाके आसन पर आरूढ़ होता है। उसके तीन-चार साथी उतने ही (तीन-चार) दरजन देशी अधिकारियोंको पदच्युत कर देते हैं; और हमारे

---

* The little Raj of Jhansi had conspicuous in its loyal attachment and useful services to the British Government Its absorptiou by the Suzerain, under the shallow pretennce of a "lapse," was a proceeding not only most hateful- and offensive in the eyes of all Native Princes and their ministers, but quite untellegible to them, except on the supposition of *bad faith*.

कुछ सौ सिपाही हजारों देशी सैनिकोंके स्थान पर भरती किये जाते हैं। प्राचीन समयके दरबारका लोप हो जाता है; व्यापार बिगड़ जाता है; राजधानी नष्ट हो जाती है, लोग कंगाल हो जाते हैं और अङ्गरेज़ोंकी खूब उन्नति होती है। अङ्गरेज़ लोग इस्पंजके समान गंगाके किनारेका—इस आर्य-भूमि का—सब द्रव्य शोषण करके टेम्स नदीके किनारे इङ्गलैण्डमें ले जाते हैं"। *

जबसे झाँसीका राज्य ब्रिटिश-राज्यमें मिला लिया गया तब से महारानी लक्ष्मीबाई अपने दुःखमय जीवनके अन्तिम दिन बड़े कष्टसे बिताने लगीं। स्वराज्य-प्राप्तिकी कुछ आशा न रहनेके कारण उन्होंने भक्ति-पूर्वक ईश्वरकी आराधना करनेमें अपनी आयुके शेष दिन बिताने का निश्चय किया। वह नित्य प्रातःकाल चार बजे स्नान करके आठ बजे तक पूजा करतीं; फिर अपने महल के आँगनमें घोड़े पर सवार होकर कुछ व्यायाम करतीं; ग्यारह बजे फिर स्नान करतीं और दान-धर्म करके भोजन करतीं। भोजन करके कुछ समय तक वे आराम करतीं। इसके बाद तीन

---

*"Upon the extermination of a Native State Englishman takes the place of the Soveriegn, under the name of Commissioner; three or four of his associates displace as many dozonof the Native official aristocracy, while some hundreds of our troops take the place of the many thousands that every Native Chief supports. The little Court disappears—trad langwishes—the Capital decasy—the peoplee are impoverished—the Englishman flourishes, and acts like a sponge, drawing up riches from the bank of the Ganges, and squeezing them down upon the banks of the Thames."

बजे तक वे ११०० राम-नाम लिखकर आटेकी गोलियाँ बनातीं और मछलियोंको खिलाती थीं। संध्या को आठ बजे रात तक वे कथा-पुराणादि सुनती थीं। उनका यही समय लोगोंसे मिलने, भेंट करनेके लिए नियत था। पुराणकी समाप्ति होने पर वे तीसरी बार स्नान करतीं और अपने इष्टदेवकी भक्ति-पूर्वक पूजा करके प्रसाद ग्रहण करतीं थीं, तब वह शयन गृह में जाती थीं। यही उनकी उस समयकी दिन-चर्या थी। उस समय उनके घरका कारबार उनके पिता मोरोपंत तांबे देखते-भालते थे।

इस प्रकार राजकीय वैभवों और सब राजभोगोंका त्याग कर, वैराग्यवृतिसे रहकर केवल ईश्वरकी आराधना और सनातन धर्मानुसार पूजा-पाठ करने ही में लक्ष्मीबाई अपना समय व्यतीत करती थीं। ऐसी अवस्थामें एक और हृदय-द्रावक प्रसंग उपस्थित हुआ। जब महारानीके दत्तक-पुत्रकी अवस्था ७ वर्षकी हुई तब उन्हें उसके यज्ञोपवीत-संस्कारकी चिन्ता लगी उस समय उनके कारिन्दोंने यह सलाह दी कि स्वर्गवासी गंगाधर रावके उन छः लाख रुपयोंमेंसे, जो दामोदररावके नाम पर सरकारी ख़ज़ानेमें जमा हैं, एक लाख रुपये यज्ञोपवीत संस्कारमें ख़र्च करनेके लिये माँग लिये जायँ। यह सलाह लक्ष्मीबाईको भी पसन्द आई। उन्होंने झाँसीके कमिश्नर साहबके पास एक अर्ज़ी दी। उस पर सरकारने यह उत्तर दिया—"ये रुपये तुम्हारे पतिके दत्तक-पुत्रके हैं। वे तुमको दिये नहीं जा सकते; क्योंकि जब लड़का बालिग़ होगा और अपने रुपये पानेका सरकार पर दावा करेगा तब सरकारको रुपये देने पड़ेंगे। इसलिए यदि तुमको रुपयोंकी आवश्यकता ही है तो चार भले आदमियों की ज़मानत देकर यह लिख दो कि यदि लड़का सरकारसे रुपये पानेका दावा करेगा तो हम दे देंगे। तब तुमको रुपये दिये जायँगे।" लक्ष्मी-

बाई बड़ी समझदार स्त्री थीं। उन्होंने चार प्रतिष्ठित पुरुषोंकी जमानत देकर सरकारसे एक लाख रुपये लिये और बड़े समारोहसे दामोदरराव का यज्ञोपवीत-संस्कार किया।

झाँसी में ब्रिटिश-सरकारका अधिकार स्थापित होकर दो वर्षसे अधिक बीत गये। महारानी लक्ष्मीबाई सब सांसारिक सुखोपभोगोंसे विमुख होकर और उदासीन-वृत्ति स्वीकार कर नित्य पूजा-पाठ और दान-धर्म आदि सत्कार्यों में लगी रहतीं और अपनी आयु का एक-एक दिन बड़े कष्टसे व्यतीत करती थीं। उस समय यह बात स्वप्नमें भी उनको मालूम न हुई होगी कि कि विधाताने उनके भाग्यमें इससे बढ़कर और भी कुछ दुःख लिखा है; परंतु भारतवर्षके आधुनिक इतिहासमें जिस सन् सत्तावनका नाम अजरामर हो गया है उसका उदय इसी समय हुआ; और दुर्भाग्य-वश सर्व-संग-परित्यागिनी, ईश्वराराधनमें निमग्न रहनेवाली एक हिन्दू-राजलक्ष्मी पर अनेक कष्टदायक और विकट प्रसंग आये। उस प्रसंगका स्मरण होते ही जी काँप उठता है, और लेखनी स्तब्ध हो जाती है।

चौथा अध्याय ।

गदरका आरम्भ और झाँसीमें बलवा ।

महारानी लक्ष्मीबाईके चरित्रका यह भाग विशेष महत्त्वका है। उनके चरित्रके इस भागसे संबंध रखनेवाली बहुतेरी बातोंका पूरा-पूरा विचार न करने हीके कारण बड़े-बड़े अँगरेज़-लेखकों, विद्वान् ग्रंथकारों और प्रख्यात इतिहासज्ञ लोगोंने भी बड़ी बड़ी भूलें की हैं; और इन्हीं लोगोंके भूलसे भरे हुए ग्रंथोंको पढ़कर प्रायः बहुतेरे विदेशियों और अनेक हिन्दुस्तानियोंकी सम्मति लक्ष्मीबाईके संबंधमें कुछ कलुषित हो गई है। इससे अधिक बुरी बात और कौनसी हो सकती है कि जो हिंदू-अबला ब्रिटिश-सरकारकी उदारता, न्याय-प्रियता और मित्रता पर दृढ़ विश्वास रक्खे वही समयके प्रभावमें फँसकर बाग़ी (विद्रोही) समझी जायँ। तात्पर्य यह है कि लक्ष्मीबाईके चरित्रका यह भाग अत्यंत महत्त्वका और पेंचीला है। जब तक निष्पक्षपात होकर उस समयके इतिहासकी आलोचना न की जायगी तब तक सत्यांश दृष्टिगोचर होनेकी संभावना नहीं है।

यह बात इतिहासके पढ़नेवालोंको विदित है कि लार्ड डलौहोसीने अपनी कुटिल नीतिसे सतारा, नागपुर, तंजौर, झाँसी, अवध आदि अनेक देशी रियासतोंको ब्रिटिश-राज्यमें मिलाकर भारतवर्षके स्वराज्यका सुख भोगनेवाले अनेक प्राचीन और प्रतापशाली राजाओंको दुखित किया था। इसी तरह हिंदूधर्मशास्त्रके अनुसार

हिंदू राजाओंके लिये हुए दत्तकको अस्वीकार करके उन्होंने साधारण लोगोंके मनमें ब्रिटिश-सरकारकी नीतिके संबंधमें अविश्वास उत्पन्न कर दिया था।

उस समयकी ब्रिटिश राजनीतिके संबंधमें कुछ निष्पक्षपाती अँगरेज़ लेखकोंने जो सम्मतियाँ दी हैं उन्हींको हम ऐतिहासिक और सच्चे प्रमाण मानकर यहाँ पर उद्धृत करते हैं। लक्ष्मीबाईके संबंध में किसी प्रकारकी सम्मति देते समय इन प्रमाणोंको अवश्य ध्यानमें रखना चाहिए।

१—"सतारा, नागपुर और झाँसी इन तीनरियासतोंके उदाहरणोंसे यह बात प्रकट होती है कि गवर्नर-जनरलने राज्यके सब सूत्रोंको एक केन्द्रस्थानमें एकत्र करनेकी अपनी अनिवार्य तृष्णासे हिन्दुस्तानके सब राजाओंको केवल भयभीत ही नहीं किया; किंतु उन्होंने हिन्दू-धर्मको जड़को उखाड़ने और हिन्दू-शास्त्रकी सौम्य तथा श्रेष्ठ विधियोंका नाश करनेका भी यत्न किया।"*

२—बाजीराव पेशवाको आठ लाख रुपये सरकारसे पेन्शनके तौर पर मिलते थे। संधि-पत्रके अनुसार यह पेन्शन उनके दत्तक पुत्र नाना साहबको भी (बाजीरावकी मृत्युके पश्चात्) मिलनी चाहिए थी। लार्ड डलहौसीने बाजीरावकी मृत्युके पश्चात् नाना साहबको पेन्शन नहीं दी और यह लिखा कि "पेशवाको ३० वर्ष

Dalhocsie's Administration of British India* **नाम के ग्रन्थ में लिखा है—"In three of these instances, Satara Nagpur and Jhansi, the Governor General not only terrified the native governing classes throughout Iudia with the spectre of a resistless centralization, but struck at the very root of Hindu religion and cut out of Hiudu Law its high estand gentlest enactment."

तक ८ लाख रुपये वार्षिक पेन्शन मिलती थी । इसके अतिरिक्त जागीरकी आमदनी भी उनको मिलती रही । इतने समयमें वे ढाई करोड़से ज्यादा रुपये पा चुके हैं । उनको कुछ ख़र्च करना नहीं पड़ता था । उनके कोई पुत्र भी नहीं है । उन्होंने २८ लाखकी जायदाद अपने कुटुम्बको दे दी है । अब जो लोग बाकी हैं उनका सरकारकी कृपा या दान पर किसी प्रकारका हक़ नहीं है; क्योंकि जो जायदाद उनको दी गई है उसकी आमदनी बहुत है । यद्यपि यह मान लिया जाय कि यह आमदनी उन लोगोंके लिये काफी नहीं है, तथापि पेशवाका यह कर्तव्य था कि वह अपनी विपुल सम्पत्तिमेंसे इस बातका उचित प्रबन्ध कर जाते । संभव है कि पेशवाकीजायदाद-जितनी वह लिखाई गईहै उससे बहुत अधिक है"

भारत-सरकारकी इस कार्रवाईसे असंतुष्ट होकर नाना साहबने लंडनके कोर्ट आफ डायरेक्टर्सकी सेवामें एक प्रार्थना-पत्र भेजा; परंतु उससे भी कुछ लाभ न हुआ । तब निराश होकर उन्होंने कानपुरके बलवेमें अँगरेज़ोंको बड़ी निर्दयतासे क़तल करके अपना बदला लिया । इस संबंध में *Dalhousie's Administration of British India* नामके ग्रंथमें लिखा है—

१८५७ ई० में कानपुरके बलवेसे यह बात सिद्ध हुई कि लार्ड डलहोसीके "लावारिस" के नियमकी हिन्दू राजाओंने कितनी क़दरकी !*

३—सन् १८०२ ई० में बाजीराव पेशवाके साथ अँगरेज़-सरकारने जो संधिकी थी उसमें लिखा था कि "यावच्चन्द्र दिवाकरौ" अर्थात् जब तक चाँद और सूरज आकाशमें स्थित हैं तब तक इस संधिका पालन किया जायगा । परंतु अँगरेज-सरकारने जिस

*Cawnpur told in 1857 how a Hindu Princes' heart regarded Lord Dalhousie's doctrine of expedient esch eats.'

युक्तिसे संधिका उल्लंघन किया उसका वर्णन ऊपर किया गया है। उसीके विषयमें "Empire in Asia" नामके ग्रंथमें लिखा है:—

"जब तक सूर्य और चन्द्रमा आकाशमें स्थित हैं तब तक यह संधि रहेगी। दुर्भाग्य-वश वह दिन शीघ्र ही आनेवाला था जब यह चिरस्थायी प्रतिज्ञा पूर्व-देशीय आलंकारिक भाषाका एक निर्जीव शब्द समझा गया। परंतु स्मरण रहे कि इस संधि-पत्रको आदिसे अन्त तक गवर्नर-जनरलने स्वयं अपने हाथसे लिखा है। यद्यपि पेशवा और सतारा-राज्यका अंत हो गया है, तथापि गवर्नर-जनरलके लिखे हुए शब्द अब तक ज्योंके त्यों बने हैं" !*

४—भारतवर्षमें अँगरेज़ी-राज्यके संबंधमें जो असंतोष उत्पन्न हुआ था उसके अनेक कारणोंका उल्लेख Memorials नामके एक ग्रंथमें इस प्रकार किया गया है:—

"हमारे शासनसे इस देशके लोगोंमें जो असंतोष उत्पन्न हुआ उसके मुख्य कारण ये हैं—देशी रियासतोंकी स्वाधीनताका नाश; राजाओं और समाज-नायकोंकी मानहानि; ज़मींदारोंके माफ़ी-लगानके पैतृक स्वत्वका अपहरण; मालगुज़ारीकी बाकीके लिये ज़मींदार-जायदादको मुल्तकिल करना; गवर्नमेन्टकी उत्तम सेवा करनेवालोंको भी किसी प्रकारका मान या जागीर न देना; हमारे

*"The treaty was to last 'while Sun ond Moonendureth. The day was soon to come when these eternal vews were to be pooh-poohed as mere dead flowers or oriental rhetoric, But the original of the treaty from first to last stands in the handwritiug of the Governor General. Peshwa and Satara have passed away, but these words of his will not pass away !"

अफसरों और इस देशके राजाओं, समाज-नायकों और लोगोंमें मेल करनेवाले और विश्वास-योग्य व्यवहारका अभाव; इत्यादि।"*

अधिक प्रमाणोंकी आवश्यकता नहीं है। जो थोड़ेसे प्रमाण दिये गये हैं उन्हीं परसे यह बात प्रकट होतीहै कि कुछ अँगरेज-अधिकारियोंकी कुटिल नीतिसे ही हिन्दुस्तानियोंके मनमें अपने विदेशी शासन-कर्ताओंके संबंधमें अविश्वास और असंतोष उत्पन्न हुआ। निष्पक्षपात-बुद्धिसे विचार करने पर यही निश्चय होता है कि उस समय कुछ अदूरदर्शी अँगरेज़-अधिकारियोंकी स्वार्थ-परायण और कुटिल राजनीतिका ही यह भयंकर परिणाम हुआ कि भारतवर्षके शांति-प्रिय, सहनशील, राजभक्त, सेवा-तत्पर और नियमानुवर्ती लोगोंमें भी विद्रोहाग्नि प्रज्वलित हो गई, जिसकी विकराल ज्वालाओंमें एक निरपराधिनी हिंदू-अबलाको अपने प्राणोंकी आहुति देनी पड़ी! इसका परिणाम नूतन स्थापित ब्रिटिश-राज्य पर बहुत ही बुरा पड़ा।

---

* "The chief causes of the popular dissatisfaction with our rule were—the extinction of Native States and our consequent measures; the depression of the chiefs and heads of society; the resumption, or the conversion into life-tenures, of hereditary rent-free tenures of land, or of hereditary interests connected with land or the land revenue; alienation of zamindari lands for arears of revanue, or in satisfaction of civil decrees; the non conferment of estates or honours for eminent services to the State; the want of conciliatory and confidential personal intercourse between our officers and the Native Chiefs, heads of society and people; &c,. &c., &c.

जब सन् १८५६ ई० में डलहौसी साहब विलायतको गये और उनके स्थान पर लार्ड केनिंग साहब गवर्नर जनरल होकर भारतमें आये तब वे इस बातको भली भाँति जानते थे कि डलहौसी साहब की राजनीतिसे किस तरह हानि होनेका डर है। कोर्ट-ऑफ-डायरेक्टर्ससे बिदा होनेके समय उन्होंने यह कहा था कि "मेरी यही अभिलाषा है कि मेरे शासन-समयमें भारतवर्षमें पूर्ण शान्ति रहे। मुझे मालूम है कि उस देशके राजनीतिक आकाश-मंडलमें मेघका एक छोटासा टुकड़ा यकायक आकर तुरंत चारों ओर फैल जायगा और एक-दम मूसलाधार वृष्टि करके हम लोगोंकी दुर्दशा कर डालेगा।" दुर्भाग्य-वश ऐसा ही हुआ!

सन् १८५७ ई० का आरंभ हुआ। भारतवर्षमें जो असंतोषाग्नि एक बार लग गई थी वह धीरे-धीरे सुलगने लगी। उसी समय सरकारी फ़ौजमें इस बातकी चर्चा फैली कि कारतूसोंमें, जिनका काम फ़ौजके हर सिपाहीको पड़ता है, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान, गाय और सुअरकी चाबी लगी हुई है। उन लोगोंने यह मान लिया कि हिंदू और मुसलमान दोनों धर्म-भ्रष्ट किये जायँगे। उस समय उन लोगोंको सरकारसे घृणा करनेका यह एक अच्छा मौक़ा मिल गया। उन देशी रियासतों के लोग—जिनके राज्य अँगरेज़ी-राज्यमें मिला लिये गये थे—पहलेहीसे अँगरेज़-सरकारसे अप्रसन्न थे; और इसी समय सरकारी फौजके हिंदू और मुसलमान सिपाहियोंके मन धर्मच्युतिके भयसे क्षुब्ध हो गये थे। बस जिस तरह स्वच्छ आकाश-मंडल यकायक काले-काले बादलोंसे छा जाता है और भयानक वृष्टि होने लगती है उसी तरह भारतमें सैन्यविद्रोहका आरंभ हुआ। सबसे पहले बंगालमें बरहामपुरकी १९ वीं काली पलटनने अपना प्रचंड रूप प्रकट किया। यह वृतांत शीघ्र ही सारे देशमें फैल गया, जिससे ठौर-ठौरकी असंतोषाग्नि

एकदम प्रज्वलित हो उठी । २५ अप्रैल सन् १८५७ ई० को मेरठमें तीसरी केवलरी (रिसाला) ने सरकारके विरुद्ध कार्य आरंभ किया । मेरठ और आसपासकी सारी फौजने एकत्रित होकर मई महीनेमें बहुत भयंकर उपद्रव मचाया और अपना अधिकार मेरठ पर पूर्ण-रूपसे जमाकर वह दिल्लीकी ओर रवाना हुई । वहाँ भी उसका कार्य सफल हुआ । उन लोगोंने दिल्लीके आखिरी बादशाहको जिसका बल उस समय सब तरह कम हो गया था, फिरसे तख्त पर बैठाया और वहाँ अपना पूरा अधिकार जमा लिया ।

मेरठ और दिल्लीके बलवेकी खबर सब स्थानोंकी फ़ौजमें पहुँच गई । फ़ीरोजपुर, बरेली, मुरादाबाद, शाहजहाँपुर, लखनऊ आदि सब स्थानोंमें बलवा होने लगा । विद्रोहियोंने दिल्लीके बादशाहको तो पहले ही अपने क़ब्जेमें कर लिया था । अब नाना साहब पेशवा और अवधके नवाब भी, जो ब्रिटिश-शासनसे दुखित थे, विद्रोहियोंमें शामिल हो गये । जब अँगरेज-सरकारकी तत्कालीन राजनीतिसे असंतुष्ट होकर इस देशके बड़े-बड़े राज-घरानेके लोग भी विद्रोहियोंकी सहायता करने लगे तब तो उस "सिपाहियोंके बलवे" को पूरा-पूरा राजकीय और भयंकर रूप प्राप्त हो गया !

इस बलवेका समाचार झाँसीमें भी जा पहुँचा । उस समय वहाँ बंगालनेटिव इनफेंट्री की १२ वीं पलटन, १४ वीं इरेग्युलर केवलरी और एक तोपखाना—इतनी फौज थी । इस सेनाके मुख्याधिकारी कप्तान डन्लाप थे । उनका यह विश्वास था कि हमारे सिपाही कभी बलवेमें शामिल न होंगे । मई महीनेकी १८ तारीख़ तक झाँसीमें किसी तरह उपद्रवके चिह्न देख नहीं पड़े । इसके विषय में झाँसीके कमिश्नर स्कीन साहबने अपनी रिपोर्टमें लिखा है कि "झाँसीमें उपद्रव उठनेका कोई भय अब तक दिखाई नहीं पड़ता यहाँकी फ़ौज बहुत ईमानदार है । उसे मेरठ और दिल्लीके बलवे-

वालोंसे घृणा है।......बुँदेलखंडके छोटे-छोटे राज्योंके संबंधमें भी कुछ भय नहीं है; क्योंकि इस समय ओरछा, छत्रपुर और अजयगढ़के राजा नाबालिग हैं और शेष सब राजाओंका प्रबंध अच्छी तरह कर दिया गया है। इसलिये मुझे पूरा विश्वास है कि यहाँ हम लोग सुरक्षित हैं। मैं इस स्थानके लोगोंका विश्वास करता हूँ—यही मार्ग मुझे उत्तम प्रतीत होता है।" तारीख़ ३० मईके पत्रमें कमिश्नर साहबने फिर यह लिखा कि "यहाँ अब तक शांति है। फ़ौजके सब लोग दृढ़ हैं।" तीसरी जूनके पत्रमें उन्होंने फिर भी यही लिखा कि "इस समय तक हम लोग यहाँ सुरक्षित हैं। सोमवारकी रातको मुझे यह ख़बर मिली कि कुछ ठाकुर लोग कोंच गाँव पर धावा करनेवाले हैं। इस विषयकी सूचना मैंने तुरंत डन्लाप साहबको दी और उस गाँवकी रक्षाके लिए कुछ फ़ौज सबेरे आठ बजे भिजवा दी। फ़ौजके वहाँ पहुँचते ही ठाकुर लोगोंका इरादा बदल गया!" इसी पत्रके अन्तमें ये महत्त्वके वाक्य लिखे हुए हैं—"कुछ लोग यह कहते हैं कि यह विद्रोह चारों ओर फैला हुआ है। उसके संबंधमें मेरी यह राय है कि झाँसीके लोग बहुत सच्चे और दृढ़-निश्चयी हैं—वे हम लोगोंसे कभी नहीं बिगड़ेंगे।" स्कीन साहबकी ये सब चिट्ठियाँ के साहबके 'सिपाही-युद्ध के इतिहासमें छपी हैं। इन चिट्ठियोंको पढ़कर किसीके भी मनमें यह शंका नहीं आ सकती कि झाँसीमें बलवेके कोई चिह्न देख पड़ते थे। इसका मुख्य कारण यही है कि झाँसीकी रानी एक कुलीन अबला स्त्री थीं, जो इस समय संसारके सब वैभवोंका त्याग कर और ईश्वर भक्तिमें लीन होकर अपनी आयुके दिन किसी तरह व्यतीत कर रही थीं। उनकी सहनशीलता और राज-भक्ति पर सब लोगोंका विश्वास था। इसी लिए झाँसीके कमिश्नर साहबको वहाँ बलवेका कुछ भय न था।

झाँसीके अँगरेज़-अधिकारियोंको इस बातका भरोसा था कि झाँसीमें किसी प्रकारका उपद्रव नहीं होगा; परंतु उन लोगोंकी असावधानीसे तारीख़ ४ जूनको एकाएक फ़ौजमें बलवेके चिह्न देख पड़ने लगे। सातवीं काली पैदल पलटनके गुरुबख्श नामके एक हवलदारने कुछ आदमियोंको अपने साथ लेकर 'स्टारफ़ोर्ट' में प्रवेश किया और बारूद, गोले, बंदूक आदि लड़ाईका सब सामान वहाँसे लेकर बलवेका झंडा खड़ा किया। जब यह समाचार कप्तान डन्लाप साहबको मालूम हुआ तब उन्होंने अपनी बची बचाई फ़ौज इकट्ठी करके स्टार-फोर्ट पर धावा करनेका निश्चय किया; परंतु वहाँ तो लड़ाईका सब सामान और ख़ज़ाना विद्रोहियोंने पहले ही अपने अधीन कर लिया था। वहाँके पहरेवाले भी विद्रोहियोंमें शामिल हो गये थे। इस प्रकारके भयानक चिह्न देखकर सब अँगरेज़ छावनीसे निकलकर शहरमें आये और वहाँसे कमिश्नर साहबकी सूचनाके अनुसार वे लोग अपने लड़कों-बच्चोंको लेकर क़िलेके भीतर चले गये। डन्लाप साहबने अपनी मददके लिये नौगाँवकी छावनीसे कुछ फ़ौज भेज देनेके लिये वहाँके फ़ौजी अफ़सरको एक पत्र लिखा। यही पत्र झाँसीके बलवेको साबित करता है। इसके सिवा वहाँके अँगरेज़ोंका और कोई भी दूसरा सबूत नहीं है।

दूसरे दिन अर्थात् तारीख़ ५ जूनको सबेरे कप्तान स्कीन और मिस्टर गार्डन साहब डिप्टी कमिश्नर डन्लाप साहबसे मिलनेके लिये छावनी आये। वे डन्लाप साहबके साथ गुप्त रीतिसे कुछ बात-चीत करके क़िलेमें चले गये। डन्लाप साहबने छावनीमें बारूद गोलोंका कुछ प्रबंध किया और अपने लिखे हुए पत्र रवाना करनेके लिये वे डाकघरमें गये। वहाँसे टेलर साहबको अपने साथ लेकर वे परेड पर आये। ज्यों ही वे वहाँ पहुँचे त्योंहीं बार-

१२वीं पैदल-पलटनके सिपाहियोंने इन दोनोंको गोलीसे मार डाला ! इस तरह झाँसीके फ़ौजी अफ़सर कप्तान डन्लाप साहबका खेद-कारक अंत हुआ ! अँगरेज़ी-फ़ौजके मुख्य अधिकारीको मारकर विद्रोहियोंने बड़ा आनंद मनाया और उन लोगोंने और भी कई अँगरेज़ोंका बध किया ।

इस समय जो यूरोपियन और यूरेशियन अफ़सर अपनी जान बचानेके लिये क़िलेमें भाग गये थे उनकी संख्या लगभग ४५ के थी स्कीन साहबने इन सब लोगोंको बन्दूक, गोली, बारूद आदि लड़ाईका सामान देकर अपनी अपनी प्राण-रक्षाके लिए तैयार रक्खा । क़िलेके दरवाजे बड़ी मज़बूतीके साथ बंद कर दिये गये । जब विद्रोहियों ने झाँसी की छावनी को तहस-नहस करके क़िले पर हमला किया तब क़िलेके भीतर रहनेवाले अँगरेज़ोंने उन लोगों को वहाँ से हटाने का खब यत्न किया । परंतु विद्रोहियोंकी अधिक प्रबलता देखकर उन लोगोंने क़िलेसे स्काट और पर्सैल बंधुओंको महारानी लक्ष्मीबाईके पास सहायता माँगनेके लिये भेजा । दुर्भाग्य-वश विद्रोहियों ने उनको रास्ते हीसे पकड़ कर मार डाला !

कमिश्नर स्कीन साहबने, नागोद, ग्वालियर आदि स्थानोंसे अपनी सहायता के लिए सेना भेज देने के विषयमें पत्र लिखे थे; परंतु तारीख़ ७ जून तक कहींसे कुछ मदद न पहुँची । उसी दिन दोपहर को विद्रोहियोंने क़िले पर ज़ोर से धावा किया । क़िलेके भीतर रहनेवाले अँगरेज़ोंने भी अपनी रक्षाके लिये बहुत मेहनत की । सुनते हैं कि अँगरेजों की स्त्रियाँ बन्दूक भर-भर कर आद-मियोंको देती जातीं थीं । अँगरेज़ लोग युद्ध में निपुण थे । उन लोगोंकी गोलियोंकी मारसे विद्रोहियोंको पीछे हटना पड़ा; परंतु विद्रोहियोंकी संख्या अधिक थी । इसलिए वे साहस करके आगे बढ़नेका यत्न करने लगे । इस तरह साहस और दृढ़तासे युद्ध करने

पर भी क़िलेके भीतर विद्रोहियों का प्रवेश होने न पाया। तब वे लोग किसी गुप्त मार्गसे क़िलेके भीतर घुसनेका उद्योग करने लगे झाँसीके असिस्टेंट सर्वेअर लेफ्टनेन्ट पाविस साहब क़िलेके भीतर आते समय अपने साथ कुछ विश्वास-पात्र सिपाहियोंको भी ले आये थे। वे लोग विद्रोहियों से मिलकर उनको क़िलेके भीतर आने का गुप्त मार्ग दिखलाने लगे। यह समाचार पाकर पाविस साहबने उनको रोकना चाहा; परंतु इतने हीमें उन सिपाहियोंमेंसे एक सिपाहीने उनको तुरंत ही मार डाला!

विद्रोहियोंकी सेना जान पर खेल कर बड़ी शूरतासे लड़ रही थी और एक-एक क़दम क़िलेकी ओर बढ़ती चली जाती थी। उसने क़िलेके दरवाज़े खोलने का बहुत उद्योग किया; परंतु वह सफल न हुआ। गार्डन साहब क़िलेके भीतरकी खिड़कियोंमेंसे बाग़ियों पर गोलियोंकी वृष्टि कर रहे थे। उनका चेहरा बाग़ियोंकी सेनामें सब लोग पहचानते थे। उनमेंसे एक बाग़ीने गार्डन साहब पर तीर चलाया जिससे उनका देहान्त हो गया! उनकी मृत्युसे क़िलेमें हलचल मच गई। चारों ओर हाहाकार सुनाई पड़ने लगा। क़िलेके भीतर सब लोग अधीर और हताश होने लगे। ठीक इसी समय गोली-बारूद आदि लड़ाईका सामान भी उनके पास चुक गया। विद्रोहियोंके मुखिया कालेखाँ रिसालदार और अहमद-हुसेन तहसीलदारने अप्रतिम वीरतासे युद्ध करके क़िलेका बहुत बड़ा भाग हस्तगत कर लिया। अँगरेज़ोंने तब निराश होकर प्राण-रक्षाके हेतु सुलह का प्रस्ताव किया।

ता० ८ जूनको सबेरे विद्रोहियोंके मुखिया आनंद मनाते हुए क़िलेके दरवाज़ेके समीप जा पहुँचे। उन लोगोंने हकीम सुले-मुहम्मद नामके एक प्रतिष्ठित रईसको अपना प्रतिनिधि बनाकर स्कीन साहबके पास भेजा। स्कीन साहब क़िलेका दरवाज़ा खोल-

कर बाहर आये और यह प्रार्थना करने लगे कि "हम लोगोंको किसी प्रकारका दुःख न देकर सागर जाने दीजिए।" बाग़ियोंके प्रतिनिधि हकीम साहबने कुरान की कसम खाकर यह कहा कि "आप लोग हथियार रख दें और क़िलेको खाली कर दें। आपको हम किसी प्रकारका दुःख न देंगे।" बेचारे संकटमें फँसे हुए अँगरेज़ोंने बाग़ियों के प्रतिनिधिका कहना सच मान लिया और अपने सब हथियार क़िलेमें रखकर वे बाहर निकल आये; परन्तु बड़ी लज्जा और खेद की बात है कि बाग़ियोंने अपने कुरानकी कसम खाकर अपनी की हुई प्रतिज्ञा भंग करदी! ज्यों ही अँगरेज़ लोग शस्त्र-हीन होकर क़िले के बाहर आये त्यों ही बागियोंने "दीन दीन" शब्द की प्रचंड गर्जना करके उनको घेर लिया। उस समय उन बेचारोंके मुँहसे एक शब्द भी न निकला। बाग़ी लोग उनको क़ैद करके शहर में घुमाते हुए जोगन बाग़ की ओर ले गये। शहर के बाहर पहुँचते ही कुछ सवारों ने वहाँ आकर यह संदेसा कहा कि रिसालदारकी आज्ञाके अनुसार इन सब लोगोंका वध किया जाना चाहिए। हा अनर्थ! यह कैसा क्रूर और अधम अत्याचार है! जो लोग ऐसे अधर्मी हैं कि अपनी प्रतिज्ञाका भंग करके विश्वास-घात करनेको तैयार होते हैं। उनकी नीचताका वर्णन किस तरह किया जाय! वस्तुतःवीरता विजय करनेमें है, न कि विश्वास-घात करने में। इस हृदय-भेदीप्रसंगका वर्णन "दीरानी" नामके ग्रंथमें इस प्रकार लिखा है—"प्रतिकूल और अनर्थकारी प्रभाव—खूनके प्यासे राक्षस, लूटपाट, द्वेष, निष्ठुरता और अत्याचार—से वायुमंडल दूषित हो गया था। प्रेम, दान, सहानुभूति, दया, उदारता और कृपा आदि ऊँचे भावोंकी शक्तियाँ, जो मनुष्य-जातिका दुःख हरण करके इस चञ्चल किंतु सुन्दर और आनन्ददायक संसार-यात्रामें

सुख और सहायता देती हैं, उस समय बिलकुल नष्ट हो गई थीं। उन लोगोंने असहाय और दुखित होकर अपनी आँखें इसलिए बंद कर ली थीं कि वे उन लहूलुहान और क्रूर दृश्योंको देख न सकें जो उनके सामने शीघ्र ही होनेवाले थे; और जिनको वे—भगवान् जाने किस कारणसे—रोक नहीं सकते थे।" सूरदासने यथार्थ कहा है कि "कुसमय कौन काको मीत!"

झाँसी के जेल-दारोगा (बख्शिशअली) ने अँगरेज़ोंको तीन क़तारोंमें खड़ा किया। पहलीमें पुरुषोंको, दूसरीमें स्त्रियोंको और तीसरीमें बच्चोंको। उसने अपने साथियोंको सख़्त ताक़ीद की कि 'ज्यों ही मैं स्कीन साहबका सिर उड़ादूँ त्यों ही तुम अन्य सब कैदियों को मार डालना! इस तरह उस पाषाण-हृदयी मनुष्यने स्वयं प्रथम स्कीन साहबका बध किया; और उसके साथियोंने अन्य सब लोगों का नाश किया! इस भयानक हत्याकांड का वर्णन करते जी काँपने लगता है!

इस विषयमें लोगोंका मतभेद है कि झाँसीमें कितने अँगरेज़ों का बध किया गया। अँगरेज़-इतिहासकार लिखते हैं कि इन लोगों की संख्या ६० थी, शेष लोग छावनीमें और क़िलेकी रक्षा करनेमें मारे गये। कप्तान पिंकने साहबकी रायमें इन लोगोंकी संख्या ६७थी, और जबलपुरके मेजर अर्स्किन साहबकी रायमें ७४, इन्दौरके लेखमें यह लिखा है कि ५५ मनुष्य १६ स्त्रियाँ और २३ बच्चेमारे गये।

अब प्रश्न यह है कि इस भयंकर कृत्यमें महारानी लक्ष्मीबाई शामिल थीं या नहीं? क्या झाँसीके विद्रोहियोंके साथ उनका कुछ सम्बन्ध था? क्या बागियोंके साथ मिलकर उन्होंने अँगरेज़ सरकारको हानि पहुँचानेका उद्योग किया था? क्या उन्हींकी अनुमतिसे झाँसीमें अँगरेज़ोंका बध किया गया? इस विषयका निर्णय करना जितना महत्वका है उतना ही कठिन भी है। इसमें

संदेह नहीं कि किसी विलक्षण दैवयोगसे (जिसका विवेचन आगे किया जायगा) इस बलवे के बाद ही महारानी लक्ष्मीबाईको अँगरेज़ों के साथ युद्ध करना पड़ा था। झाँसी का बलवा और उसके बाद महारानी लक्ष्मीबाई का अँगरेज़ों से लड़ना इन घटनाओं का सम्बन्ध एक ही व्यक्ति से लगाकर विदेशी लेखकों ने लक्ष्मीबाई के सम्बन्ध में बड़ी भूल की है। प्रायः सब अँगरेज़-अधिकारियों की यही राय है कि महारानी लक्ष्मीबाई प्रथम ही से बलवेमें शामिल थीं और उन्होंने झाँसीमें अँगरेजोंका वध करवाया था! अतएव हमारा कर्त्तव्य है कि इस विषयका सच्चा अनुसंधान करके अच्छी तरह विवेचना की जाय और फिर देखा जाय कि उक्त दोषारोपणमें कितना सत्यांश है।

हम पहले अँगरेजोंकी ओरके कथनका उल्लेख करते हैं। The Indian Empire नामके ग्रन्थमे रावर्ट मान्टगोमरी मार्टिन साहब लिखते है।—†

"वे (महारानी लक्ष्मीबाई) मूर्ति-पूजक थीं। अपराधों को क्षमा करना उनके धर्म हीमें नहीं बतलाया गया। दत्तक और उत्तराधिकार विषयक हिन्दू धर्मशास्त्रके नियमोंके भंगसे उन्होंने अपनी बहुत हानि समझी; और इसीसे दुखित होकर

†"She was a heathen the forgiveness of injuries was no article in her creed; and believiug herself deeply injured by the infraction of thh Hindu Laws of adoption and inheritance, she threw aside every consideration of tenderness for sex or age, and committed herself to a deadly struggle with the supreme Covernment by an act, for hwich, as she must have well-known, her own lite would, in all human probability, pay the forfeit."

उन्होंने लिंग और वय का कुछ भी विचार अपने मनमें नहीं किया और सर्वशक्तिमान् सरकार से भयंकर युद्ध आरंभ कर दिया। वे इस बातको अवश्य जानती थीं कि इस कार्यमें उन्हें अपने प्राणोंकी आहुति देना पड़ेगी।"

क्या मूर्ति-पूजकोंके धर्म में क्षमा कोई चीज़ ही नहीं है? क्या अँगरेज़ लोग, जो ईसाई मतको मानते हैं, अपने धर्म-ग्रन्थ (बाइबल) के अनुसार पूरे क्षमाशील हैं? क्या राबर्ट मान्ट-गोमरी मार्टिन साहब हिंदूधर्मके तत्वोंके ज्ञाता है? यद्यपि ये प्रश्न मनमें उठते हैं, तथापि उनकी विवेचना इस स्थान में नहीं की जा सकती। स्मरण रहे कि उक्त मत पक्षपात-रहित नहीं है। यही मत प्रायः अन्य ग्रन्थकारोंका भी है। मेलिसन साहब अपने *History of the Indian Mutiny* नामके ग्रन्थ में लिखते हैं—

"ब्रिटिश-सरकारने महारानी लक्ष्मीबाई के क्रोध और शिका-यतोंकी कुछ भी परवा न की। उन्होंने इस कारण भी यह बुरा काम किया; अर्थात् उन्होंने मान-हानिके साथ बड़ी नीचता भी की। जिस समय सरकारने झाँसीका राज्य ज़ब्त कर लिया था उस समय महारानी लक्ष्मीबाईको ५००० रु० मासिक पेन्शन दी गई थी। पहले महारानीने पेन्शन लेना स्वीकार न किया; परन्तु अन्तमें उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया। जब उनसे यह कहा गया कि इसी अत्यल्प वेतनमेंसे अपने पतिका क़र्ज़ भी अदा किया जाना चाहिए तब वे कितनी कुपित हुई होंगी, इस बातको हम कल्पनासे जान सकते हैं।.........इसके अतिरिक्त और भी बहुत ज़ुल्म किया गया, जैसे हिन्दुओंकी बस्तीमें गो-बध करना और मन्दिरके नाम पर प्राचीन राजाओंके दिये हुए गाँवोंको ज़ब्त कर लेना, इत्यादि। जो लोग राज्य-परिवर्त्तनके कारण पहलेसे

अप्रसन्न थे वे अब इन अत्याचारोंके कारण और भी अधिक असंतुष्ट हुए और अँगरेज़ोंकी शिकायत करने लगे। परन्तु इस शूर प्रकृति और तेजस्विनी स्त्रीके हृदयमें जो बात सबसे ज्यादा खटकती थी वह स्वयं उसका अपमान ही था। इसलिए जब १८५७ के आरम्भमें अङ्गरेज़ों के घृणित देशी सिपाहियोंमें विद्रोहके चिह्न देख पड़ने लगे तब वह अत्यंत हर्षित होकर उन लोगोंमें शामिल हो गई।"†

---

† British Goverment regarded her anger and her remonstrances with careless indifference. They did what was even worse. They added meanness to insult. On the confiscation of the State, they had granted to the widowed Rani a pension of £ 6000 a year. The Rani had first refused, but hed ultimately agreed to accept this pension. Her indgnation may be imagined when she found herself called upon to pay. out of a sum which she regarded as a mere pittance, the debts of her late husband.........Other grievances such as the slaughter of kine amid a Hindu population and the resumption of grants made by formar rulers for the support of Hindu temples, whilst fomenting discontents of the population with thair charge of masters, formed subject for further remonstrance; but the personal indignity was that which rankled most deeply in the breast of tnis high spirited lady, and made her hail with gratitude the symptoms of disaffection which, in the early part of 1857, began to appear amongst the native soldiers of the hated English"—

प्राय: सब अङ्गरेज़-इतिहासकारोंका यही मत है कि लक्ष्मीबाईके हृदयमें ब्रिटिश-सरकारके सम्बन्धमें द्वेष भरा हुआ था; और जब सिपाहियोंने बलवा किया तब वह भी अपना बदला चुकानेका अवसर पाकर उन लोगोंमें शामिल होगईं और भयंकर हत्या करके अपने क्रोधकी शांति करने लगीं। परन्तु यह कैसे मान लिया जाय कि अँगरेज़ लेखकोंकी लिखी हुई सब बातें सत्य हैं? देखिये, पेन्शन और लक्ष्मीबाईके पतिके ऋणके विषयमें जो बातें ऊपर लिखी गई हैं वे बिलकुल निराधार हैं—उनमें सत्यका अंश कुछ भी नहीं है। लक्ष्मीबाईने अँगरेज़ों की दी हुई पेन्शनको स्वीकार कदापि नहीं किया और न उनके पतिके एक पैसाका भी ऋण था। यह बात भी ध्यानमें रखने योग्य है कि इस कथनका प्रत्यक्ष प्रमाण कुछ भी नहीं दिया गया है कि जब झाँसीमें प्रथम बलवा हुआ तब लक्ष्मीबाई अपना बदला चुकाने और अपने क्रोधकी शान्ति करनेके लिए विद्रोहियों में शामिल हुई थीं। इसी प्रकार जब अँगरेज़-ग्रन्थकारोंकी प्रत्येक बातकी जाँचकी जाती है तब यही बोध होता है कि उन सब इतिहासोंके सत्य होने पर भी जो दोष उन पर आरोपित किये गये हैं वे सप्रमाण नहीं हैं। हाँ, इसमें सन्देह नहीं कि उस समयकी बहुतसी बातोंका सम्बन्ध बलवेसे है; परंतु जब प्रत्यक्ष प्रमाणोंका अभाव है तब केवल आनुषङ्गिक बातों पर ज़ोर देकर काकतालीय न्यायसे उन बातोंका सम्बन्ध लक्ष्मीबाईसे लगाना और उनको झाँसीमें बलवा करनेका दोषी ठहराना सत्य और न्याय-सङ्गत नहीं हो सकता। जो प्रमाण मिलते भी हैं उनसे यही जाना जाता है कि लक्ष्मीबाई झाँसीके बलवेमें शामिल नहीं थीं—केवल इतना ही नहीं, किन्तु यह भी विदित हो जायगा कि लक्ष्मीबाईने उस भयानक और बिकट समयमें भी अँगरेज़ोंकी सहायता की थी।

झाँसीके कमिश्नर की रिपोर्टसे यह बात पाई जाती है कि तीसरी जून तक वहाँ बलवेके कुछ भी चिह्न नहीं देख पड़ते थे; और कमिश्नर साहबके मनमें झाँसीके लोगोंके संबंधमें, विशेषतः महारानी लक्ष्मीबाईके सम्बन्धमें, किसी प्रकारका सन्देह न था। जब सेनामें एकाएक गड़बड़ होने लगी और विद्रोहके चिह्न देख पड़ने लगे तब कप्तान गार्डन साहब और कई अँगरेज़ महारानीके पास राजमहलमें गये और उन्होंने महारानीसे यह विनयकी कि "यदि भविष्य में हम लोगों पर बुरा दिन आवे तो आप हमारी सहायता करें और झाँसीकी प्रजाको सुरक्षित रखनेके लिए हमें मदद दें।" शरणागतकी रक्षा करना ही आर्योंका परम धर्म समझकर लक्ष्मीबाईने कहा—

"इस समय हमारे पास न तो अस्त्र-शस्त्र हैं और न लड़नेवाले कोई शूर पुरुष ही हैं; तथापि मुझसे जहाँ तक हो सकेगा मैं आपकी सहायता करनेमें कोई बात उठा न रखूँगी।" इसी बात परसे अँगरेज़-अधिकारियोंने लक्ष्मीबाईको अपने पास कुछ नये शस्त्रधारी मनुष्य रखनेकी इजाज़त दी थी।

दूसरे दिन गार्डन साहब अकेले राज-महल आये और लक्ष्मीबाईसे कहने लगे कि "हम लोग तो पुरुष हैं, हमें स्वयं अपनी कुछ चिंता नहीं है; परंतु यह समय ऐसा कठिन है कि हम लोग अपनी स्त्रियों और बालकोंकी रक्षा नहीं कर सकते। अतएव आप उन्हें अपने महलमें आश्रय दीजिये"। लक्ष्मीबाईका अन्तःकरण बड़ा कोमल था। उन्होंने दयार्द्र होकर गार्डन साहबकी प्रार्थना स्वीकार की। अँगरेज़ लोगोंकी स्त्रियाँ अपने लड़कों-बच्चोंको लेकर महलमें रहने लगीं। परंतु जब बागियोंने अँगरेज़ोंको छावनीसे भगा दिया और शहरमें भी उपद्रव होने लगा तब वे लोग अपनी स्त्रियों और लड़कें-बच्चोंको क़िलेमें ले गये। उन

लोगोंके क़िलेमें चले जाने पर भी महारानी लक्ष्मीबाई उन लोगोंको गुप्त रीतिसे बार-बार धीरज दिलातीं और सहायता करती थीं। वे तीन दिन तक तीन मन गेहूँकी रोटियाँ क़िलेमें बराबर भेजती रहीं। उन्होंने क़िलेमें अँगरेजोंकी रक्षाका यथाशक्ति उत्तम प्रबंध किया।

झाँसीके बलवेमें महारानी लक्ष्मीबाईके शामिल न रहनेका और उस भयानक प्रसंगमें भी यथाशक्ति अँगरेज़ोंकी सहायता करनेका ऊपर लिखे हुए प्रमाणोंसे भी बढ़कर एक और दृढ़ प्रमाण है। झाँसीके हत्याकांडसे बचे हुए मार्टिन नामके एक साहबने आगरेसे तारीख़ २० अगस्त सन् १८८९ ई०को महारानी लक्ष्मीबाईके दत्तक पुत्र श्रीमान् दामोदरराव साहबको एक पत्रमें यह लिखा है—

"आपकी माता के साथ बड़ी क्रूरता और अन्यायका बर्ताव किया गया। उनके सम्बन्धमें सच्चा हाल जैसा मैं जानताहूँ वैसा कोई नहीं जानता। सन् १८५७ ई० के जून महीनेमें झाँसीमें यूरोपियन लोगोंका जो बध हुआ उससे उन बेचारीका कुछ भी सम्बन्ध न था। केवल इतनाही नहीं; किन्तु जब अँगरेज़ लोग क़िलेमें चले गये तब उन्होंने दो दिन तक उनको भोजन दिया। उन्होंने हमारी सहायताके लिए १०० हथियार-बंद सिपाही करेरासे लाकर क़िलेमें भेज दिये। हम लोगोंने इन सिपाहियोंको दिन भर क़िलेमें रखकर शामको वापस भेज दिया। इसके बाद लक्ष्मीबाईने मेजर स्कीन और कप्तान गार्डनको यह सलाहदी कि आप लोग यहाँसे भाग कर दतियाके राजाके आश्रयमें रहिए; परंतु उस समय उन लोगोंने यहभी नहीं किया। अन्तमें हमारी सेना (पुलिस और जेल) के लोगोंने ही उन सब लोगोंका बध किया" !!*

* "Your poor mother wos very unjustly and cruelly dealt with—and no one knows her true case as I do. The

यह पत्र एक ऐसे यूरोपियनका है जो झाँसीके बलवेके समय स्वयं वहाँ उपस्थित था। क्या इस परसे यह बात सिद्ध नहीं होती कि महारानी लक्ष्मीबाई झाँसीके बलवेके विषयमें सर्वथा निर्दोष हैं? यदि और भी किसी प्रमाणकी आवश्यकता हो तो सुप्रसिद्ध इतिहासकार के साहबके निम्नलिखित वाक्यों पर ध्यान दीजिए—

"मुझे यह बात दृढ़ प्रमाण-सहित विदित हुई है कि इस बधके समय महारानीका एक भी नौकर वहाँ उपस्थित न था। यह कार्य मुख्यतः हमारे पुराने अनुयायियोंका ही प्रतीत होता है। इर्रेग्युलर केवलरीने हत्याकी आज्ञा दी और हमारा जेल-दारोगा उन हत्यारोंका अगुआ था।"†

---

poor thing took no part whatever in the massacre of the European residents of Jhansi iu June 1857. On the contrary she supplied them with food for two days after they had gone into the Fort -- got 100 match-lock men from Kurrura, and sent them to assist us, bbt after being kept a day in the Fort, they were sent away in the evening. She then advised Major Skene and Captain Gordon to fly atonce to Dattia and place themselves under theRaja's protection, but this even they would not do; and finally they were all massacred by our own troops -- the Police, Jail and Cas: Este."

" †*I have been informed, on good authority that none of the Ranee's servants were present on the occasion of the massacre. It seems to have been mainly the work of our own old followers. The Irregular cavalry issued the bloody mandate and our Gaol Darogna was foremost in the butchery.*"

इन प्रमाणोंसे यह बात निर्विवाद सिद्ध होती है कि महारानी लक्ष्मीबाई झाँसीके बलवेके सम्बन्धमें सर्वथा निर्दोष है।

झाँसीके बाग़ियोंके भयंकर और क्रूर कर्मको देखकर यही प्रतीत होता था कि महाप्रलय हो रहा है। इतने अनुचित काम करने पर भी जब उन लोगोंकी रक्त-पिपासा और धन-तृष्णा तृप्त न हुई तब उन लोगोंने शहरमें जाकर राजमहलको घेर लिया और महारानी लक्ष्मीबाई को यह सँदेसा भेजा कि "हम लोग दिल्ली जाना चाहते हैं, ख़र्चके लिए तीन लाख रुपये दो; नहीं तो तोपसे तुम्हारा महल हम अभी उड़ा देंगे"। यह सुनकर राजमहलमें सब लोग बड़े भयभीत हुए। जब यह समाचार लक्ष्मीबाईको विदित हुआ तब उन्होंने अत्यंत नम्रताके साथ बाग़ियोंको यह कहला भेजा कि "इस समय हमारा सब राज्य अँगरेज़ोंके अधीन है; हमारे पास धन नहीं है। हमारा एक-एक दिन बड़े कष्टसे बीतता है। ऐसी अवस्थामें हमको दुखित करना आप लोगोंको शोभा नहीं देता"। इन मधुर और विनीत शब्दोंको सुनकर निठुर-से-निठुर मनुष्यको भी दया आजाती; परन्तु उन दुष्ट पाषाण-हृदयी बाग़ियोंके मनमें दया न आई; वे संतुष्ट न हुए। उन्हें तो धनके लालचने घेर रक्खा था। वे बिना धन लिये वहाँसे हटतेही न थे। अन्तमें लक्ष्मीबाईने हार मानकर बाग़ियोंसे अपना पिंड छुड़ानेके लिये एक लाख रुपयोंके अपने आभूषण उन्हें दे दिये। बाग़ी लोग प्रसन्न होकर "ख़ल्क ख़ुदाका, मुल्क बादशाहका, अमल महारानी लक्ष्मीबाईका" कहते हुए दिल्लीकी ओर चले गये। उस समय झाँसीमें दुर्भाग्य-वश एक भी अँगरेज़ अपने राज्यका प्रबंध करनेके लिए न था। ऐसी अवस्थामें महारानी लक्ष्मीबाईने फौजदारी महकमेके शिरस्तेदार पंडित गोपालराव लघाटे, माल महकमेके शिरस्तेदार यहसानअली और कमिश्नरीके

शिरस्तेदार आदि बड़े-बड़े सरकारी अफ़सरोंको अपने पास बुलवा-कर उनसे पूछा कि अब क्या करना चाहिए? उन लोगोंने यह सलाह दी कि सागरमें अब तक बलवेके कोई चिह्न नहीं दिखाई देते; वहाँके अँगरेज़ अधिकारियोंको झाँसीके बलवेकी ख़बर दे देनी चाहिए; जिससे वे सचेत हो जाँय और पहलेहीसे अपनी रक्षाकी उत्तम व्यवस्था करलें। उन लोगोंने यह भी सलाह दी कि सागरके कमिश्नरसे यह पूछा जाय कि अब झाँसीका बंदोबस्त किस तरह किया जाय। इसी आशयका पंडित गोपालराव शिरस्तेदारका लिखा हुआ एक पत्र सागरके कमिश्नरके पास भेजा गया, जिसका परिणाम यह हुआ कि वहाँके अँगरेज़ोंने बहुत उद्योग करके सागरमें बलवा होने नहीं दिया; और जब तक झाँसी में कोई यूरोपियन अफ़सर भेजा न जाय तब तक उस प्रांत के शासन का भार महारानी लक्ष्मीबाई को सोंप दिया गया।

इस समय लक्ष्मीबाईके पास राज्य-सम्बन्धी विषयों पर विचार करनेवाले राजनीति-निपुण और राज्यका प्रबंध करनेवाले कुशल कार्यकर्ता लोगोंका अभाव था। उनके सब प्राचीन सेवक झाँसीसे चले गये थे। यद्यपि लक्ष्मीबाई स्वयं बड़ी चतुर और बुद्धिमती थीं तथापि वे राज-महलोंमें रहनेवाली एक अबला ही थीं। राज्य-सम्बन्धी जो-जो बातें वे स्वयं अपनी बुद्धिसे निश्चित करती थीं और जिन-जिन बातोंकी वे आज्ञा देती थीं उनकी ठीक-ठीक कार्र-वाई, उनकी इच्छाके अनुसार, हो नहीं पाती थी। यदि उस समय उनके पास कुछ होशियार और राजनीतिज्ञ आदमी रहते तो वे महारानीके सद्व्यवहार, मित्रभाव और शुद्ध हृदयका परिचय भारत-सरकारको उचित समय पर अवश्य दिलाते और उनके सम्बन्धमें सरकारकी बुरी राय होने न देते; और यदि हो भी जाती तो वे उसको दूर करनेका यथोचित उद्योग करते। परंतु दुर्भाग्यसे

उनके पास उस समय राज-काजमें प्रवीण अच्छे आदमी न थे । जो दो-चार आदमी थे—जैसे उनके पिता मोरोपंत तांबे, लक्ष्मणराव बांडे और अन्य रिश्तेदार आदि—उन्हें राज्य-प्रबंधका कुछ भी अनुभव न था । सारांश यह कि लक्ष्मीबाईके शुद्ध हेतुके अनुसार काम करनेवाले कोई अच्छे आदमी उनके पास नहीं थे । उस समय झाँसी-दरबारमें कुछ तो ओरछा आदि देशी रियासतोंसे आये हुए राजद्रोही, अनुभव-हीन और स्वार्थी-लोग थे और कुछ महारानी लक्ष्मीबाईके रिश्तेदार थे, जिन्हें राज्य-प्रबंधकी जवाबदेही अथवा जिम्मेदारीका कुछ भी ज्ञान न था। लक्ष्मीबाईके मनमें यही विश्वास था कि मेरी इच्छा और आज्ञाके अनुसार दरबारके लोग अँगरेज़-सरकारको पत्र आदि भेजते होंगे। परंतु जब हम उस समयके दरबारियोंकी स्थितिका विचार करते हैं तब यही कहना पड़ता है कि लक्ष्मीबाईकी इच्छा और आज्ञाके अनुसार कोई कार्रवाई ठीक-ठीक न होती थी। इसमें सन्देह नहीं कि लक्ष्मीबाईने अँगरेज़ अफ़सरोंको कई बार खलीते भेजकर अपनी मित्रता, सद्व्यवहार और शुद्ध हृदयका परिचय दिलानेका बहुत उद्योग किया। उन्होंने अपने मंत्रियोंसे कई बार कहा था कि अँगरेज़-अफ़सरोंको पत्र-द्वारा इस बातकी सूचना दी जाय कि मैं अँगरेज़ों हीकी आज्ञासे झाँसी-राज्यका प्रबंध कर रही हूँ। कप्तान पिंकने साहब, जो बलवेके बाद झाँसीके कमिश्नर थे, इस विषयमें लिखते हैं।—

" विश्वास-योग्य प्रमाणसे यह बात सिद्ध हुई है कि उस समय महारानी लक्ष्मीबाईने जबलपुरके कमिश्नर और अन्य अँगरेज़-अधिकारियोंको खलीते भेजकर अँगरेज़ोंके बधके विषयमें अपना खेद प्रकट करके यह लिखा था कि उस अधम कार्यसे मेरा कुछ भी संबंध नहीं है । सरकारका स्नेह-सम्पादन करनेका उचित उद्योग

करके उन्होंने स्पष्ट रीतिसे यह सूचित किया था कि झाँसीमें सरकारी राज्याधिकार पुनः प्रस्थापित होने तक ही मैंने इस प्रांतका प्रबंध अपने हाथमें लिया है।" †

कप्तान पिंकने साहब ब्रिटिश-सरकारके एक विश्वास-पात्र और ऊँचे दर्जेके अफ़सर थे। यह संभव नहीं है कि वे अपने लेखमें मिथ्या बातें लिखेंगे। आश्चर्य यह है कि मेलिसन आदि अनेक इतिहासकारोंने इस लेखका ज़िक्र अपने ग्रन्थोंमें कहीं भी नहीं किया है। कप्तान पिंकने साहबके लेखकी सत्यताका एक और अत्यंत दृढ़ प्रमाण है। मार्टिन साहब, जिन्होंने स्वयं अपने हाथसे महारानी लक्ष्मीबाईके खलीते अँगरेज़ोंको दिये, लिखते हैं—

"महारानीने जबलपुरके कमिश्नर कर्नल इकसाइन और आगरेके चीफ़ कमिश्नर कर्नल फ्रेज़र साहबको खलीते भेजे। ये खलीते मैंने अपने हाथसे उन्हें दिये; परंतु कुछ लाभ न हुआ! झाँसी एक मसलके समान बदनाम हो गई थी और बिना पूछ-पाछके ही वह अपराधी ठहराई गई!" ‡

उक्त लेखों से महारानी लक्ष्मीबाईके शुद्ध-हृदयका पूरा परिचय मिलता है। यह हम लोगोंके दुर्भाग्यकी बात है कि उस

---

† "It is stated on the most trustworthy authority, that at the same time, she endeavoured to keep termes with our Government, by writing to the Commissioner of Jubbalpoor and to others, lamenting the massacre of our countrymen, stating she was in no way concerned in it, and declaring that she only held the Jhansi District till our Government could make arrangements to re-occupy it."

‡ "She sent Kharreetas to Colonel Erksine at Jubbalpore, to col. Fraser, Chief Commissioner of Agra, which I

समयके अँगरेज़-अफ़सरोंने बिना कुछ समझे-बूझे और बिना कुछ पूछ-पाछ किये ही एक हिंदू-राजघरानेकी अबला स्त्रीको जो सदा ब्रिटिश-सरकारके स्नेह रखनेका यत्न करती थी, दुष्ट बागियों और हत्यारोंकी पंक्तिमें बैठा दिया! इसी मिथ्या-भ्रमके वश होकर अँगरेज़ोंने निरपराधिनी लक्ष्मीबाईके साथ घोर संग्राम करनेका निश्चय किया! जब हम इस बात पर ध्यान देते हैं कि महारानी लक्ष्मीबाई अँगरेज़ोंके विरुद्ध नहीं थीं; किन्तु वे अँगरेज़ों हीकी आशासे और अँगरेज़ों हीके लिए झाँसीके राज्यका प्रबंध कर रही थीं; और इस बातकी सूचना भी वे समय-समय पर पत्र लिखवा कर सरकारको दे दिया करती थीं; तो भी उनकी सदिच्छा फली-भूत न हुई—उनसे शुद्ध-हृदय और सरल-व्यवहारका परिचय अँगरेज़-सरकारको न मिला—उन्हें अपने निष्कपट-श्रमका उचित-फल प्राप्त न हुआ—और अन्तमें प्रबल अँगरेज़ोंसे युद्ध करना पड़ा। तब यही कहा जा सकता है कि दैवकी गति विलक्षण है—भावी बलवान है!

जब झाँसीमें कुछ समय तकके लिये ब्रिटिश-राज्य-रवि अस्त हो गया तब चारों ओरसे उस प्रांत पर आक्रमण होने लगा। ब्रिटिश-शत्रुओंका दमन करनेके लिए महारानी लक्ष्मीबाईको नई सेना रखनी पड़ी। झाँसीके महाराज गंगाधररावके स्वर्गवासी हो जाने पर उनके वंशका सदाशिव-नारायण नामका कोई पुरुष अपनेको गद्दीका वारिस बतलाकर राज्याधिकार पानेका प्रयत्न बहुत दिनोंसे कर रहा था। यह मौक़ा पाकर उसने कुछ फ़ौज

---

handed to him with my own hand, to hear her explanation but --- No! Jhansi had been a byword and was condemned un-heard!!"

इकट्ठी की और ता० १३ जून १८५७ ई० को झाँसीसे तीस मीलकी दूरी पर करेराके क़िले पर हमला किया। उसने अँगरेज़ोंके थानेदार और तहसीलदारको वहाँसे मार भगाया और क़िलेको अपने अधिकारमें कर लिया। वहाँ उसने आसपासके ठाकुर लोगों पर ज़ुल्म करके उन लोगोंसे धन वसूल करना भी आरंभ किया; और बड़ी धूमधामके साथ अपना राज्याभिषेक उत्सव करके "महाराज सदाशिवराव-नारायण" की पदवी धारण की; और यह प्रसिद्ध किया कि मैं झाँसी-राज्यका सच्चा अधिकारी हूँ। उसने अपने नामसे आज्ञा-पत्र प्रकाशित किये और गाँव-गाँवमें अपने राजा बननेका समाचार पहुँचाया। आसाढ़ बदी अष्टमी संवत् १९१४वि० को राजपुरके थानेदार गुलामहुसेनको उसने यह आज्ञा-पत्र भेजा कि 'हमने तुमको राजपुरका थानेदार नियत किया है; तुम गाँव-गाँवमें यह ज़ाहिर कर दो कि 'महाराज सदाशिवराव झाँसीकी गद्दी पर विराजमान हुए हैं'। थानेदारने इस आज्ञाको न माना। तब आसाढ़ बदी १० का उसने यह आज्ञा दी कि गुलामहुसेन अपने पदसे अलग कर दिया जाय और उसकी जायदाद ज़ब्त कर ली जाय। इस तरह उसके अत्याचारोंसे सब प्रजा दुखित हो गई। जब यह समाचार महारानी लक्ष्मीबाईको मालूम हुआ तब उन्होंने इधर उधरसे फौज इकट्ठी करके झाँसी राज्यकी रक्षाके लिए करेरा पर चढ़ाई कर दी। सदाशिवरावने वहाँसे भागकर महाराजा सेंधियाके राज्यान्तर्गत नरवरमें आकर अपनी जान बचाई। वह वहाँसे फिर भी झाँसीका राज्य पानेका उद्योग करने लगा। इसबार महारानी लक्ष्मीबाईने उसको पकड़कर झाँसीके क़िलेमें कैद कर और ब्रिटिश-सरकारके एक शत्रुका नाश करके झाँसी प्रान्तकी रक्षा की।

इस झगड़ेसे महारानीको अवकाश मिलने न पाया था कि

ओरछा राज्यके दीवान नत्थेखाँने २० हजार सिपाहियोंको साथ लेकर झाँसी पर चढ़ाई कर दी। उस समय महारानीसे पास फौज बहुत थोड़ी थी। अतएव उन्होंने सेंट्रल इंडिया (मध्यभारत) के पोलिटिकल एजेंटको पत्र-द्वारा सब हाल लिखवा भेजा और उनसे सहायता माँगी; परंतु पत्र लेजानेवाले दूतको नत्थेखाँके आदमियोंने रास्ते हीमें मार डाला! आस-पासके किसीकी भी सहायता न पाकर वे अपने मनमें कुछ घबड़ाने लगीं; परंतु उन्होंने ऐसे कु-समयमें भी साहसका परित्याग नहीं किया। ब्रिटिश-सरकारकी सेवा और झाँसी-प्रांतकी रक्षाके लिए वे स्वयं उद्योग करने लगीं। उधर नत्थेखाँने महारानीको यह संदेसा भेजा कि "तुम्हारा जो आदर सम्मान ब्रिटिश-सरकार करती है वैसा ही हम करनेको तैयार हैं। तुम झाँसीका क़िला और शहर हमारे सपुर्द कर दो"। यह सँदेसा सुनते ही महारानीको बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ; उनकी आँखें लाल हो गईं और मुख पर ललिमा छा गई। वे थोड़ी देर तक प्रज्वलित क्रोधाग्निसे अपने मनको जलाती रहीं; और फिर कुछ शांत होकर बड़े गम्भीर स्वरसे अपने कर्मचारियोंसे पूछने लगीं कि इस विषयमें आप लोगोंकी क्या राय है। कर्मचारियोंने नत्थेखाँकी सेनाका बल अधिक देख भतभीत होकर बड़ी नम्रतासे कहा कि इस समय शत्रुकी आज्ञाको मानकर युद्धसे मुख मोड़ना ही हितकारी जान पड़ता है। अपने कर्मचारियोंकी यह सम्मति सुनकर लक्ष्मीबाईका मन और भी संतप्त हुआ। बोलीं—"धिक्कार है तुम्हारे मानुषी जीवनको! मैं तो स्त्री-जाति हूँ, तो भी अपने साहस और धैर्यके बल पर अपने कर्तव्य-कर्मका परित्याग करना नहीं चाहती; और तुम पुरुष होकर ऐसे कायरताके वाक्य मुखसे निकालते हो! इस असार संसारमें सभीको एक दिन मरना

है। यदि हम अपने राजके काम आवें और उस कर्तव्य-यज्ञमें हमारा मानवी जीवन भी समाप्त हो जाय तो क्या हम इस लोक और परलोकमें यशस्वी न होंगे ? मेरी तो इच्छा कभी युद्धसे पराङ्मुख होनेकी नहीं है।" वीर-बालाके इन वाक्योंको सुनकर कर्मचारीगण बहुत लज्जित हुए। तब महारानी लक्ष्मीबाईने नत्थेखाँको यह कहला भेजा कि "प्रबल अँगरेज़-सरकारका आज्ञासे मैं इस राज्यका प्रबंध कर रही हूँ। आप जैसे शूर पुरुषोंको स्त्रियोंके साथ छेड़-छाड़ करना उचित नहीं है। यदि तुम अपना हठ न छोड़ोगे तो याद रक्खो कि मैं परम-पराक्रमी शिवरावभाऊकी 'बहू' हूँ"। नत्थेखाँ जयकी आशासे उन्मत्त हो गया था। जब उसको यह समाचार विदित हुआ कि महारानी लक्ष्मीबाई युद्ध करनेको तैयार हैं तब उसने क्रोधित होकर अपनी सेनाको क़िले पर धावा करनेकी आज्ञा दे दी।

इधर महारानी लक्ष्मीबाईने भी झाँसी-प्रांतके बड़े-बड़े ठाकुर और बुन्देले जागीरदारोंको निमंत्रित करके राज महलमें एक दरबार किया। दीवान जवाहरसिंह, कटीलेवाले पँवार, दीवान दलीपसिंह, ओरछाके राजासे दामाद, दीवान रघुनाथसिंह आदि प्राचीन सरदारोंके आने पर महारानीने कहा कि "आप लोग ओरछाके राजाके सम्बन्धी और झाँसीकी गद्दीके ताबेदार हैं। आप लोगोंको इस कु-समयमें मेरी सहायता करनी चाहिए"। इस पर लोगों ने कहा कि झाँसी-राज्य ब्रिटिश-सरकारके अधीन है। इस कारण इसके संरक्षणार्थ सहायता करना हमारा कर्तव्य है। हम हर तरह सहायता देने को तैयार हैं। जब तक हमारे शरीरमें प्राण हैं तब तक हम युद्ध-क्षेत्रसे नहीं हट सकते"। यह सुनकर महारानीको बड़ा धैर्य हुआ और वे प्रसन्न होकर बोलीं कि आप सरीखे क्षत्रिय वीरोंकी सहायतासे ही मुसलमानी राज्यमें अकबर बादशाहने

सारेभारतको अपने अधीन कर लिया था। इसमें संदेह नहीं कि ब्रिटिश सरकार भी आपही के सहायतासे विजयी हुई और होगी। अब आप लोग युद्ध के लिए समान इकट्ठा कीजिए।

महारानी लक्ष्मीबाईने पुरानी तोपोंको, जो ज़मीनमें गड़ी हुई थीं, बाहर निकलवा कर दुरुस्त करवाया और उन्हें क़िलेके बुर्जों पर रखवाया। बारूद-गोली बनानेका एक कारखाना खोला गया, जिसमें बड़ी शीघ्रतासे युद्ध की सामग्री तैयार होने लगी। ठाकुर और बुन्देले सरदारोंकी सेना भी वहाँ आ पहुँची। प्रातःकाल होते ही महारानीने दीवान जवाहरसिंह कटीलेवालेको रण-कंकण बाँधकर सेनापति नियत किया। लक्ष्मीबाई भी स्वयं मरदानी पोशाक़ पहने, सिरमें साफा बाँधे, कमर में तलवार लटकाये, गले-में मोतियोंका हार पहने क़िलेके मुख्य बुर्ज पर जा पहुँचीं और वहाँ उन्होंने पेशवाओंके समयका प्राचीन झंडा और ब्रिटिश सरकारका दिया हुआ "यूनियन जैक" नामका झंडा खड़ा किया।

नत्थेखाँ की सेना क़िलेके दक्षिण ओर से आने लगी। ज्यों ही वह तोपके गोलों की मारके भीतर पहुँची त्यों ही महारानी ने अपने चतुर गोलंदाज़ गुलाम ग़ौसखाँको तोप दागने की आज्ञा दी। इन गोलोंकी मार नत्थेखाँकी फौज सह न सकी। व्याकुल होकर उसके पैर उखड़ गये और वह पीछे हटने लगी। इस तरह एक असहाय स्त्री से हार खाकर नत्थेखाँ बहुत लज्जित हुआ। तब उसने रातको क़िले की ओर छः दरवाज़े पर चार तोपों का निशाना लगाया और अपनी सेना को चार भाग करके झाँसीकी सेना पर हमला किया। जब ओरछा-दरवाज़े पर लगातार गोले बरसनेसे उस के टूटने का कुछ सन्देह होने लगा तब महारानी लक्ष्मीबाई शीघ्रही दरवाज़ेके पास आईं और सिपाहियों को शाबाशी देकर दृढ़तासे युद्ध करनेके लिए उन्होंने उत्साहित किया। सिपाहियों ने भी बड़ी

बहादुरी दिखाई। उन्होंने शत्रुओंको दरवाज़ेके भीतर घुसने न दिया। इतनेमें महारानीके विश्वास-पात्र शूर सरदार लाला भाउ-बख्शीने झाँसीकी विख्यात तोप कड़क-बिजलीको बुर्ज पर चढ़वाया। इस तोपसे गोले छूटते ही शत्रुकी सेना तितर-बितर हो गई और अपनी सब तोपोंको रणभूमिमें छोड़कर भागने लगी! इसके बाद भी कई दिनों तक युद्ध होता रहा; परन्तु नत्थेख़ाँकी विजय न हुई। दीवान रघुनाथसिंहने एक पहाड़ी परसे, जहाँ पर वे नियत किये गये थे, नत्थेख़ाँ की बची-बचाई फौजको तहस-नहसकर डाला। महारानीने प्रसन्न होकर रघुनाथसिंहको बहुत-कुछ पुरस्कार दिया। नत्थेख़ाँ हार खाकर रणभूमिसे भाग गया और अन्य उपायों से महारानीको तकलीफ़ देने लगा।

इस प्रकार महारानी लक्ष्मीबाईने झाँसी-राज्यपर आक्रमण करनेवाले दूसरे शत्रुका भी नाश किया और बड़ी शूरता और दक्षतासे झाँसी प्रान्तकी रक्षाकी। उन्होंने इन सब आकस्मिक घटनाओं का समाचार हैमिल्टन साहबको लिखवा भेजा; परन्तु नत्थेख़ाँने सुराग लगाकर उस पत्रके ले जानेवालेको मार डाला और एक दूसरा पत्र अपनी ओरसे लिखकर भेज दिया कि रानी लक्ष्मी-बाई बाग़ी हो गई हैं और मैं उससे युद्ध कर रहा हूँ। दैवगति भी बड़ी विचित्र है! यद्यपि महारानी लक्ष्मीबाईने ब्रिटिश सरकार की ओरसे झाँसी-राज्यका उत्तम प्रबंध किया और उसको अनेक शत्रुओंसे बचाया तथापि उनके परिश्रमका उचित फल उन्हें मिलने न पाया। महारानीके परिश्रमके संबन्धमें मिस्टर मार्टिन साहबने लिखा है :—

"इसमें संदेह नहीं कि जब बाग़ियों की सेना झाँसीसे चली गई तब उन्होंने वह प्रांत अपने अधिकारमें ले लिया; परंतु उस समय दतिया और टेहरीके राजाओंने हम लोगोंकी सहायताके

लिए एक उङ्गली भी न उठाई। यदि वे चाहते तो बहुत आसानीसे हम लोगोंकी सहायता कर सकतेथे; क्योंकि ओरछा-राज्यकी सीमा झाँसीके परेडसे सिर्फ डेढ़ मील और दतिया-राज्यकी सीमा छः मील थी। वे अपनी-अपनी सरहद्में फौज लेकर हमारी सेनाकी कार्रवाई देख रहे थे। उन दोनोंने अपनी सेना एकत्रित करके महारानी लक्ष्मीबाई पर, यह सोचकर, हमला किया कि वे युद्धके लिए तैयार न होंगी और हम आसानीसे उनका राज्य छीन लेंगे, परंतु इस वीर स्त्रीने उनके दाँत ख़ूब खट्टे किये।"†

इस अनुपम सेवाका फल यही हुआ कि अँगरेज़ोंके मनमें महारानी लक्ष्मीबाईके बाग़ी होनेका वृथा भ्रम उत्पन्न होगया!

ऊपर यह बात सिद्ध की गई है कि महारानी लक्ष्मीबाईका बाग़ियोंसे किसी प्रकारका सम्बन्ध न था। नत्थेख़ाँके साथ उन्होंने जो घनघोर संग्राम किया उससे भी यही बात सिद्ध होती है कि वे बाग़ी नहीं थी। यदि वे सचमुच बाग़ी होतीं तो उन्होंने नत्थेख़ाँ

† "After the mutinous troops had quitted Jhansi, she certainly took possession of her country when the two States, Dattia and Tehre e, who could easily have protected our people, but would not, so much as raise a finger to help us, though the Orcha boundary was not more than a mile and half from Jhansi parade grounds, and that of Dattia only 6 miles—with large bodies of armed men on their respective frontiers watching the doings of our troops. Imagining that the Ranee bing unprepared, and that they would with ease wrest her country from her hands, attacked her with their combined forces, and were, from time to time, thrashed back by that gallant Lady.

के साथ मिलकर ब्रिटिश-सत्ताका विरोध क्यों नहीं किया ? यदि वे ऐसा करतीं ता निस्सन्देह विद्रोहियोंका बल कई गुना अधिक बढ़ जाता। इसके सिवा जिस दीवान रघुनाथसिंहकी सहायतासे लक्ष्मीबाईने विजय पाई उसकी योग्यतासे भी यही बात सिद्ध होती है कि वे विद्रोहियोंसे पृथक थीं। दीवान रघुनाथसिंहने विलियम हेनरी स्लीमनके ज़मानेमें शूरताके बहुत से काम किये थे। इस लिए उनको 'ख़ास विक्टोरिया सार्टिफ़िकेट और शस्त्र-पुरस्कार' प्राप्त हुआ था। यदि उनका सम्बन्ध किसी विद्रोही से होता तो सरकार उनका आदर कदापि न करती। अतएव हमारा यह विश्वास है कि ऐसी योग्यताके सरदारने जिनकी रणभूमिमें सहायता की, वे महारानी लक्ष्मीबाई बाग़ी नहीं थीं; किन्तु वे, जैसा कि अपने खलीतामें लिखकर भेजती थीं, अँगरेज़ोंकी ओरसे ही झाँसी-राज्यकी रक्षाकर रही थीं। दुर्भाग्यवश उनके उज्वल हार्दिक विचारों का प्रभाव उस समयके अँगरेज़ अधिकारियोंके मन पर कुछ भी न हुआ और वे व्यर्थ ही बाग़ी समझी गईं।

पाँचवा अध्याय।

महारानी लक्ष्मीबाईका शासन-समय और झाँसीकी लड़ाई।

स्त्रियो हि नाम खल्वेता निसर्गादेव पंडिताः।
पुरुषाणां तु पांडित्यं शास्त्रैरेवो पदिश्यते॥

महारानी लक्ष्मीबाईने लगभग दस महीने तक अँगरेजोंकी ओर से झाँसी-राज्यका यथाशक्ति प्रबंध किया; और जब तक ब्रिटिश-सरकारका अधिकार पुनः पूर्ण रूपसे स्थापित न हो जाय तब तक उस प्रान्तको सुरक्षित रखनेका बहुत यत्न किया। इसी विचारसे उन्होंने झाँसीमें बहुतसी सेना इकट्ठी की थी। यह समय इस देशके इतिहासमें चिरकालके लिए प्रसिद्ध हो गया है। जिस समय लक्ष्मीबाईके पति जीवित थे उस समय उनके अनेक स्वाभाविक गुण प्रकट होने नहीं पाये; परन्तु अब प्रत्यक्ष राज्य-प्रबन्धका भार सिर पर आते ही उनका एक-एक गुण विकसित होने लगा। उन्होंने अल्प समय हीमें झाँसी प्रान्तका ऐसा अच्छा प्रबन्ध किया कि उनके राजकार्य-प्रवीणता, प्रजा-वत्सलता, न्याय-कुशलता, स्वधर्म-परायणता, गुण-ग्राहकता आदि अनेक गुणोंसे झाँसीकी प्रजा अत्यंत सुखी और संतुष्ट हुई। झाँसी के राज्य दरबारमें प्राचीन समय की शोभा दिखाई देने लगीऔर शहरमें विविध भाँतिके नये-नये कारखाने जारी हो गये।

कंचुकी कमर तक पहुँचती थी और सुनहरी ज़रीदार कमरपट्टेसे दृढ़ बँधी रहती थी। इस कमरपट्टेमें दो उत्तम नक़्क़ाशीदार दमशकके बने हुए और चाँदीसे मढ़े हुए पिस्तौल (तमंचे) रहते थे। इन्हींके साथ एक सुडौल पेशक़ब्ज़ भी रहता था, जिसकी तेज़ नोक विषमें बुझाई गई थी और जिसका एक छोटासा घाव प्राण-नाशक होता था। मामूली साड़ीके बदले वे एक ढीला पायजामा पहनती थीं।"

एक सुंदर गौरवर्णकी स्त्रीकी इस प्रकार विचित्र पोशाक देखकर किसी युवा पुरुषका भ्रम होता था। कभी-कभी वे स्त्रियोंकी पोशाक पहनकर कचहरीको जाती थीं; उस समय सफ़ेद चादर और चोली पहनती थीं। उनके गलेमें मोतियोंकी एक माला और उँगली में हीरेकी एक अँगूठी रहती थी। इसके सिवा उन्होंने और सब आभूषणोंका त्याग कर दिया था। दरबारमें वे किसीको देख नहीं पड़ती थीं उनके बैठनेके लिये एक अलग कमरा नियत था, जिसके दरवाज़े पर दो भालेदार हाथोंमें सोनेकी छड़ी लिये हुए खड़े रहते थे। महारानीके पास दीवान लक्ष्मणराव काग़ज़, क़लम, दावात लिये बैठे रहते थे और जो कुछ वे कहती थीं वे लिखते जाते थे। लक्ष्मीबाईकी बुद्धि बहुत तीव्र थी। उनके सामने जो मामला पेश होता था उसकी वे ख़ूब जाँच करतीं और स्वयं उसका निर्णय करतीं। उनकी न्याय-दक्षतासे सब लोग प्रसन्न थे। टेलर साहबने महारानीके सम्बन्धमें लिखा है—

"महाराष्ट्र-ब्राह्मण जातिकी स्त्री रानी लक्ष्मीबाई परदेमें रहना पसन्द नहीं करती थीं। वे प्रति दिन अपने मृत पतिकी गद्दी पर बैठतीं, रिपोर्ट और अर्ज़ियाँ सुनतीं और हुक्म देती थीं। वे अपने पदके योग्य धैर्य और निश्चय-बुद्धिसे व्यवहार करती थीं।"

महारानीकी धर्म पर भी बड़ी श्रद्धा थी। वे सदैव श्रीमहालक्ष्मी के मन्दिरमें कभी पालकी और कभी घोड़े पर चढ़कर जाया

करती थीं। राहमें जो ग़रीब भिखारी लोग मिलते थे उनको कुछ-न-कुछ दान-दक्षिणा देकर वे प्रसन्न करती थीं। उनकी उदारता और दान-शक्तिके सम्बन्धमें अनेक बातें प्रसिद्ध हैं। एक दिनकी बात है कि महारानी श्रीमहालक्ष्मीके दर्शन करके दक्षिण-दरवाज़ेसे वापस आ रही थीं उस समय हज़ारों भिखारी रास्तेमें खड़े होकर हल्ला करने लगे। तब महारानीने दीवान लक्ष्मणरावसे पूछा कि यह शोर क्यों हो रहा है। उन्होंने कहा कि ये सब भिखारी हैं; आजकल जाड़ेके दिन हैं; वस्त्र-हीन होनेके कारण उन्हें बहुत कष्ट होता है; अतएव उन लोगोंकी यह प्रार्थना है कि आप उनकी कुछ सहायता करें। यह सुनकर महारानीके कोमल अंतःकरणमें बड़ी दया उत्पन्न हुई। उन्होंने तुरंत आज्ञा दी कि शहरके सब भिखारियोंको पेट भर भोजन दिया जाय और हर आदमीको एक मिरजई, टोपी और कम्बल दिया जाय। महारानीकी आज्ञाके अनुसार झाँसीके सब भिखारियोंको भोजन और वस्त्र दिये गये। उनके शासन-समयमें कोई भी ग़रीब भिखारी दुखी न था।

महारानी लक्ष्मीबाई घोड़े पर सवार होनेमें बड़ी प्रवीण थीं। घोड़ेकी परीक्षामें तो वे अद्वितीय थीं। उस समय उनका नाम अश्व-परीक्षामें इतना प्रसिद्ध था कि जब कोई घोड़ा मोल लेता तब वह महारानीके पास उसे दिखाने अवश्य जाता था। एक दिन एक सौदागर दो घोड़े लेकर महारानीके पास आया। दोनों घोड़े देखनेमें बहुत अच्छे थे। लक्ष्मीबाईने उन घोड़ोंकी परीक्षा कर कहा कि एक घोड़ेकी क़ीमत एक हज़ार रुपये और दूसरेकी पचास रुपये हैं। यह सुनकर लोगोंको बड़ा आश्चर्य हुआ और वे इस अंतरका कारण पूछने लगे। तब लक्ष्मीबाईने कहा कि दूसरे घोड़ेकी छातीमें चोट है। यह देख घोड़ेवाला बहुत प्रसन्न हुआ। उसने महारानीकी अश्व-परीक्षाकी ख़ूब प्रशंसा की।

महारानी लक्ष्मीबाई बड़ी दयालु थीं। युद्धमें जो पुरुष घायल होते थे उनको वे स्वयं देखतीं, उनके शरीर पर हाथ फेरतीं और उनके दवा-पानी और मलहम-पट्टीका प्रबंध करती थीं। इस दयालुता हीके कारण उनकी प्रजा उन पर माताकी भाँति श्रद्धा करती थीं। लक्ष्मीबाईके चतुरता, उदारता, दयालुता आदि गुणोंको देखकर यही कहना पड़ता है कि यदि उस भयंकर विद्रोहके समय वे झाँसीकी रक्षा न करतीं और क़िलेको अपने अधिकारमें न ले लेतीं तो वह प्रांत विद्रोहियोंके हाथमें चला जाता। परंतु दैवयोग से महारानी लक्ष्मीबाईके शासन-समयका अंत और उसीके साथ उनकी जीवन-लीलाके भी समाप्त होनेका समय निकट आ गया। जिस समय वे अपने मनमें यह सोच रही थीं कि सन् १८५७ के जून महीनेमें मैंने अँगरेज़ोंकी जो सहायता की और अब तक झाँसी-प्रांतकी रक्षाके लिए मैंने जो यत्न किया है उसके पलटे अँगरेज़ी-सरकारसे मुझे कुछ पारितोषिक मिलेगा—जबलपुरके कमिश्नर, सेन्ट्रल इंडिया (मध्यभारत) के पोलिटिकल एजेन्ट और आगरेके कमिश्नर आदि बड़े-बड़े अफ़सरोंके पास भेजे हुए खलीतोंका अच्छा प्रभाव होगा—महाराज गंगाधररावकी मृत्यु-समयकी अन्तिम इच्छाके अनुसार न्यायी और उदार ब्रिटिश-गवर्नमेंटकी ओरसे बालक दामोदररावके स्वत्वोंका उचित विचार होकर उनको वंश-परम्परागत झाँसीकी गद्दी दी जायगी; ठीक उसी समय दुर्भाग्य-वश अँगरेज़ोंके मन में बिना कुछ सोच-विचारके ही यह बात समा गई कि लक्ष्मीबाई बाग़ी हैं और झाँसी सब बागियोंका एक बड़ा भारी अड्डा है। इसलिए सरकारकी आज्ञासे यूरोपीय युद्धकला-विशारद प्रसिद्ध सेनापति सर ह्यू रोज़ साहब अपनी प्रचंड सेना लेकर झाँसी पर चढ़ाई करनेके लिए रवाना हुए। जगन्नाथ पंडितके निम्न श्लोक के

भावार्थके अनुसार महारानी लक्ष्मीबाईकी सब आशाएँ नष्ट हो गई।

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं,
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पद्मजालम्।
इत्थं विचिंतयति कोशगते द्विरेफे
हा! हंत! हंत! नलिनीं गज उज्जहार* ॥

इसे देखकर यही कहना पड़ता है कि 'ईश्वरेच्छा बलीयसी!'

पिछले अध्यायमें यह बात लिखी गई है कि जबसे झाँसीका राज्य ब्रिटिश-सरकारके अधिकारमें चला गया तबसे महारानी लक्ष्मीबाईके पास कोई चतुर राजनीति-निपुण पुरुष न था। जो नये-नये आदमी महारानीके दरबारमें थे वे अल्पकालिक राज-सत्ताकी प्राप्तिसे उन्मत्त हो गये थे। यद्यपि इस बातकी ख़बर झाँसीमें पहुँच गई थी कि अँगरेज़ी सेना झाँसीकी ओर आ रही है तथापि उन लोगोंने इस बात पर कुछ भी ध्यान न दिया। दरबारमें जो एक-दो पुराने आदमी थे उन लोगोंने नये दरबारियों-को बहुतेरा समझाया और कहा कि इस समय कुछ उचित प्रबंध अवश्य करना चाहिए; परंतु उन लोगोंने किसीकी भी न सुनी। तब नाना भोपटकर नामके एक वृद्ध पुरुषने महारानीसे एकान्तमें मिलकर कहा कि "मैं झाँसीकी गद्दीका प्राचीन सेवक हूँ। यह समय बड़ा कठिन है। यह नहीं कहा जा सकता कि आपने जो खलीते समय-समय पर सरकारके पास भिजवाये थे वे सब सुर-

---

* पंकज रेणु दुरो सो दुरो चकचौंधि रह्यो मनमें अति ऊबा।
ह्वै है प्रभात जो भानु उदै अरु छूटों चहैं मद-मोहमें डूबा!
बेनी कहे सुन रे मन मूरख है भगवानको खेल अजूबा।
प्रातः गज खाय गयो नलिनी रहिगो मनको मन ही मनसूबा!

न्नित पहुँच गये होंगे। इसलिए अब अपने एक वकीलको भेजकर भारत सरकार को यह बात अच्छी तरहसे समझा दीजिए कि झाँसीके विद्रोहसे आपका कुछ सम्बन्ध नहीं है और सरकार हीकी आज्ञासे आप इस राज्यका प्रबंधकर रही हैं। यदि यह बात सरकार को विदित न होगी तो उसका परिणाम बहुत बुरा होगा।" महारानी स्वयं राज-काजमें निपुण और विचारशील थीं। उन्होंने नाना भोपटकरकी सलाह पसंद की और अपने मंत्रियोंको आज्ञा दी कि ग्वालियर और इन्दौरके पोलिटिकल एजेंटों के पास अँगरेज़ी जाननेवाला एक वकील भेजा जाय; परंतु मंत्रियोंको मूर्खता और असावधानीसे यह काम जैसा होना चाहिए था वैसा न हुआ। उन्होंने यह काम अपनी मंडलीमेंसे एक नवयुवकके सपुर्द कर दिया। ये महाशय न तो ग्वालियर गये और न इन्दौर; किन्तु सेंधिया-सरकारके ईसागढ़ नामके सूबेमें जाकर रामचंद्र बाजीरावके यहाँ ठहरे और वहाँसे झूठा पत्र व्यवहार करने लगे। खेद और दुःखकी बात है कि झाँसी-दरबार के लोगोंने अपने वकीलकी झूठी चिट्ठियों पर विश्वास कर लिया! संस्कृतमें एक कहावत है—"दुर्मंत्री राज्यनाशाय"। यही कहावत झाँसीके दरबारियोंने चरितार्थ कर दिखाई!

यद्यपि महारानी लक्ष्मीबाई अँगरेज़-सरकारकी तरफ़से झाँसी-राज्यका प्रबंध कर रही थीं तथापि उचित समय पर और उचित रीतिसे सरकारको सब हाल समझा देनेमें उनके दरबारियोंने बहुत बड़ी भूल की। इसीलिए महारानीकी राज-निष्ठा सरकारको विदित हो जाती तो वह झाँसी पर कभी चढ़ाई न करती। झाँसीमें १८५७ के जून महीनेमें जो भयंकर विद्रोह हुआ था। उसका वर्णन सुनकर अँगरेज़ अधिकारियों का मन संतप्त हो गया था। उन्होंने यही समझा कि उस हत्याकांडमें महारानी लक्ष्मीबाई अवश्य शामिल थीं। अतएव विद्रोहियों का दमन करके लिए सरकारने खूब तैयारी की।

विलायत से सर ह्यूरोज़ साहब बुलवाये गये। वे ता० १६ सितंबर सन् १८५७ को बम्बई पहुँचे। उन्होंने कमांडर इन-चीफ़ सर बेल साहब और बुंदेलखंड के पोलिटिकल एजेंट हैमिल्टन साहबकी सलाहसे झाँसी पर चढ़ाईका बंदोबस्त किया और कमांडर-इन चीफ़की आज्ञासे फ़ौजके दो भाग किये। एक भाग बंबई और मद्रासकी फ़ौज का किया गया, जिसका केन्द्रस्थान मऊमें नियत किया गया। पहले भाग पर सर ह्यू-रोज़ नियत हुए और दूसरे पर ब्रिगेडियर जनरल बिटलाक।

सर ह्यू-रोज़ साहबने अपनी सेना के दो भाग किये। पहले भागमें बंबईका तीसरा रिसाला, चौदहवीं लाईट ड्रगून्स, हैदराबादके कन्टीनजंट के दो रिसाले, ८६ वीं पलटन के दो भाग, बंबई नेटिव-इनफ़ैंट्रीकी २५ वीं पलटन और तीन तोपख़ानें थे। दूसरे भागमें बंबईके रिसालेका मुख्य भाग, हैदराबाद कंटीनजंटका एक रिसाला, तीसरी बंबई यूरोपियन रेजीमेंट, २४ वीं बंबई-नेटिव इनफैंट्री, हैदराबाद कंटीनजंटकी एक पैदल पलटन, भोपालका तोपख़ाना और मद्रास सायपर्सकी एक कंपनी थी। इस सेनाका पहला भाग मऊमें और दूसरा सीहोरमें रक्खा गया। इस सारी फ़ौजका अधिकार सर ह्यू-रोज़ साहबने १७ दिसम्बर सन् १८५७ को अपने हाथमें लिया।

तारीख़ ६ जनवरी सन् १८५८ को रोज़ और हैमिल्टन साहबने अपनी फ़ौजको सीहोरकी ओर बढ़ाया। राह में भोपालकी बेगमके भेजे हुए ८०० सिपाही इस सेनामें आकर मिल गये। इन लोगोंको साथ लेकर रोज़ साहब सागरकी ओर, विद्रोह दमन करनेके लिए, चले। सर ह्यू रोज़ साहबकी फ़ौजने सागरसे २४ मील दूरी पर रहटगढ़ नामक स्थानमें आकर अपना डेरा डाला। उस समय रहटगढ़ का क़िला मुसलमान पठानोंके अधिकारमें था। मुसलमानों

ने अपने क़िलेकी रक्षाका खूब अच्छा प्रबंध किया था; परंतु अँग-रेज़ी-सेनाके सामने उनकी दृढ़ता कुछ भी काम न आई। चार दिन तक घनघोर युद्ध करके मुसलमानोंको क़िला खाली करके भाग जाना पड़ा! इस पहली विजयसे रोज़ साहबको खूब उत्साह मिला और वे अपनी सेना को लेकर आगे बढ़े। रहटगढ़से १५ मीलकी दूरी पर बरोदिया नामके ग्राम में बानपुर के राजाने कुछ थोड़ेसे विद्रोहियों को सहायता देकर अपने पास रक्खा था। यह समाचार पाते ही रोज़ साहबने उन लोगों पर धावा करके उनको वहाँसे मार भगाया। इस धावे में अँगरेज़ी सेनाके कप्तान नेविली नामक शूरवीरका देहान्त होगया!

उक्त दो स्थानोंमें विजय प्राप्त करके रोज़ साहबने तीसरी फ़रवरीको सागर पर चढ़ाई की और वहाँ के विद्रोहियोंको भगाकर क़िले में जो अँगरेज़ लोग थे उनको मुक्त किया। जिस समय १४ ड्रगून्स पलटनके सिपाही क़िलेके पास पहुँचे उस समय क़िलेमें घिरे हुए अँगरेज़ोंको बहुत आनन्द हुआ। उन्होंने अँगरेज़ी सेनाके स्वागतार्थ तोपोंको सलामी दी। इस प्रकार सागर तकका सब प्रांत विद्रोहियोंके कब्ज़ेसे छीनकर रोज़ साहबने गढ़ाकोटा नामक क़िले पर, जो सागरसे २५ मीलकी दूरी पर था, चढ़ाईकी। यह क़िला बंगालकी ५१ और ५२वीं पलटनके बाग़ी सिपाहियोंके हाथमें था। अँगरेज़ी-सेनाने उसको सहजहीमें हस्तगत कर लिया।

जब रोज़ साहबने यह देखा कि नर्मदा नदीके उत्तरी किनारेका बहुतसा भाग अपने हाथमें आगया है तब उन्होंने बुंदेलखंडकी ओर बढ़नेका निश्चय किया। वे यह समझते थे कि बुँदेलखंडके विद्रोहियोंका मुख्य स्थान झाँसी है। उधर कमान्डर-इन चीफ़ सर कालिन कांबेल साहबने भी इसी बातका अनुरोध किया कि झाँसीको हस्तगत किये बिना उत्तरी हिन्दुस्तानके बाग़ियोंकी परा-

जय न होगी। परंतु झाँसी तक पहुँचनेके लिए मार्गमें अनेक कठिनाइयाँ थीं। सागरसे कानपुर तकका सब प्रदेश बाग़ियोंके कब्ज़ेमें था। रास्तेमें नारूत, मालथोन, मदनपुर और धामौनी आदि बड़ी-बड़ी घाटियाँ हैं। वहाँ विद्रोहियोंने दृढ़तासे युद्ध करने का खूब प्रबन्ध किया था। रोज़ साहब भी कुछ ऐसे-वैसे सेना-नायक न थे; वे युद्ध-विद्यासे पूर्ण परिचित थे। उनको यह पहलेही से ज्ञात था कि विद्रोही लोग अमुक स्थान पर हमारे साथ युद्ध करेंगे। इसलिए उन्होंने अपनी फ़ौजके बहुतसे भाग करके उन्हें भिन्न-भिन्न भागोंसे निकल जानेकी आज्ञा दी। और वे स्वयं नारूत घाट परसे जानेके लिए तैयार हुए। परंतु जब नारूतके घाट पर बानपुरके राजाको युद्ध के लिए तैयार देखा तब उन्होंने मदनपुर घाटसे, जो शाहगढ़के राजाके अधिकारमें था, निकल जानेका इरादा किया। इस मार्गसे जानेमें भी एक बातका भय था। वह यह कि जब बानपुरके राजाको यह मालूम होगा कि अँगरेज़ी-सेना मदनपुरके घाटसे पार उतरना चाहती है तब वह अपनी सेना लेकर शाहगढ़के राजाकी सहायताके लिए आजायगा; और ऐसा होनेसे दो राजाओंकी एकत्रित सेनासे युद्ध करना पड़ेगा। इसलिए उन्होंने अपनी थोड़ीसी फौज नारूत घाटकी ओर भेज दी और बानपुरके राजाको उधर अटका रखनेका प्रबंध किया। इसके बाद वे अपनी सब सेना लेकर मदनपुरके घाट पर से बेखटके चले गए। वहाँ पर अँगरेज़ी-सेनाको बाग़ियोंके साथ कुछ समय तक युद्ध करना पड़ा। ख़ुद रोज़ साहबके एक गोली लगी और उनका घोड़ा गोली लगनेसे मर गया। इस युद्धमें बहुत से बुँदेला सरदार काम आये। अँगरेज़ी-सेना विद्रोहियोंको हटाती हुई सरायके क़िलेके समीप आगई। सरायका क़िला एक छोटी सी पहाड़ीके ऊपर था। उसके समीप ही शाहगढ़के राजाका एक

सुँदर बाग था। उसी बागमें अँगरेज़ी-सेनाने अपना डेरा डाला। दूसरे दिन मुरोवरा गाँव पर चढ़ाई करके वहाँका क़िला भी अँगरेज़ी-सेनाने अपने अधिकारमें कर लिया। इस प्रकार जब उस प्रांतके सब विद्रोहियोंका विध्वंस हो गया तब पोलिटिकल एजेंट सर राबर्ट हैमिल्टन साहबने शाहगढ़-राज्यको ब्रिटिश-राज्यमें मिलाये जानेकी आज्ञा प्रकाशित कर दी। इस आनन्दके समय सरकारी सेनाने सरायके क़िले परसे तोपों की सलामी दी। शाहगढ़का राजा तो पहलेही भाग गया था; अब उसके कई सरदारोंको पकड़कर फाँसी दे दी गई! उस राजाका एक ज्योतिषी भी इस लड़ाईमें पकड़ा गया था। उसीने राजा साहबको मुहूर्त बतलाकर युद्धके लिए उत्तेजना दी थी उसके सम्बन्धमें डाक्टर लो साहब जो अँगरेज़ी सेनाके साथ थे, लिखते हैं:—

"शाहगढ़का राजा भाग गया। उसका ज्योतिषी, जो अब हमारे पास है, कहता है कि फिरंगियोंके नाशके लिए मुहूर्त निश्चयमें मुझसे भूल हो गई। उस रातको उसने काँचके द्वारा सितारोंको अच्छी तरह नहीं देखा था, इसलिये उसकी भविष्य झूठा सिद्ध हुआ।"† इस प्रकार ज्योतिष-विद्या पर विश्वास रखकर जो लोग युद्ध करते हैं, उनको कितना यश प्राप्त हो सकता है, इसका पाठक गण स्वयं विचार करें।

---

†"The Raja of Shahghur had escaped, and his astrologer who was now in our hands, confessed that he had been mistaken in his prediction of the fitting day for the annihiltion of the Feringhees. He evidently had read the stars through a glass darkly that night, and had woefully proved himself a false prophet!"

रोज़ साहबकी सेनाका जो भाग बानपुरकी ओर गया था उसे उधर बहुत कम युद्ध करना पड़ा। इसका कारण यह है कि जब बानपुरके राजा मदनसिंहने सुना कि शाहगढ़के राजाको पराजित करके अँगरेज़ी सेना मदनपुर घाटसे पार हो गई तब उसने लड़ना व्यर्थ समझा। वह अपने बाल-बच्चोंको साथ लेकर भाग गया। इस तरह अँगरेज़ी-सेनाने बानपुरको सहज हीमें अपने अधिकारमें कर लिया। सेनाने वहाँ आकर देखा तो उसे सारा शहर ख़ाली मिला। हैमिल्टन साहबने तब १० मार्चको यह आज्ञा प्रकाशित की कि बानपुर ब्रिटिश-गवर्नमेण्टके अधीन है और जो लोग बलवेमें शामिल नहीं हैं वे वहाँ निर्भय होकर रहें। बानपुरसे राजमहलका कुछ भाग मेजर बायलोने ११ मार्चको तोपसे उड़ा दिया और शेष भागमें आग लगवा दी। रात भर इस प्रचंड अग्नि-लीलासे अँगरेज़-सेना अपनी अपूर्व विजयका आनन्द मनाती रही। १२ तारीख़को अँगरेज़ीसेना ताल-बेहट गाँवके समीप पहुँची। वहाँ बहुतसे विद्रोही एकत्रित थे। वहाँ का क़िला भी उन लोगोंने हस्तगत कर लिया था। पहले तो मेजर और विद्रोहियोंमें कुछ थोड़ा युद्ध हुआ; परन्तु जब विद्रोहियोंने देखा कि अँगरेज़ी सेना अधिक है तब वे इधर-उधर भाग गये और क़िला सहज हीमें अँगरेज़ोंके हाथ आ गया। यह क़िला एक छोटीसी सुहावनी टेकड़ीके ऊपर बना हुआ है। इसके चारों ओर सृष्टिकी बड़ी ही अपूर्व सुन्दरता दिखाई देती है। इसी क़िले पर अँगरेज़ोंने अपना झंडा खड़ा किया। इस प्रकार विजय करते हुए रोज़ साहब १७ मार्चको बेतवा नदीके पार हुए। उसी दिन उनकी सेनाने चँदेरीका प्राचीन और प्रसिद्ध क़िला विद्रोहियोंसे छीन कर झाँसीकी ओर क़दम बढ़ाया। रोज़ साहब अपनी सेना साथ लेकर १९ तारीख़को झाँसीसे १४ मीलकी दूरी पर चंचनपुर नामके गाँवमें जा पहुँचे। दूसरे दिन उन्होंने एक तोपख़ाना और

कुछ घुड़सवार झाँसीके मार्गोंकी देख-भाल करके नाकाबन्दी करनेके लिए भेजे। इसके बाद वे स्वयं जानेवाले थे कि इतनेमें कुछ घुड़सवारोंने आकर गवर्नर-जनरल साहबका एक पत्र सर राबर्ट हेमिल्टन साहब को और दूसरा पत्र कमांडर-इन-चीफ़के राजा साहबको दिया। इन पत्रोंको पढ़कर उन दोनोंको कुछ आश्चर्य और कुछ चिन्ता हुई। इन पत्रोंका सारांश यह था कि "बुंदेलखंड-प्रांतमें चरखारीका राजा रतनसिंह अँगरेज़ोंका बड़ा मित्र है। उसके राज्य पर तात्याटोपेने चढ़ाई की है। उसकी रक्षा करना बहुत ज़रूरी है। इसलिए पहले उसको इस संकटसे मुक्त करके फिर झाँसी पर चढ़ाई की जावे।" गवर्नर जनरलकी यह आज्ञा पाकर रोज़ साहबको बड़ी चिन्ता हुई; क्योंकि उस समय जिस स्थान पर वे थे वहाँसे झाँसी सिर्फ़ १४ मील और चरखारी ८० मील दूर थी। यदि वे झाँसी छोड़कर चरखारी न जावें तो सरकारी आज्ञाका उल्लंघन करना पड़ेगा। रोज़ साहब इसी बात को बहुत देर तक सोचते रहे कि अब क्या किया जाय। तब हैमिल्टन साहबने अपने सिर पर सब जिम्मेदारी लेकर कहा कि पहले झाँसीके क़िलेको अपने अधिकारमें ले लेना ही अत्यन्त आवश्यक है। उन्होंने गवर्नर जनरल साहबको भी यह उत्तर लिखा दिया कि "यदि हम चरखारी जाते हैं तो झाँसी पर चढ़ाई न हो सकेगी और फिर कालपीके सम्बन्धमें जो प्रबन्ध हम लोगोंने सोच रक्खा है वह भी नष्ट हो जायगा; और कालपीको हस्तगत करना सर ह्यू-रोज़ साहबका आवश्यक कर्त्तव्य है। यद्यपि हमारी यह इच्छा है कि हम चरखारीके राजाकी सहायता करें तथापि इस समय इस सेनाको उधर ले जाना असम्भव है। रोज़ साहबकी यह राय है कि जब हम झाँसी पर चढ़ाई करेंगे तब उधर (अर्थात्, चरखारी) के सब बाग़ी लोग आप-ही-आप

इधर चले आवेंगे। ज्यों ही झाँसी हमारे हाथ आ जायगी त्योंही सब बागियोंका समूह तितर-बितर हो जायगा; और अन्तमें जिस रानीका नाम इस बलवेका प्रधान कारण है उसकी सामर्थ्य भी घट जायगी"। इस प्रकार निश्चय करके रोज़ साहब अपनी सारी सेना लेकर २० मार्चको सबेरे ७ बजे झाँसीके बिलकुल समीप पहुँच गये।

जब यह ख़बर झाँसीमें पहुँची कि अँगरेज़ी-सेना युद्धके लिए समीप ही आ पहुँची है तब झाँसीके दरबारके लोग घबड़ाने लगे। उस समय दरबारमें अनुभव-प्राप्त तथा राजनीति-निपुण मंत्रियोंकी बहुत कमी थी। वहाँ एक भी आदमी होशियार न था जो उस संकटसे पार होनेका अच्छा प्रबंध करता और महारानी की ओर से अँगरेज़ी-सेना को यह समझा देता कि महारानी बागी नहीं हैं—वे ब्रिटिश-गवर्नमेंटकी पूर्ण-विश्वास-पात्र और पक्षपाती हैं। वहाँ तो प्रत्येक मनुष्य अपने ही मनके अनुसार काम करनेकी सलाह देता था। नाना भोपट-कर आदि कुछ तजरबेकार और वृद्ध लोगोंने अपने दूत ग्वालि-यर भेजे और वहाँके मुख्य-मुख्य लोगोंसे सलाह ली। उन लोगोंने यही कहा कि अँगरेज़ी-सेनाके साथ युद्ध करना उचित नहीं है; अँगरेज़ी सेनाके प्रधान अधिकारियोंसे मिलकर महारानी-की ओरका सब हाल उन्हें बतला देना चाहिए; इससे दोनों पक्षोंमें मित्रता हो जायगी। यह सलाह झाँसी-दरबारके लोगोंको पसंद न आई। इसके सिवा एक यह भी बात थी कि झाँसीकी सेनाके अधिकांश लोग अँगरेज़ोंसे अप्रसन्न थे। इन लोगोंने द्वेष-बुद्धिसे झाँसीके नवसिखुए और मूर्ख दरबारियोंको अँगरेज़ोंसे युद्ध करने की सलाह दी।

इस समय महारानी लक्ष्मीबाई क़िले में रहती थीं। उनको

उचित परामर्श देने और अँगरेज़ोंकी ओर का सच्चा हाल बतलानेके लिए वहाँ कोई न था। जिन मूर्ख राज्य-व्यवहार-हीन और अनुभव-रहित मंत्रियों का उल्लेख ऊपर किया गया है उनके सिवा और किसीको महारानीके पास जानेकी इजाज़त न थी। इसलिए उन्हें अँगरेज़ोंकी ओर का कुछ हाल मालूम न होता था; और न अँगरेज़ी-सेना हीके अफ़सरोंको महारानीका कुछ हाल मालूम होता था। उन लोगोंने महारानीको यह समझा दिया कि जिन अँगरेज़ोंका आप इतना विश्वास करती हैं उन्होंने आपके किये हुए अनेक अच्छे-अच्छे कार्यों पर भी ध्यान नहीं दिया; वरन् आपकी दृढ़ राज-भक्तिका भी कुछ विचार न करके आपको बाग़ी मान लिया है और अब इसीलिए वे सेना लेकर आपको पकड़नेके लिए यहाँ आये हैं। लक्ष्मीबाई बेचारी एक अबला स्त्री थीं। उन्होंने इन बातोंको सच मान लिया। यद्यपि हैमिल्टन साहब बहुत दिनों तक मध्यभारतमें पोलिटिकल एजंटका काम कर चुके थे और उन्हें झाँसी-राज्यकी बहुत-कुछ बातें मालूम थीं, तथापि उन्हें भी महारानी की ओर का यथार्थ हाल अन्त तक विदित न हुआ। कोई कहते हैं कि अँगरेज़ी-सेनासे महारानीको एक पत्र मिला था, जिसमें यह लिखा था कि "आप अपने दीवान लछमणराव, लाला भाऊबख़्शी, मोरोपन्त ताम्बे आदि आठ आदमियोंको साथ लेकर और निःशस्त्र होकर हमसे मिलिए।" परन्तु यह बात स्वाभिमानी लक्ष्मीबाईको पसन्द न आई। कोई कहते हैं कि अँगरेज़ोंने महारानीको बाग़ी समझकर उनको और उनके सरदारोंको क़ैद कर लेनेकी ग़रज़से बुलाया था। इस तरह क़ैद होनेमें लक्ष्मीबाईने अपना अपमान समझा और इसीलिए उन्होंने क्षत्रिय-धर्मोचित युद्ध करनेका निश्चय किया। अर्थात् जब उन्होंने अपनी राज-भक्तिसे कुछ लाभ होता हुआ न देखा तब वे लाचार होकर

युद्धके लिए तैयार हुई। कोई कहते हैं कि जब अँगरेज़ी-सेना झाँसी के समीप पहुँची तब वहाँके लोगोंने यह समझा कि वह नत्थेखाँ हीकी सेना है और वह अपने सिपाहियोंके मुँह सफ़ेद रंगसे रँग कर और उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकारके कपड़े पहनाकर झाँसी पर चढ़ाई करनेके लिए आया है। और यही समझकर झाँसी-दरबार उसके साथ युद्ध करनेके लिए सन्नद्ध हुआ। कोई कहते हैं कि जब अँगरेज़ी-सेनाके कुछ सवार झाँसी शहरकी देख-भाल कर रहे थे तब उनपर क़िलेसे गोलियाँ चलाई गईं थीं। इससे अँगरेज़ लोग चिढ़कर लड़ाई करने लगे। रानी लक्ष्मीबाईने भी "विनाशकाले विपरीत बुद्धिः" की कहावतके अनुसार बिना कुछ सोचे-समझे अपनी सेनाको युद्ध करनेकी आज्ञा दे दी। कोई कहते हैं कि लक्ष्मीबाईने सुलह करनेके लिए अँगरेज़ी-सेनाके अफ़सरों के पास अपने कुछ सरदार भेजे थे; परन्तु अँगरेज़ोंने उन लोगोंको फाँसी दे दी; इससे दोनों पक्षके लोगोंके मन बिगड़ गये और दोनों ओरसे भयंकर युद्ध होने लगा। सारांश यह है कि इस युद्धके सम्बन्धमें जो-जो बातें उस समय हुईं वे इस समय किसीको भी भली भाँति मालूम नहीं हैं और न उनके मालूम होनेका अब कुछ उपाय ही है। इन बातोंका उस समय की स्थितिसे केवल अनुमान ही किया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि उस समयके अँगरेज़ लोगों के चित्तमें पूरा विश्वास था कि झाँसी ही सब बाग़ियोंका मुख्य स्थान है और लक्ष्मी-बाई इन बाग़ियोंकी अगुआ हैं। इस व्यर्थ भ्रममें पड़कर उन्होंने झाँसी पर चढ़ाई की। झाँसी के दरबारमें भी कोई ऐसा राजनीति-निपुण और बुद्धिमान् आदमी न था जो महारानीकी राज-भक्ति और उनके शुद्ध-हृदयका परिचय ब्रिटिश-सरकारको देकर अँगरेज़ोंके चित्तका भ्रम मिटाता। उस समय दरबारमें ऐसे-ऐसे अनाड़ी पुरुष थे जो स्वार्थवश महारानी को उलटा लड़ाई करने के लिए उभाड़ते

थे। अत्यन्त खेदकी बात है कि अँगरेज़ोंके व्यर्थ भ्रम और झाँसी दरबारकी बुरी दशाके कारण लक्ष्मीबाईको अँगरेज़ी-सेनाके साथ युद्ध करना पड़ा। यदि महारानीका शुद्ध बिचार, उनकी असीम राज-भक्ति और निष्कपट मित्रता किसी प्रकार अँगरेज़ों पर प्रकट हो जाती तो निस्संदेह ब्रिटिश-गवर्नमेन्टकी ओरसे उनका बहुत सम्मान होता। परन्तु होनहार किसीके टाले नहीं टलती। किसी संस्कृत कविने ठीक कहा है कि "लिखतमपि ललाटे प्रोज्झितुं कः समर्थः।"

'होनहार ह्वैके रहै, मेट सकै नहिं कोय'।

अँगरेज़ी-सेनाके झाँसीके निकट पहुँच जाने तक लक्ष्मीबाईने युद्धकी कुछ भी तैयारी नहीं की थी; परन्तु जब उन्होंने अपने मंत्रियोंसे सुना कि अँगरेज़ी-सेना हमें बाग़ी समझकर झाँसी पर चढ़ाई करने और क़ैद करनेके लिए आई है; और जब उन्हें इस बातका भी स्मरण दिलाया गया कि जबलपुर के कमिश्नर, आगराके कमिश्नर और सेन्ट्रल इन्डियाके पोलिटिकल एजेन्ट आदि बड़े-बड़े अफ़सरों को तथा गवर्नर जनरल और पार्लिमेन्ट-सभा को अनेक प्रार्थना-पत्रोंके भेजे जाने पर भी ब्रिटिश-सरकारने कुछ बिचार नहीं किया; तब वे उनके अन्याय और दुराग्रह पर अत्यंत कुपित हुईं। अबला होने पर भी महारानीने अपने धैर्य, निश्चय, तेजस्विता, स्वाभिमान, स्वाधीनता आदि स्वाभाविक गुणोंसे प्रेरित होकर राजकुलोचित क्षात्र-धर्म और वीरव्रत-पालन स्वीकार कर अपनी अनुपम शूरता का परिचय दिया।

झाँसीका क़िला शहर के पश्चिम ओर एक छोटीसी पहाड़ी पर बना है। वह बहुत पुराना और मज़बूत है। क़िलेके चारों ओर पत्थर और चूनेकी ख़ूब मज़बूत दीवारें बनी हैं। इन दीवारोंकी चौड़ाई १६ से २० फुट तक है। युद्धके समय बड़ी-बड़ी तोपें इन

दीवारों परसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक बड़ी आसानीसे ले जाई जाती थीं। इन दीवारों में तोपें रखने के लिए बड़े-बड़े बुर्ज बने हैं। गरगज नामका जो सबसे बड़ा बुर्ज था वह चालीस हाथ लंबा, उतना ही चौड़ा और सवासौ हाथ ऊँचा था। उसके चारों कानों पर चार तोपें रक्खी रहती थीं और मध्य भागमें ब्रिटिश-सरकारकी ओरसे झाँसीके सूबेदार रामचंद्ररावको मिला हुआ 'यूनियन जैक' नामका झंडा फहराता रहता था। क़िलेमें जगह-जगह पर ५१ बड़ी-बड़ी तोपें रक्खी थीं। इनमें भवानीशंकर कड़कबिजली, घनगर्ज, नालदार आदि असंख्य मनुष्यों को संहार करनेवाली तोपें प्रख्यात थीं। क़िले में महारानीका एक बहुत बड़ा महल था और कुछ सरदारों के रहने के लिए अच्छी-अच्छी इमारतें बनी हुई थीं। क़िलेके चारों ओर एक ख़ूब गहरी खाई थी, जिसको बिना पार किये कोई क़िलेके भीतर आ नहीं सकता था। सारांश, क़िलेकी रचना स्वभाव हीसे उत्तम थी और महारानीने उसकी रक्षा का प्रबन्ध भी ख़ूब परिश्रम से किया था।

क़िलेके नैऋत्य कोनेसे दक्षिण-पूर्व और वायव्य कोनेसे उत्तर-पश्चिम शहरकी रक्षाके लिए ख़ूब ऊँची, चौड़ी और मज़बूत दीवार बनी थी। इस दीवार में भी जगह-जगह पर बड़े-बड़े बुर्ज़ थे, जिन पर तोपें चढ़ाई गई थीं। इस दीवार के पाँच बड़े-बड़े दरवाज़े थे। शहरका घेरा कोई साढ़े चार मीलका होगा।

जब यह निश्चय हुआ कि अँगरेज़ोंसे युद्ध करना ही पड़ेगा तब महारानी लक्ष्मीबाई ने शहर और क़िलेकी रक्षाका थोड़े ही समय में उत्तम प्रबन्ध कर दिया। उनके अद्वितीय धैर्य, अप्रतिम स्वाभिमान और अलौकिक निश्चयका परिचय नत्थेख़ाँके युद्धके समय लोगों को मिल ही गया था। अब उन्हीं गुणोंकी परीक्षाके समय फिर आया। उन्हें अपने प्राचीन राज-घरानेका बहुत

अभिमान था। वे अपने को शिवरावभाऊकी 'बहू' कहलाने में अपना बड़ा मान समझती थीं। उनकी सेना में जितने लोग थे उनमें से बुन्देले और अफ़ग़ानी ही अधिक रण-कुशल और परिश्रमी थे। शेष सब लोग युद्ध से अपरिचित थे। और बहुत से ऐसे भी थे जो अराजक, अँगरेज़ों से द्वेष करनेवाले और सचमुच बाग़ी थे। लक्ष्मीबाईने इस सेनाके कई विभाग किये और प्रत्येक विभाग पर उन्होंने अपने विश्वास-पात्र ठाकुर और बुन्देले सरदारों को नियत करके उन्हें युद्ध का काम सौंप दिया। लक्ष्मीबाई स्वयं सब लोगों की देख-भाल और रक्षाका प्रबन्ध करती थीं। सर ह्यू-रोज़ साहबने लिखा है कि क़िले पर युद्ध की तैयारीका काम—मोरचा बाँधने और दारू-गोला ढोने का काम-स्त्रियाँ करती थीं। डाक्टर लो, जो रोज़ साहबके साथ थे, लिखते हैं कि हमने पहुँचनेके बाद ही देखा कि वे लोग क़िलेके दक्षिण-दरवाज़ेसे थोड़ी दूर पूर्वकी ओर दीवार पर तीन तोपोंका मोरचा खूब तत्परताके साथ बाँध रहे हैं। वे मधुमक्खियोंकी तरह काममें लगे हुए थे। हिन्दुस्तानियोंको इस तेज़ीके साथ काम करते हुए हमने पहले कभी नहीं देखा था। उन्होंने यह मोरचा बहुत शीघ्र और ठीक इन्जीनियरी तरीक़े पर बाँधकर तैयार किया।" विपक्षियोंके मुखसे इस प्रकार प्रशंसा सुनकर लक्ष्मीबाईकी रण कुशलताके सम्बन्धमें किसे आनंद न होगा?

अब अँगरेज़ी-सेनाका कुछ हाल सुनिए। तारीख़ २१ मार्चको अँगरेज़ी सेनापति सर ह्यू-रोजने झाँसी शहर और क़िलेकी सूक्ष्म दृष्टिसे खूब देखभाल की; और लड़ाईके योग्य स्थान ढूँढ़कर वहाँ अपनी फ़ौज और तोपें लगा दीं। शहर और क़िलेके भीतरके लोगोंको जिन-जिन मार्गोंसे बाहरसे सहायता मिलनेकी संभावना थी वे सब मार्ग उन्होंने अपने अधीन कर लिये; और शहरके सब

दरवाज़ोंकी नाकेबंदी भी कर ली। ठीक इसी समय चँदेरीसे ब्रिगेडियर, स्टुअर्टकी कुछ फ़ौज झाँसी आ पहुँची। इससे रोज़ साहबको झाँसी शहर और क़िलेको घेरनेके काममें अच्छी सहायता मिली। जिन स्थानोंमें अँगरेज़ी-सेना रक्खी गई थी वहाँ उनकी रक्षाके लिए बड़े-बड़े खंदक खोदे गये और एक स्थानसे दूसरे स्थान तक तार लगा दिये गये, जिससे एक स्थान का समाचार दूसरे स्थान पर शीघ्र पहुँच जाय। एक ऊँचीसी पहाड़ी पर दूरबीन लगाई गई, जिसकी सहायतासे झाँसी के क़िलेके भीतरका सब हाल मालूम हो जाता था। वहाँ एक तारघर भी बनाया गया था। मतलब यह कि अँगरेज़ी-सेनाकी व्यवस्था पाश्चात्य युद्ध-विद्याके अनुसार पूरी-पूरी की गई थी।

२३ मार्चको युद्धका आरंभ हुआ। झाँसी के आस-पास के सब मैदानोंमें और छोटी-छोटी पहाड़ियों पर अँगरेज़ी-सेना सुसज्जित होकर युद्धके लिए तैयार थी। अपने अफ़सर का हुक्म पाते ही वे लोग क़िले पर हमला करने लगे। परंतु क़िले पर जो तोपें रक्खी हुई थीं उनकी मारके सामने वे लोग बहुत देर तक ठहर न सके। तब उसी रातको तीसरी यूरोपियन पलटनने आगे बढ़कर झाँसी शहरकी दीवारसे ३०० गज़की दूरी पर अपनी तोपों का एक मज़बूत मोरचा बाँधा। प्रातःकाल होते ही क़िले परसे तोपें दगने लगीं। जब घनगर्ज नामकी तोपसे गोले बरसने लगे तब अँगरेज़ी-सेनाके होश-हवाश जाते रहे इस तोपमें यह चामत्कारिक गुण था कि जब उसमेंसे गोला छूटता था तब उसका धुआँ बिलकुल दिखाई नहीं देता था। इसलिए शत्रुओंको सावधान रहनेका अवसर ही नहीं मिलने पाता था। इस तोपसे जो भयंकर गोले निकल कर अँगरेज़ी-सेनामें जाकर गिरते वे उनको बहुत हानि पहुँचाते थे।

२४ मार्चको अँगरेजी-सेनाने चार नये मोरचे और बाँधे; और क़िलेके दाहिने ओर से हमला करनेकी तैयारी की। उनकी भयंकर तोपोंके गोले क़िले और शहर पर बरसने लगे। २४ और १८ पौंडर्सकी तोपोंकी मार शहरकी दीवार पर होने लगी। इस भीषण मारसे झाँसी के बहुतसे गोलंदाज मर गये; तोपें बंद हो गईं और दीवारमें छेद हो गये। इतने पर भी अँगरेज़ी-सेनाका कोई मोरचा शहर पर सफलता लाभ न कर सका। परंतु खेद है कि किसी देश-द्रोही और विश्वास-घातीने अँगरेज़ी सेना को यह भेद बतला दिया कि पश्चिमकी ओर मोरचा बाँधनेसे शहर पर तोपोंकी मार अच्छी तरह हो सकेगी। फिर देर ही किस बातकी थी। इस भेदके पाते ही अँगरेज़ोंने पश्चिमकी ओर अपने मोरचे बाँधे और अपनी बड़ी-बड़ी तोपोंमेंसे लाल-लाल गोले धड़ाधड़ शहर पर बरसाने लगे। उनका एक-एक गोला जहाँ कहीं गिरता, दस-बीस मनुष्योंके प्राण हर लेता और बहुतोंको घायल कर देता था। इससे शहरमें हा-हाकार मच गया! सड़कोंमें कोई आदमी चलता देख नहीं पड़ता था। चारों ओर सुनसान हो गया। इस विपत्तिको देखकर महारानी लक्ष्मीबाई बहुत दुखित हुईं। उनके स्वाभाविक कोमल अंतःकरण में बड़ा कष्ट होने लगा। वे मन-ही मन कहने लगीं कि ये तो बड़े अशुभ लक्षण हैं—कदाचित् यही अपयश और निराशाकी पहली सीढ़ी होगी! परंतु उनका निश्चय अटल और साहस अलौकिक था। उन्होंने अपने सिपाहियों और गोलंदाज़ों की सहायताके लिए और आदमी भेजकर अँगरेज़ी तोपोंकी मारसे शहर-निवासियों की रक्षा की। इसके बाद उन्होंने शहरके दीन और अनाथ जनोंको अन्न दान किया। ब्राह्मणोंको भोजन दिया और अन्य निराश्रित लोगोंके लिए सदावर्त खुलवा दिया।

२५ मार्चको रोज़ साहबने अपनी सेनाका कुछ बल क़िलेके दक्षिण-ओर लगाया। इधर जो सेना नियत की गई थी, उसमें चँदेरीके युद्धमें विजय प्राप्त करनेवाली पहली ब्रिगेड भी थी। इस ब्रिगेडने ख़ूब ज़ोरसे हमला किया; परंतु कुछ लाभ न हुआ। तब दूसरे दिन—तारीख़ २६ मार्चको—रोज़ साहबने उन लोगोंकी सहायताके लिए और सेना भेजी। दोनों ओरसे बड़ा घनघोर युद्ध होने लगा। दोपहरके समय क़िलेके दक्षिण बुर्ज़की तोप बंद हो गई। उस तोप पर अँगरेज़ी-सेना ऐसे भयंकर गोले बरसा रही थी कि वहाँ कोई गोलन्दाज़ ठहर नहीं सकता था। यदि कोई गोलन्दाज साहस करके वहाँ जाता तो तुरंत ही अँगरेज़ोंके गोलोंसे मरकर नीचे गिर पड़ता था। यह दशा देखकर क़िलेके सब लोग घबड़ाने लगे। तब महारानीकी आज्ञासे पश्चिम बुर्ज़की तोप वहाँ लाई गई। गोलन्दाजने दूरबीनसे देखकर अँगरेज़ी तोपके गोलन्दाज पर एक ऐसा गोला चलाया कि वह तुरंत ही मर गया। अँगरेज़ी गोलंदाज़के मरते ही क़िलेकी पहली तोप फिर ठीक-ठीक चलने लगी। इस समय महारानी लक्ष्मीबाईने संतुष्ट होकर अपने गोलंदाज़को चाँदीका एक तोड़ा इनाम दिया, इस शूर गोलंदाज़का नाम ग़ुलाम गौसख़ाँ था, जिसने नत्थेख़ाँके युद्धके समय भी अपना अतुल पराक्रम प्रकट किया था।

३१ मार्च तक बराबर घनघोर युद्ध होता रहा। दोनों ओरकी सेना मुस्तैदी और शूरतासे लड़ती रही। अँगरेज़ी-सेना सब सेनापति अपने अपने कर्त्तव्य-पालनमें ख़ूब दक्ष थे और उनके सिपाही पाश्चात्य युद्ध-कलामें प्रवीण तथा आज्ञाकारी थे। अँगरेज़ी-सेनामें किसी प्रकारकी अव्यवस्था न थी। यद्यपि महारानी स्वयं शूर और धीरोदार थीं तथापि उनकी सेनाका प्रबंध उतना अच्छा न था। उनकी सेनामें प्रायः अनाड़ी युद्ध-विद्यासे अपरिचित और

केवल लूटकी सम्पत्ति प्राप्त करनेकी आशासे हाथमें शस्त्र लेकर लड़ाईमें शामिल होनेवाले लोग ही अधिक थे। उनके बड़े-बड़े सरदार और अधिकारी लोग भी अँगरेजोंके विरुद्ध बलवा करनेवालोंमेंसे ही थे। वे लोग नियमित रीतिसे कुछ काम करना न जानते थे, इसलिए युद्धके प्रबंधका सब भार अकेली लक्ष्मीबाईके साहस और शूरता पर निर्भर था। यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कि झाँसीकी सेनामें नियम, युक्ति, प्रबंध और कर्तव्य-दक्षता न होनेसे महारानीकी सारी स्वाभाविक शक्ति व्यर्थ ही चली गई। तथापि उन्होंने अपने बाहु बल और बुद्धि-बलसे दस-ग्यारह दिनों तक प्रबल अँगरेजी-सेनाका भयंकर सामना किया और अपनी अनुपम शूरता तथा अद्भुत पराक्रमकी पाश्चात्य युद्ध-कला-विशारद यूरोपियन सेनानायकोंसे भी प्रशंसा कराई। इस युद्धके विषयमें डॉ० लो साहब लिखते हैं—

"On the 28th there was continued heavy firing from the batteries on both attacks, and the enemy kept up a very smart fire upon our various works from their guns and from the whole line of the wall reaching from the fort to the right attack. We had silenced several of their guns, and as often as they were silenced so often did they reopen from them to our astonishment. In the midst of this din and roar, flash and smoke, a great explosion occurred in the fort on the east face. This followed the constant shelling from the right attack. Every ten minutes in the twenty-four hours, shell and shot fell in various parts of this doomed place and fresh fires burst out among the different buildings — each fire greeted with loud hurrahs by the men in our batteries. The exci-

tement frequently became intense, and the gunners continued their work in the scorching sun as though it were winter time. By the 29th. the parapets of the fort bastions were torn down from the left attack, and the enemy's guns were accordingly rendered useless.

" At the same time a breach was commenced in the town-wall near the fort. The cannonading went on with great spirit, while the enemy continued a determined opposition from the garden battery on the west side, and from musketry and light guns along the wall.

" During the midday heat scarcely a shot was fired by the enemy but about 3--30 p. m. every evening they reopened upon us with considerable spirit. Round shot of various sizes bounced over our heads, and matchlock balls whizzed like hail about us. From this hour till sun-set was always a dangerous time, and our poor fellows were severely tried. The ' garden battery' and guns on the fort-gate pestered us a good deal. Near the former battery we could see scores of the enemy among the trees sauntering about as though they were superintending a quiet every-day matter of business although our shell occasionally dropped in the midst of them.

" The breaching and shelling were continued with unabated spirit on the 30th and 31st, and the enemy kept up a fearful fire upon us. Not-with-standing the damage done to their fort and works upon the wall, their vigilance and determination to resist abated not one iota; on the

contrary, their danger appeared to add to their courage."

Central India P. 242--244,

इस युद्धका ठीक ऐसा ही वर्णन महारानीके पक्षके एक आदमीने भी लिखा है, जो स्वयं इसयुद्धमें शामिल था। उसने इस विषयमें जो कुछ लिखा है वह ऊपरके अँगरेज़ी अवतरणसे बिलकुल मिलता हुआ है।

"रात्रिके समय शहर और क़िले पर बड़े बड़े गोले गिरा करते थे। दृश्य भयानक था। पचास-पचास साठ-साठ सेरका गोला एक छोटेसे गेंदके समान तोपसे निकल कर आकाशमें दौड़ता हुआ दिखाई देता था। देखनेवाले प्रत्येक मनुष्यको यही मालूम होता था कि गोला मेरे ही सिर पर गिरेगा। इस तरह रात-दिन मृत्युके भयसे शहरके लोग त्रस्त हो गये थे। कभी महारानीकी जय होती और अँगरेज़ी तोपें बंद हो जाती थीं; सातवें दिन सूर्यास्तके समय पश्चिम दिशाकी तोप बंद हो गई। वहाँ कोई भी गोलन्दाज़ क्षण भर ठहर नहीं सकता था। अँगरेज़ी तोपोंकी मारसे क़िलेका मोरचा भी टूट गया था। तब अँधेरी रातमें कई आदमी कम्बल ओढ़कर बुर्ज़ पर चढ़े और रात-ही-रात उन्होंने मोरचा दुरुस्त किया। क़िले की तोप फिरसे चलने लगी। अँगरेज़ी सेनाकी बहुत हानि हुई।

"आठवें दिन प्रातःकाल के समय अँगरेज़ी-सेनाने फिर क़िले पर गोले बरसाना आरम्भ किया। अँगरेज़ लोग अपनी दूरबीनों से यह बात जान लेते थे कि क़िले या शहर में किस जगह कौन आदमी युद्ध का क्या प्रबन्ध कर रहा है। उन लोगोंने दूरबीन से देखा कि क़िले में एक छोटा सा तालाब है, जहाँ लोग पानी भरने जाते हैं। बस उन लोगों ने फिर उसी तलावकी ओर अपनी तोप का मुँह फेर दिया। धड़ाधड़ गोले बरसने लगे। पानी भरनेवालों

में से बहुत से मर गये, बहुत से इधर-उधर भाग गये। दोपहर तक लोगों को पानी न मिला। इससे लोगों के स्नान, भोजन आदि सब नित्य-आवश्यक कर्म रुक गये। जब महारानी को यह समाचार मिले तब उन्होंने पश्चिम और दक्षिण के बुर्जों परकी दोनों तोपें एकदम चलाने की आज्ञा दी। उनकी मार से अँगरेज़ों की तोपें बंद हो गईं। लोग तालाव पर फिर आने लगे। भोजन आदि के हो जाने बाद कुछ ही समय हुआ होगा कि एक बहुत बड़ी आवाज़ हुई और चारों ओर धुआँ और धूल देख पड़ने लगी। लोग बड़े भयभीत हुए। वे नहीं समझ सके कि उन पर यह और क्या विपत्ति आई है। जब धुआँ कम हुआ तब मालूम हुआ कि महारानीके महलके सामनेके मैदानमें जो बारूद गोलेका कारख़ाना था उसमें आग लग गई। कितने ही आदमी मारे गये और बहुतसे घायल हुए।

"आठवें दिनकी लड़ाई बड़ी भयानक थी। दोनों ओर के वीर ख़ूब मुस्तैदीसे लड़ रहे थे। बंदूक, कड़ाबीन और तोपोंकी आवाज़से आकाश गूँज रहा था। शहरमें हज़ारों मनुष्य मर रहे थे। कुछ लोग अपने प्राणोंकी रक्षा करनेके लिए गुप्त स्थान में छिपे रहनेका उपाय कर रहे थे। शहरकी दीवार पर जो गोलन्दाज़ और सिपाही रक्खे गये थे उनमेंसे बहुतेरे मर गये। उनके स्थानमें नये आदमी भरती किये गये। महारानी को इस युद्धका प्रबंध करने में बहुत परिश्रम करना पड़ा। जहाँ किसी बातकी कमी या अव्यवस्था होती थी वहाँ वे स्वयं जातीं और उचित प्रबन्ध कर देती थीं। इसी लिए उनकी सेनाके लोग उत्साहित और उत्तेजित होकर ख़ूब लड़ रहे थे। यद्यपि अँगरेज़ोंने शूरतासे युद्ध किया तथापि ३१ तारीख† तक उन लोगोंका प्रवेश क़िलेके भीतर होने न पाया।"

---

† इसी रातको महारानीने एक विलक्षण स्वप्न देखा। उन्होंने देखा कि

जिस समय महारानी लक्ष्मीबाईको अँगरेज़ी-सेनासे युद्ध करनेका निश्चय करना पड़ा उस समय उन्होंने रावसाहब पेशवाको एक पत्र लिखकर यह निवेदन किया था कि इस संकटके समय आप हमारी कुछ सहायता कीजिए। रावसाहबने अपने सेनापति तात्याटोपेको झाँसी जाकर महारानीकी सहायता करनेके लिए आज्ञा दी। तात्या टोपे अपने साथ बीस हज़ार फौज लेकर कालपीसे रवाना हुए और जिस समय अँगरेज़ी सेना और झाँसीकी सेनाका खूब घनघोर युद्ध हो रहा था, ठीक उसी समय वे झाँसीके समीप आ पहुँचे। जब यह समाचार तार द्वारा रोज़ साहब ने सुना तब वे बड़े चिंतित हुए और मनमें सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए। इसका कारण यह है कि अँगरेज़ी फौज बहुत न थी। जो कुछ थी वह सब क़िलेको घेरने, उस पर धावा करने और मारकोंकी जगहकी नाकाबन्दी करनेके लिए नियत की गई थी। रोज़ साहब को यही भय था कि यदि यह सेना वहाँ से हटाई जायगी तो क़िला अपने हाथसे जाता रहेगा; इतनाही नहीं, किन्तु बाहरकी सहायता पाकर महारानीकी सेना हम लोगोंमेंसे एकको भी जीता न छोड़ेगी। ऐसी स्थितिमें विजय लाभ करना बहुत कठिन काम था; परंतु रोज़ साहब युद्ध-विद्यामें बड़े निपुण थे। उन्होंने युक्ति-पूर्वक अपनी सेनाका प्रबंध करके दोनों शत्रुओंका एकदम सामना किया और अंतमें विजयश्री को अपने वश कर लिया !

एक गौर वर्ण और मध्यम अवस्था की सुंदर सुहागिनी स्त्री—जिसकी नाक सरल थी, माथा ऊँचा था, नेत्र काले और बड़े थे—सब आभूषणोंसे विभूषित हो, लाल रंगकी साड़ी पहने, अंचल बाँधे, क़िलेके बुर्ज़ पर खड़ी है और अत्यन्त कठोरतासे तोपके लाल-लाल गोले अपने कोमल हाथोंमें झेल रही है; और महारानी से कह रही है कि देख, मेरे हाथ गोले झेलते झेलते कैसे काले हो गये हैं। मैं ही इन गोलोंको झेल सकती हूँ।

सर ह्यू-रोज़ने ३१ तारीखको रात्रिके समय पहली ब्रिगेडके कुछ शूर सिपाहियोंको गुप्त रीतिसे कालपीके रास्ते पर भेज दिया और २४ पौंडसकी दो तोपें ओरछाकी सड़क पर लगा दीं। शहर के भीतरसे लोगोंका आना-जाना बिलकुल बंद कर दिया और रात-भर क़िले पर तोपें चलती रहीं; जिससे लोगोंको यह न मालूम हो कि अँगरेजी फ़ौज कमज़ोर हो गई है। इस प्रकार युक्ति-पूर्वक रोज़ साहबने अपने दोनों शत्रुओंकी सेनासे युद्ध करनेकी तैयारी की।

तात्या टोपे बाजीराव पेशवाका बड़ा पराक्रमी और शूर नौकर था। जब बाजीरावके पुत्र नाना साहब पेशवा अँगरेज़ोंके विरुद्ध बलवा † करनेके लिए खड़े हुए तब तात्याटोपेने उनकी बहुत सहायता की। यथार्थमें तात्याटोपे ही के पराक्रमोंसे सन् १८५७ ई०के बागियोंका पक्ष बहुत प्रबल हो गया था, बलवेके समय उसके विषयमें विलायत के 'डेली न्यूज़' समाचार-पत्रमें लिखा था—'तात्या महाराष्ट्र जातिका एक ब्राह्मण है। वह उच्च कुलका पुरुष नहीं है। उसने डाँका डालने और लूट-मार करनेका काम खूब सीखा है। वह बड़ा बुद्धिमान् है; परन्तु शिक्षित नहीं है—उसे लिखना-पढ़ना नहीं आता है। युद्ध के काममें वह निपुण है, इसी कारण उसके साथी उसका आदर और मान करते हैं। वह अत्यन्त बलवान् है। अपनी

---

† बाजीरावके साथ जो संधि की गई थी उसमें यह लिखा था कि बाजीराव के निजके और उनके कुटुम्बके निर्वाहकेलिए (ये उस संधि-पत्रके शब्द हैं—For the support of himself and his family) बहुत पेंशन दी जायगी। चौथे अध्यायमें इस बातका उल्लेख किया गया है कि नाना साहबकी अपने पिताकी पेंशन पानेकी प्रार्थना किस तरह अस्वीकृत की गई। अँगरेज़ोंके अन्यायसे अप्रसन्न होकर नाना साहबने बलवेका झंडा खड़ा किया और कुछ दिनों तक उन लोगोंको बड़ा तंग किया।

शूरता और बहादुरीसे वह अपने साथियों को सदा अपने वश में रखता है। उसकी अवस्था ४० वर्षके क़रीब है। वह बड़ा साहसी और निर्भय पुरुष है। उसका चेहरा शौर्य-युक्त और सतेज है। उसकी आँखोंमें खूब तेज भरा हुआ है। वह सदैव सादे वस्त्र पहनता है। उसकी शरीर रक्षाके लिये २५-३० आदमी सदा उसके साथ रहते हैं। वह सदा घोड़े पर सवार होता है; परन्तु जब कभी थकावट आ जाती है या रणभूमिमें ज़ख़मी हो जाता है तब वह पालकीमें बैठकर चलता है। वह अपनेको नाना साहब पेशवाका प्रतिनिधि बतलाता है"। तात्याटोपेकी अलौकिक शूरता का वर्णन करते हुए एक अँगरेज़ी ग्रन्थकारने उसको हिंदू गेरीबाल्डी* कहा है। सच है, जिस प्रकार गेरिबाल्डीने अपने इटली-देशको स्वतंत्र करनेका यत्न किया, उसी प्रकार तात्याटोपेने भी हिंदुस्तानको स्वतंत्र करनेका यत्न किया है, और जैसे पोप, आस्ट्रिया का राजा, नेपल्सका राजा और उनके अनुयायी गेरीबाल्डीको आदरकी दृष्टिसे नहीं देखते; वैसे ही प्रायः सब अँगरेज़ी अधिकारी और उनके अनुयायी तात्याटोपेको भी आदरकी दृष्टिसे नहीं देखते !

पहली अप्रैलको प्रातःकाल हीसे अँगरेज़ोंका तात्याटोपेसे युद्ध आरम्भ हुआ। ऊपर लिखा गया है कि युद्धके एक दिन पहले रात्रिके समय रोज़ साहबने अपनी सेना गुप्त रीतिसे भिन्न-भिन्न स्थानोंमें भेज दी थी, इसलिये पेशवाकी सेनाके अग्रभागके लोगोंको

---

*देखिये, Empire in India नामके ग्रंथमें यह लिखा है:—
"With a little more gallantry, with a few positive exploits added to his negative strategic feats Tantia Topee would soon have become a Hindoo Garibaldi."

यह मालूम हुआ कि अँगरेज़ी-सेना बहुत थोड़ी है और हम लोग उसका सहज हीमें नाश कर डालेंगे। पेशवा की सेना में ग्वालियरकी कंटीनजन्ट फौज भी थी। उसने कानपुरमें जनरल विंढमकी फौजको पराजित किया था। इसलिए वह अपनी विजयकी खुशी से फूल गई थी और यह समझती थी कि हमारे सामने अँगरेज़ी फौज क्या ठहर सकती है? तात्याकी निजकी फौज जो सबके पीछे बेतवा नदीके किनारे खड़ी थी, वह चरखारी पर विजय प्राप्त करनेके कारण वृथा अभिमानमें चूर थी। मतलब यह कि पेशवाकी यह सेना जो महारानी लक्ष्मीबाईको सहायता करनेके लिए आई थी, अपने ही रागमें मस्त थी। उसने इस समय अपने शत्रुकी सेनाकी युक्ति और सामर्थ्यका कुछ भी विचार न किया। इसका परिणाम यह हुआ कि युद्ध का आरंभ होते ही पेशवा की सेनाका एक भाग झाँसीके क़िलेके लोगोंकी सहायताके लिए ज़ोरसे आगे बढ़ता चला गया। परंतु ज्यों ही वह अँगरेज़ोंके निशानेके भीतर आया त्यों ही उस पर दाहिनी ओर से कप्तान लाइटफूटके रिसाले और कप्तान प्रेटीजानकी पलटनने और बाई ओरसे रोज़ साहबकी तोपोंने आक्रमण किया। इस भयंकर आक्रमणसे पेशवाकी सेना घबड़ाकर इधर-उधर भागने लगी। तब तात्याटोपेकी तोपें अँगरेज़ी-सेना पर धड़ाधड़ गोले बरसाने लगीं। पेशवाकी सेना कुछ समय तक तो धैर्यसे समर-भूमिमें अड़ी रही; परंतु जब दाहने बायें दोनों ओरसे उस पर अँगरेज़ी रिसाला, पलटन और तोपोंका आक्रमण होने लगा तब निरुपाय होकर उसने शत्रुको पीठ दिखा दी। इस पराजित सेनाके पीछे दो मील पर, बेतवा नदीके किनारे जंगलमें तात्याकी सेना छिपी हुई थी। सर ह्यू-रोज़ साहबको यह समाचार किसी भेदिये द्वारा मालूम हो गया। उन्होंने तुरन्त कप्तान लाइटफूटको "इगलट्रूप" की चार तोपें और "फील्ड-बैटरी"

देकर उधर भेज दिया। अँगरेज़ी-सेनाको अपनी ओर आते देख तात्याकी सेनाने जंगलमें आग लगा दी। जंगलमें आग लगा देने पर भी अँगरेज़ी-सेना बेतवा नदीके किनारे तक चली गई। उस समय दोनों सेनाओंमें भयंकर युद्ध होने लगा। दोनों ओरकी तोपों से लाल-लाल गोले बरसने लगे। परंतु अँगरेज़ी-सेना स्थान पर थी; इसलिये दूसरे दलकी तोपोंसे उनकी कुछ हानि नहीं हुई। अँगरेज़ घुड़सवारोंने बड़ी हिम्मतके साथ नदी पैर कर तात्याकी फौज़ पर हमला किया। तात्याकी फौज़ इनके सामने ठहर न सकी। वह अपनी बड़ी-बड़ी तोपें रणभूमिमें छोड़कर भाग खड़ी हुई। वे तोपें बहुत भारी थीं। उनके पहिये नदीकी रेतमें घुस गये थे। इस कारण वे लोग भागते समय इन तोपोंको अपने साथ न ले जा सके। ये सब तोपें और उनका सामान गोला-बारूद अनायास अँगरेज़ी-सेनाके हाथमें गया। इतना ही नहीं; किन्तु अँगरेज़ी-सेनाने तात्याकी फौज़का सोलह मील तक पीछा किया और उसकी सारी सामग्री छीन ली। तात्पर्य यह है कि झाँसीके दुर्भाग्य या पेशवाकी फ़ौजके व्यर्थ घमंडसे तात्या टोपेकी हार हुई और इस युद्धमें उसके १५०० आदमी खेत रहे! रोज़ साहबकी सेनाको इस विजय प्राप्तिसे बड़ा आनन्द हुआ। शत्रुओंकी सारी सामग्री अनायास हाथ आने-से अँगरेज़ी-सेनामें सब लोगोंको एक प्रकारकी नई हिम्मत आ गई। इधर झाँसीकी फौज़ आठ-दस दिन लगातार युद्ध करते रहने के कारण थक गई थी। उसको तात्या टोपेसे सहायता पानेकी जो आशा थी वह तो नष्ट हो ही गई; किन्तु इससे अँगरेज़ी-सेनाको जो लाभ हुआ वह झाँसीकी फौज़के लिये इष्ट न था। इस प्रकार निराश होकर झाँसीकी फौज़ क़िलेके भीतर हाहाकार मचाने लगी। जिन शूर और प्रतापी तात्या टोपेने अनेक युद्धोंमें विजय पाई थी वही इस समय भाग्य-वश हार कर कालपीको भाग गये! वहाँ जाकर

उन्होंने अपने स्वामी नाना साहब पेशवासे जो कुछ कहा उसका भाव नीचे लिखे श्लोकसे जान पड़ेगा। यह श्लोक अर्जुनने अपने विषयमें खेद-पूर्वक कहा है :—

त एवामी बाणास्तदपि हरलब्धं धनुरिदं
स एवाहं पार्थः प्रमथितसुराराज्ञिनिचयः,
इमास्तास्ता गोप्यो हरिचरणचित्तैकशरणाः;
ह्रियंते गोपालैर्विधिरपि बलीयान्नतु नरः ॥

सर ह्यू-रोज़ने तात्याटोपेको इस तरह भगाकर झाँसीका क़िला लेनेका दृढ़ संकल्प किया। २३ मार्चसे लेकर ३ अप्रेल तक अँगरेज़ी-सेना क़िलेको घेरकर लड़ती रही; परन्तु महारानी लक्ष्मी-बाईके अतुल धैर्य और दृढ़ निश्चयसे अब तक क़िलेमें उनका प्रवेश न हो सका। यह दशा देख रोज़ साहबने बड़ी चतुरता-पूर्वक अपनी सेनाको तीन भागोंमें बाँटकर दृढ़ताके साथ झाँसीके क़िले पर धावा करनेका प्रबन्ध किया। क़िलेके पश्चिमकी ओरसे धावा करनेके लिये जो सेना भेजी गई थी उसके सेनापति मेजर गाल साहब थे। दाहिनी ओरकी सेनाके सेनापति ले० क० लिडेल, कप्तान राबिन्सन और ब्रिगेडियर स्टुअर्ट थे। बाईं ओरसे धावा करने-वाली सेनाके मुख्य सेनानायक ले० क० लोथ और मेजर स्टुअर्ट थे। यह सब सेना गुप्त रीतिसे तैयारी करके तीसरी प्रहरको अपने स्थान पर नियत समय पर जा डटी। पहले भागकी सेनाने सीढ़ी लगाकर क़िलेके भीतर प्रवेश करनेका यत्न किया और दूसरे भाग-की सेनाने तलवार और बन्दूक लेकर शत्रुओंसे सम्मुख लड़ाई कर शहरके भीतर जानेका यत्न किया। क़िलेके पहरेवालोंको जब मालूम हुआ कि अँगरेज़ी-सेना लड़नेको चली आ रही है तब उन्होंने भय-सूचक बाजे बजाकर भीतरकी सेनाको सचेत कर दिया। इस समय क़िलेमें रहनेवालोंकी दशा किसी प्रकार संतोषदायक न थी।

लगातार ग्यारह दिन तक क़िले पर तोपके गोले बरसते रहे। इस कारण क़िलेकी दीवारका बहुत सा भाग कमज़ोर हो गया था और बहुतसे शूर-वीर काम आ चुके थे। तात्याटोपे का पराभव सुनकर सब लोग निराश हो गये थे। वे लोग यह सोचने लगे थे कि पेशवाकी बलवान् सेनाका जिन लोगोंने पराभव किया है वे साधारण मनुष्य नहीं हैं—उनके साथ हम लोग कब तक लड़ सकेंगे! इस तरह महारानी लक्ष्मीबाईकी सेनामें उदासीनता और निराशा छा गई थी। ऐसी अवस्थामें भी उन्होंने अपने धैर्य और निश्चयका त्याग नहीं किया। उन्होंने अपनी फ़ौजके सारे अधिकारियों, सरदारों और सिपाहियोंको इकट्ठा करके कहा कि "आज तक आप लोगोंने जिन जिन लड़ाइयोंमें विजय प्राप्त की है वह कुछ पेशवाकी फ़ौजके सहारे नहीं प्राप्त की है। आप अपने ही बल और पराक्रमसे सदा विजयी हुए हैं। आज तक आप लोगोंने अपना स्वाभिमान, अपना धैर्य और अपनी शूरता जिस प्रकार प्रकट करके अपना नाम प्रसिद्ध किया है उसी प्रकार अब भी हिम्मत बाँधकर युद्ध करना चाहिए। झाँसीकी रक्षा आप ही लोगोंके हाथमें है। पेशवाकी सहायताकी आप लोगोंको कुछ भी अपेक्षा न करनी चाहिए।" इस प्रकार सेनाके लोगोंको प्रोत्साहित और उत्तेजित करके महारानीने अपने मुख्य-मुख्य सरदारोंको स्वर्ण-कङ्कण और वस्त्राभूषण पुरस्कारमें दिये। इससे झाँसीके शूर बुंदेलों, मराठों और मुसलमानोंको युद्ध करनेका फिर साहस हो गया। झाँसीके प्रसिद्ध गोलन्दाज़ ग़ुलाम गौसख़ाँने तोपख़ानेका उत्तम प्रबंध करके पहलेकी भाँति अँगरेज़ी-सेना पर गोला फेंकना आरंभ किया। कुँअर ख़ुदाबख़्श और दूसरे कितने ही बड़े-बड़े सरदारोंने अपने-अपने मोरचे सँभालकर अँगरेज़ी-सेनासे युद्ध आरंभ कर दिया। महारानी लक्ष्मीबाई क़िलेकी रक्षाके लिये स्वयं परिश्रम कर रही थीं। उस रातको

बड़ा ही भयंकर संग्राम हुआ । अँगरेज़ गोलन्दाज़ गोले चलानेमें कमाल करते थे । उनके गोलोंकी भयंकर वृष्टिसे क़िलेकी दीवारमें बड़े-बड़े छेद हो गये । राजमहलको भी गोलोंसे बहुत हानि पहुँची, महलके भीतर गणपतिका एक बहुत ही उत्तम मंदिर था । वहाँ भादोंके महीनेमें गणेश-चतुर्थीके दिन बड़ा उत्सव होता था । गोलोंकी वृष्टिसे यह मंदिर चूर-चूर हो गया । चार आदमियोंकी मृत्यु भी हुई ! महलमें हाहाकार मच गया और सब लोगोंका धीरज जाता रहा; और वे "किं कर्तव्य-विमूढ़" हो गये । परंतु लक्ष्मीबाईका धीरज तब भी अटल बना रहा । वे बड़ी सावधानीसे क़िलेकी रक्षा करती रहीं । कमरमें तलवार बाँधकर और हर एक मोरचों पर स्वयं जाकर वे फौजके अधिकारियोंको उत्तेजित करती थीं । ऐसे भयंकर समयमें उनका साहस और वीरता दूनी हो गई थी । महारानी लक्ष्मीबाईके इस प्रकार उत्साह दिलाने पर झाँसीकी सेनामें फिरसे हिम्मत आ गई और अत्यन्त घनघोर युद्ध होने लगा ।

अँगरेज़ी फौजने झाँसी विजय करनेके लिए जब शहरके मुख्य दरवाज़े पर हमला किया तब शहरकी दीवार और क़िलेके बुर्ज परसे तोपके गोले छूटने लगे । कुछ समय तक अँगरेज़ी-सेना पर अग्निकी लाल चद्दर छाई हुई देख पड़ती थी । बंदूकोंकी गोलियोंकी मार, तोपोंके गोलोंकी वृष्टि और अन्य प्राण-नाशक शस्त्रोंके प्रहारसे अँगरेज़ी-सेना घबड़ाने लगी । ऐसी दशामें भी ले० मिकली जान, ले० बेनस और ले० बाक्स आदि अँगरेज़ वीरोंने अपने जीवनकी आशा परित्याग करके बड़े साहसके साथ शहरकी दीवार पर सीढ़ी लगा कर चढ़ जानेका यत्न किया; परन्तु भीतरके वीर योद्धाओंके सम्मुख उनमेंसे एक भी ठहर नहीं सका । भीतरकी सेनाने झाँसी शहरकी दीवार और मुख्य दरवाज़ेकी रक्षा भली-भाँति की । इतने

में ले० डिक और ले० मिकली जान बड़ी होशियारीसे संकटोंका सामना करते हुए सीढ़ी लगाकर दीवार पर खड़े हो गये और अपनी पलटनको बुलाने लगे। परंतु झाँसीकी फौज़ने उनको तुरंत ही मार डाला। यही हाल ले० बोनस और फाक्सका हुआ। तात्पर्य यह कि अँगरेज़ी-सेनाने शहरकी दीवार पर चढ़ जानेका बहुतेरा प्रयत्न किया; पर झाँसीकी फौजने उनका यह उद्देश सिद्ध होने न दिया।* और उधर दक्षिणकी ओर जब ले० डिकके अधिकारकी

---

* इस लड़ाईका जो वर्णन डाक्टर लो साहबने किया है उससे झाँसीकी सेनाकी शूरता अच्छी तरह प्रकट होती है। इन्होंने लिखा है।

† " No sooner did we turn into the road leading towards the gate than the enemy's bugles sounded and a fire of indescribable fierceness opened upon us from the whole line of the wall, and from the lowers of the fort overlocking this site. For a time it appeared like a sheet of fire, out of which burst a storm of bullets, round shots and rockets, destined for our annihilation. We had upwards of two hundred yards to march through this fiendish fire, and we did it, and the Sappers planted the ladders against the wall in three places for the stormers to ascend; but the fire of the enemy waxed stronger and amid the chaos of sounds of vollies of musketry and roaring of cannon, and hissing and bursting of rocket stink-pots, infernal machines, huge stones, blocks of wood and trees, all hurled upon their devoted heads, the men wavered for a moment, and sheltered themselves behind stones. But the ladders were there, and there the sappers, animated by the heroism of their officers, keeping

सेनाका पराजय हो गया तब आकमन साहबने महारानी लक्ष्मीबाई-की सेनामें घुसकर उनकी शक्तिके नाश करनेका यत्न किया। और ब्रिगेडियर स्टुअर्ट और कर्नल लोथने अपनी २५ वीं और ८६ वीं पैदल पलटनकी सहायतासे झाँसी शहरका ओरछा-दरवाज़ा हस्त-गत कर लिया। यह दशा देख शहरकी फौज निर्भय होकर और अपने प्राणोंका मोह छोड़कर अँगरेज़ी-सेनाको काट-काट कर फेंकने लगी। परन्तु अँगरेज़ी-सेना टिड्डी-दलकी तरह भीतर घुसती ही गई। दक्षिण-ओरकी सेनाके विजयका समाचार जब दाहिनी-ओरवालोंको मिला तब वे भी फिरसे हिम्मत बाँधकर क़िलेकी दीवार पर सीढ़ी लगाकर चढ़ने लगे। दीवारकी रक्षाके लिए जो बुंदेले लोग नियत किये गये थे उन्होंने अँगरेज़ी-सेना पर घोर आक्र-मण कर उसे बड़ी भारी क्षति पहुँचाई; पर दुर्भाग्य-वश उनसे क़िलेकी रक्षा अंत तक न हो सकी। थोड़े ही समयमें हज़ारों गोरे शहरकी दक्षिण दीवार पर देख पड़ने लगे। इस विजयमें दूलाजी बुंदेलेसे अँगरेज़ी-सरकारको बहुत सहायता मिली। कहते हैं कि इस उपकारके बदले अँगरेज़ी सरकारने अपने परम राज-निष्ठ दूलाजीको दो गाँव जागीरमें दिये। इस तरह ओरछा दरवाज़ेको

---

firm hold until a wound or death struck them down beneath the walls. It seems as though Pluto and the furies had been loosed upon us; and inside bugles were sounding and tomloms beating madly, while the cannon and the musket were booming and rattling, and carrying death among us fast. At this instant on our right three of the ladders broke under the weight of men, and a bugle sounded on our right for the Europeans to retire ! !"—*Central India*. P. 254.

हस्तगत करनेके पश्चात् शीघ्र ही सर ह्यू-रोज़ साहबने झाँसीकी सेना को वहाँसे मार भगाया और बुर्ज़ पर अपना अधिकार कर लिया। यहाँसे उन्होंने शहरके भीतर आगे बढ़कर राजमहलको हस्तगत करनेका निश्चय किया।

महारानी लक्ष्म बाई क़िलेके सारे मोरचों पर स्वयं जाकर अपनी सेनाको उत्साह दिलाती और बड़ी सावधानीसे लड़ती थीं। जब उन्हें यह समाचार मिला कि शहरके दक्षिण-दरवाज़े पर शत्रु-की सेनाने अपना अधिकार जमा लिया है और वहाँसे गोरे लोग शहरमें घुसते चले जा रहे हैं तब उन्हें अत्यन्त दुःख हुआ। वे कुछ समय तक "किं कर्तव्य-विमूढ़" होकर कुछ सोच-समझ न सकीं यह देखकर उनका हृदय बड़ा व्याकुल हुआ कि १२ दिन तक भयंकर संग्राम करने पर भी अँगरेज़ोंने झाँसी विजय कर ही ली क़िलेकी दीवार पर खड़े होकर जब उन्होंने शहरके दक्षिण भागकी ओर देखा तब शहरके भीतर हज़ारों गोरोंको घूमतेदेख कर और शहर-वासियोंके हाहाकारको सुनकर क्षण भरके लिए उनका धीरज छूट गया! उनके चेहरे पर निराशा और भयके चिह्न देख पड़ने लगे। इस कुसमयमें भी हृदयको मज़बूत कर उन्होंने विचारा कि यह शरीर अनित्य है; इसे किसी दिन परित्याग करनाही पड़ेगा; तब का-पुरुषोंकी तरह कायरता दिखलाना बड़ी ही लज्जाकी बात होगी। युद्धमें प्राण देकर स्वर्गमें जाना सबसे उत्तम है। जो युद्धसे पीठ फेरते हैं उनकी गति नहीं होती, और जो सम्मुख युद्धमें प्राण देते हैं वे मुक्त हो जाते हैं। यश-अपयश, हानि-लाभ दैवाधीन होते हैं। मनुष्यको यथाशक्ति यत्न करना चाहिए—चाहे उसमें सफलता हो या न हो। इस प्रकार अपने मनमें विचारकर लक्ष्मीबाईने निराशा और भयका त्याग किया; और अपनी स्वाभाविक शूरताकी स्फूर्तिसे उत्तेजित होकर अँगरेज़ोंके साथ अंतिम युद्ध करनेका निश्चय

किया। बहुत दिनोंसे महारानीके यहाँ लगभग डेढ़ हज़ार अफ़ग़ानी मुसलमान नौकर थे। उन्हें साथ लेकर स्वयं हथियार बाँधे वे तुरंत क़िलेके नीचे उतरीं और बड़े फाटकसे बाहर निकलकर दक्षिणकी ओर उन्होंने धावा किया। शहरकी दक्षिण दीवार फाँदकर जो हज़ारों गोरे भीतर घुस आये थे उनमें और महारानीकी सेनामें घोर युद्ध होने लगा। लक्ष्मीबाई अपने हाथमें नंगी तलवार लिये, घोड़ेपर सवार हो सबसे आगे जा रही थीं। पीछे-पीछे उनकी अफ़गानी सेना आ रही थी। ज्यों ही दोनों पक्षके लोग एक दूसरेसे भिड़े त्यों ही अफ़गानी लोग गोरोंको तलवारसे काट-काटकर फेंकने लगे। जब गोरोंने देखा कि तलवार युद्धमें अफ़ग़ानियोंका सामना करना व्यर्थ है तब वे लोग इधर-उधर भाग गये और घरोंकी आड़से महारानीकी सेना पर बन्दूकें चलाने लगे। पीछेसे अँगरेज़ी सेना शहरमें और आ गई। उसने तलवारसे न लड़कर दूरसेही बन्दूक़ चलाना शुरू किया। इस प्रकार महारानीकी फौज पर दोनों ओरसे गोरों का गोलियाँ बरसने लगीं। उस समय महारानीके एक पुराने शुभचिन्तक ७५ वर्षके बूढ़े सरदारने हाथ जोड़कर महारानीसे कहा कि "अब आगे बढ़कर गोलीसे मरना अच्छा नहीं है। गोरे लोग मकानोंकी आड़से गोली चलाते हैं। इसके सिवा हज़ारों अँगरेज़ शहरमें घुस गये हैं। शहरके सब दरवाज़े खुले पड़े हैं। ऐसी अवस्थामें यहाँ लड़कर जान देनेके अतिरिक्त और कुछ लाभ नहीं है। इससे तो यही अच्छा है कि आप क़िलेमें चल कर भावी प्रबंधका कुछ विचार करें।" उसकी बात स्वीकार कर महा रानी अपनी बची बचाई फौज साथ लेकर क़िलेमें लौट गईं।

इधर झाँसीके चारों फाटकोंसे शहरके भीतर घुसकर गोरे लोगोंने "बिजन" बोलना आरम्भ करदिया। जो कोई हिन्दुस्तानी

उन्हें मिलता वही उनकी गोली या तलवारका शिकार बनता था। पाँच वर्षके बालकसे लेकर अस्सी वर्षके बूढ़े तक जो कोई मिला वह जानसे मारा गया। शहरके कई मुहल्ले आग लगाकर जला दिये गये। उस समय शहर वासियोंकी दशा बड़ी शोचनीय थी। दुःखके कारण चारों ओर कोलाहल और हा-हा कार मच रहा था जहाँ जिसको ठिकाना मिला, वहीं वह जी बचाकर या तो भाग गया या छिप रहा। बहुतसे कायर पुरुषोंने स्त्री वेष धारणकर अपने प्राणोंकी रक्षाकी। तात्पर्य यह है कि जिसको जिस प्रकार जी बचानेकी युक्ति सूझी उसने उसी युक्तिसे काम लिया।

बहुतसे लोग शहरके बीच एक बाग़में एकत्र हुए और जब गोरे लोग वहाँ आये तब उन लोगोंने बड़े नम्र भावसे कहा कि "हम लोग इस शहरके निवासी हैं; पर लड़नेवाले विद्रोही नहीं हैं। हम निरपराधी प्रजा हैं। आप कृपा करके हम लोगोंको प्राण-दान दीजिए।" उन लोगोंकी ये करुणाभरी बातें सुन कर गोरोंके एक अफ़सरको दया आई। उसने उन लोगोंको अभय वचन देकर बाग़के चारों ओर पहरा खड़ा कर दिया और फाटकमें ताला बंद कर दिया। उसने इस बातका भी प्रबंध कर दिया कि बाहरसे कोई लोग बाग़के भीतर जाने न पावें। इसमें संदेह नहीं कि उस गोरे अफ़सरने यह बड़ी ही सुजनताका काम किया। दूसरी ओर गोरे लोगोंने प्रजाके घरोंमें घुसकर उसे मारना और उसके धन-वैभवको लूटना आरम्भ कर दिया। घरमें गोरोंके पहुँचते ही यदि उस घर का मालिक अपना सब धन उसके हवाले कर देता तो उसकी जान बच जाती थी; नहीं तो तुरंत ही उसका सिर काट लिया जाता था, अथवा गलेमें रस्सी या कपड़ा बाँधकर लटका दिया जाता था। जो मनुष्य एक बार धन देकर छुटकारा पाता वह यदि दूसरी बार किसी गोरेके पाले पड़ जाता तो तुरंत गोलीसे मार दिया जाता

और हमला करनेसे झाँसीकी महारानी लक्ष्मीबाईका इतिहास प्रसिद्ध और वैभव-सम्पन्न राज-प्रासाद नष्ट हो गया! राजमहलमें घुसतेही अँगरेज़ी-सेनाने वहाँके सब लोगोंको मार डाला। परन्तु महलके पीछे घोड़ोंका जो एक छोटासा अस्तबल था उसमें अनुमान ५० सिपाही छिपे हुए बैठे थे। जब उनका पता लगा तब ८६ वीं और तीसरी पलटनके सिपापियोंने उन पर धावा किया। वे लोग भी बड़े शूर थे। उन्होंने अपनी तलवारें लेकर अँगरेज़ोंसे युद्ध किया। इनके धैर्य और पराक्रमको देखकर अँगरेज़ी-सेना घबड़ा उठी। परंतु अंतमें इनकी संख्या कम होनेके कारण इन लोगोंको हार खानी पड़ी। तथापि जब एक-एक करके प्रत्येक वीरधराशायी हुआ तभी वह अस्तबल अँगरेज़ोंके हाथ आया! जब तक उनमेंसे एक भी वीर जीता रहा तब तक किसी गोरेकी हिम्मत अस्तबलमें घुसनेकी न हुई। जब सब राजमहल अँगरेज़ोंके हाथ आगया तब उनलोगोंने वहाँ खूब आनन्द मनाया और वहाँका सामान या तो लूट लिया या नष्ट कर डाला। झाँसीके सूबेदार रामचन्द्रको लार्ड विलियम बेंटिकने "यूनियनजैक" नामका जो झंडा दिया था वह जब गोरोंकेहाथ आया तब उन्होंने खूब आनंद मनाया। तुरंत ही वह झंडा महलके ऊपर खड़ा कर दिया गया मानों झाँसीमें ब्रिटिश-राज्य फिरसे स्थापित हुआ।

इधर क़िलेमें लोग नाना प्रकारके विचार कर रहे थे। जब महारानीने देखा कि हमारी सेना हारती ही जाती है तब वे क़िलेके ऊपर राजमहलमें लौट गईं और शोकसे व्याकुल होकर दीवानखानेमें जाकर बैठ गईं। उस मानी और तेजस्विनी स्त्रीकी यह दशा देखकर और उसके अलौकिक पराक्रमका यह दुःखकारक परिणाम मनमें लाकर दरबारके सब लोग अत्यंत दुखित हुए। वे सोचने लगे कि अब तक क्या करना चाहिए। कुछ समयके बाद

महारानी शहरकी दशा देखनेके लिए छत पर गईं। उस समय शहरका हृदयद्रावक दीन दशा देखकर उनके अन्तःकरणमें बड़ी वेदना हुई। उनकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी! हलवाईपुरा झाँसीका सबसे बड़ा मुहल्ला था। उसमें बहुतसे धन-सम्पन्न सरदार और साहूकार लोग रहते थे। उसके जल जानेसे सारे शहरमें हा-हाकार हो रहा था। जिधर देखो उधर रोना पीटना, चिल्लाना और भागना जारी था। पल-पलमें बन्दूकों द्वारा सैकड़ों निरपराधी लोगोंके प्राण व्यर्थ लिये जाते थे। इस प्रकारका भयंकर दृश्य देखकर महारानीका दयार्द्र अन्तःकरण दुःखसे भर आया। वे निस्तब्ध होकर आध घंटे तक वहीं खड़ी रहीं और अपनी प्रजाकी शोक-जनक स्थिति देखकर आँखोंसे आँसू बहाती रहीं। इसी समय क़िलेके मुख्य फाटकके संरक्षक कुंअर खुदाबख़्श और तोपख़ानेके प्रधान अधिकारी गोलन्दाज गुलाम गौसखाँके गोली लग कर मरनेका समाचार महारानी को विदित हुआ! इस शोक-जनक समाचारसे महारानीकी सबरही-सही आशाएँ भी भंग हो गईं;उनका धीरज छूट गया। उनको अपने दुर्भाग्यके चिह्न प्रत्यक्ष दिखाई पड़ने लगे। उन्होंने अपनी सेनाके सब सरदारोंको बुलाकर कहा—"आज तक आप लोगोंने अँगरेज़ी-सेनासे भयंकर युद्ध करके झाँसीकी रक्षाकी; परन्तु अब ऐसे चिह्न नहीं देख पड़ते कि हम लोग विजय प्राप्त कर सकेंगे। हमारे बड़े-बड़े सूर-वीर सरदार और चतुर गोलंदाज़ सबके सब युद्धमें काम आ गये। शहरकी दीवार और दरवाज़ोंके सारे रक्षक मारे गये। शहरमें अँगरेज़ोंने अपना अधिकार जमा लियाहै और स्थान-स्थान पर पहरा-चौकी लगा दी है। अब क़िले पर धावा करके उसको हस्तगत करना उनके लिये बहुत ही सहज है। सबेरा होते ही वे लोग क़िले पर चढ़ जावेंगे और हम लोगों को क़ैद कर लेंगे। फिर न

मालूम वे लोग किस तरह हमारे शरीर और प्राणोंका नाश करेंगे। इस कारण मैंने संकल्प किया है कि जिस कोठरीमें गोला-बारूद रक्खा है वहाँ जाकर, उसमें आग लगाकर मैं अपना अन्त करूँगी मैं अपने शरीरको—जीवित रहने तक—गोरे लोगोंके स्पर्शसे भ्रष्ट न होने दूँगी। इसलिये वे लोग यहाँ बने रहें जिनको मेरे साथ मरना हो। शेष सब लोग अपने-अपने प्राण बचाकर रात होते ही क़िलेके नीचे उतर जावें और अपनी रक्षाका उपाय करें"। महारानीके ये अन्तिम शब्द सुन कर सब लोग बड़े विस्मित हुए। उस समय एक वृद्ध सरदारने धीरताके साथ कहा कि बाई साहब, आप शान्त हूजिए। इस शहर पर जो विपत्ति आई है उसके नाशका हम लोगोंके पास अब कोई उपाय नहीं है। संसारमें सबके काम पूर्व-सञ्चित कर्मोंके अनुसार होते हैं। हिन्दू-शास्त्रकारोंने आत्म-हत्याकी महापातकोंमें गणना की है इस कारण आप सरीखी वीरबाला राजमाताको आत्म-हत्या करना उचित नहीं है। पूर्वजन्ममें जो पाप किये हैं उनका फल हम इस जन्ममें भुगत रहे हैं। इस जन्ममें पाप करके अन्य जन्मके लिए हमें पाप-कर्म सञ्चित न करना चाहिए। इस समय हम पर जो दुःख आ पड़ा है उसे शांति-पूर्वक सहन करना चाहिए। आप वीर स्त्री हैं। आपको तो आत्म-हत्याका विचार भी मनमें न लाना चाहिए; किन्तु इस विपत्तिकी दशासे पार होनेका कोई उपाय सोचना चाहिए। यदि क़िलेमें रहना न बन पड़े तो आज ही रातको क़िलेके बाहर हो, शत्रुओंका घेरा नष्ट कर शहरके बाहर निकल चलना चाहिए। कालपीमें पेशवाकी सेना पड़ी है। वहाँ जाकर उनसे मिलिए। यदि रास्तामें युद्ध होकर आपकी मृत्यु हो तो भी उत्तम है; क्योंकि आत्म-हत्या करके पाप-कर्म सञ्चय करनेकी अपेक्षा सम्मुख युद्धमें मरकर स्वर्ग जाना अति उत्तम है।"

वृद्ध सरदारके इन उत्साह-जनक वचनोंको सुनकर महारानी को बहुत कुछ साहस और धैर्य हुआ। उन्होंने उसकी सलाहसे रण-भूमिमें ही प्राण-त्याग करनेका निश्चय किया। संध्याके समय उन्होंने अपने सब नौकरोंको बुलाकर यथायोग्य पुरस्कार दिया और क़िलेसे बाहर जानेका गुप्त मार्ग दिखला दिया। महारानी जब वहाँसे जानेको तैयार हुईं तब उनकी पुरानी दासियोंको उनके वियोगसे बड़ा दुःख हुआ। सबने आँखोंमें आँसू भरकर महारानीके पैर छुए। कुछ स्वामि-भक्त सेवकोंने महारानीके साथ चलनेकी आज्ञा माँगी। महारानीने ख़ुश होकर उनको अपने साथ चलनेकीआज्ञा दी। महारानीके पिता मोरोपंत तांबे कुछ सरदारोंके साथ, हथियार बाँधे हुए, घोड़े पर सवार होकर, महारानीके साथ चलनेको बाहर निकले। इन लोगोंने राह-ख़र्चके लिए ख़ज़ानेसे रुपयोंकी थैलियाँ निकालकर अपनी-अपनी कमरमें बाँध ली थीं। बहुतसा द्रव्य, जवाहरात आदि एक हाथी पर हौदेमें भरकर वह हाथी इस छोटीसी सेनाके बीचमें कर लिया गया। महारानी लक्ष्मी-बाई क़रीब दो-सौ आदमियोंको साथ लेकर क़िलेके बाहर निकलने को तैयार हुईं। उस समय उन्होंने मर्दानी पोशाक धारण की, बदनमें अँगरखा पहना, सिरमें साफ़ा बाँधा, कमरमें तलवार लट-काई और अपने ढाई हज़ार रुपयेके उत्तम सफ़ेद घोड़े पर वे सवार हुईं! उन्होंने अपने साथ कुछ भी धन नहीं लिया। केवल अपने प्राण-प्रिय दत्तक-पुत्र दामोदररावको अपनी पीठ पर धोतीसे मज़बूत बाँध कर घोड़े पर बैठा लिया!

इस प्रकार तैयार करके वे लोग 'जय शङ्कर' 'हर हर महादेव' की प्रचंड ध्वनि करते हुए क़िलेसे बाहर निकले। अँगरेज़ी सेनाकी स्थिति देखकर महारानी लक्ष्मीबाईने शहरके उत्तरी दरवाज़ेसे कालपी जाना निश्चय किया। जिस समय महारानी झाँसीको

अंतिम नमस्कार कर और शहरके भीतर अपनी छोटीसी सेनाके आगे अपने प्यारे घोड़े पर सवार होकर वायु-वेगसे भागती चली जा रही थीं उस समयका दृश्य देखने योग्य था। उस समय शहर के बहुतेरे लोगोंने सड़क पर खड़े होकर इस वीर बालाके अन्तिम दर्शन किये। महारानी सब लोगोंसे प्रेम-पूर्वक विदा होकर शीघ्रतासे उत्तरके दरवाज़ेसे बाहर चली गई। वहाँ टेहरीकी फौजका पहरा था। पहरेवालोंने उन्हें रोका; पर वे यह कहकर घोड़ा दौड़ाती हुई आगे चली गई कि यह टेहरीकी फ़ौज रोज़ साहबकी सहायताके लिये जा रही है। अँगरेज़ी-सेनाने उनका पीछा किया पर वे उसे अपनी तलवारका मज़ा चखाती हुई चली हीगई। उनके साथ एक दासी, एक सईस और दस-बारह सवार थे शेष सेना पीछे रह गई थी। उसको अगरेज़ोंसे युद्ध करना पड़ा।

जब सर ह्यू-रोज़को यह समाचार मालूम हुआ कि महारानी लक्ष्मीबाई क़िला छोड़कर शहर के भीतरसे भाग गई तब उन्होंने दाँतों अँगुली दबाई और महारानीकी चतुरता और वीरताकी बड़ी प्रशंसा की। उन्होंने तुरंत ही लेफ्टिनेण्ट बौकरको महारानीका पीछा करनेकी आज्ञा दी ले० बौकर निज़ाम सरकारके रिसालेके रण-शूर सवारोंकी एक पलटन अपने साथ लेकर महारानीके पीछे उनको पकड़नेके लिये रवाना हुए। परन्तु रात्रि होनेके कारण अँगरेज़ी सवारोंको उनका ठीक-ठीक पता न लगा। तो भी वे उनके पीछे अपने घोड़े बढ़ाते हुए चले ही गये।

शत्रुकी फौज़में घुसकर बाहर निकल जाना अत्यन्त कठिन है। फिर प्रबल प्रतापी अँगरेज़ोंकी फौज़के भीतर घुस कर बाहर निकल जाना तो और भी कठिन है। परन्तु महारानी लक्ष्मी-बाई अपने अद्वितीय बुद्धि-चातुर्य और अलौकिक बीरतासे प्रबल

अँगरेज़ी सेनामें भी घुसकर बाहर निकल गई ! यह कम अचरज-की बात नहीं है । इस विषयमें कर्नल मेडोज टेलर ने लिखा है:—

"At last, while yet much of night remained, one of the gates in a secluded part of the fortifications was opened and a sad procession issued forth. The Ranee and her sister, or companion, dressed like men with a few of her chosen retainers, rode silently, from the portal, into the gloom beyond...No one spoke, except in whispers, and the gate was closed and barred as the last man passed out. It was to be a ride for life that night; for the English cavalry patrols of the 14th Dragoon, and the Hyderabad contingent, were everywhere vigilant; and to meet any of them was to ensure certain death. How these men were evaded was never ascertained; but the Ranee had perfect guides; she was a fearless rider and she pressed on at a rapid pace into the rough jungly country in which her best safety lay !"

महारानीके क़िला छोड़कर चले जाने पर ५ अप्रेलको सबेरे ले० बेग्रीने क़िले पर चढ़ाई की । जब वे क़िले पर गये तब उन्हें वहाँ सुन-सानके सिवा और कुछ भी देख न पड़ा । जहाँ-जहाँ अँग-रेज़ी-सेनाके लोग जाते थे वहाँ-वहाँ उन्हें सुन-सान ही दिखलाई पड़ता था । किसी आदमीका वहाँ नाम-निशान भी न था । यह दशा देखकर सरकारी-सेनाको बड़ा आनन्द हुआ । सारा क़िला बिना लड़ाई-झगड़ा किये हाथ आ गया ! सरकारी-सेनाने तुरन्त ही वहाँ अपनी विजयका झंडा खड़ा कर दिया ।

महारानीके साथ जो सेना क़िलेसे उतरकर नीचे आई थी और जो उनके साथ शहरके बाहर जा न सकी उसको अँगरेज़ी-

सेनाने आकर घेर लिया। दोनों सेनाओंमें कुछ समय तक भयंकर लड़ाई हुई। महारानीके अफ़ग़ानी सवार और बुँदेलेसरदार प्राणोंकी आशा छोड़कर ख़ूब लड़े; परन्तु अन्तमें सबके सब बड़ी क्रूरता और निर्दयतासे मारे गये! महारानी के पिता मोरोपंत ताँबे धनसे लदा हुआ हाथी अपने साथ लेकर महारानीके पीछे-ही-पीछे भाग रहे थे। यथार्थमें युद्धके समय धनसे लदे हाथी के साथ भागना लाभदायक नहीं होता; परन्तु जब विनाश-काल समीप आता है तब मनुष्यकी बुद्धि भी उलटी हो जाती है। रात्रिमें जब वे हाथीको साथ लेकर भागते चले जारहे थे तब किसीने उनकी जाँघमें एक तलवार मार दी, उससे उन्हें बहुत कष्ट हुआ। तो भी हिम्मत बाँधकर वे धीरे-धीरे भागते ही चले गये। प्रातःकाल होते ही वे दतिया जा पहुँचे और वहाँ एक तमोलीके घर जा कर ठहरे। परन्तु दतियाके राजाने यह समाचार जानकर उनको पकड़ लिया और सब धन-सम्पत्ति ज़ब्त करके उनको अँगरेज़ सरकारके पास झाँसी भेज दिया। उनके वहाँ पहुँचने पर सर राबर्ट हैमिल्टन और सर ह्यू-रोज़ को आज्ञा से राजमहलके सामने दिनके दो बजे उनको फाँसी दे दी गई! इस प्रकार महारानी लक्ष्मी-बाईके पिताका दुःखकारक अन्त हुआ!

छठा अध्याय ।

झाँसी की लूट और कालपी की लड़ाई ।

विधौ विरुद्धे न पयः पयोनिधौ,
सुधौघसिंधौ न सुधा सुधाकरे।
न वाञ्छितं सिद्धयति कल्पपादपे,
न हेम हेमप्रभवे गिरावपि ॥

महारानी लक्ष्मीबाईके झाँसीसे चले जाने पर अँगरेज़ी-सेनाने शहर और क़िलेको अपने अधिकारमें कर लिया। उस समय गोरे सिपाही सन् ५७ के जून महीनेमें अपने भाई-बन्दोंके मारे जाने का स्मरणकर झाँसी-निवासियोंकी निर्दयता-पूर्वक, गोलियोंसे, हत्या करने लगे। इस समय झाँसीमें कोई लड़ाके वीर नहीं थे, इस कारण जो कोई निरपराधी और निरुपद्रवी मनुष्य शहर में देख पड़ता था उसीको गोरे सिपाही गोली से मार डालते थे! इस समय झाँसीके लोगोंकी जो दुर्दशा हो रही थी उसका वर्णन करना कठिन है। एक ओर क़तले-आम हो रहा था और दूसरी ओर अग्निदेव प्रचंड वेगसे सारे शहरको भस्म कर रहे थे! एक ओर गोरे सिपाही मानवी जीवनकी क्षण-भंगुरता सिद्ध करनेके लिए यमदूतोंकी नाईं भ्रमण कर रहे थे और दूसरी ओर अँगरेज़ी पलटन झाँसीके प्राचीन वैभवको लूट-मारकर नष्टकर रही थी! सारांश यह कि इस समय अनेक प्रकारकी भयानक विप-

त्तियोंने झाँसीको चारों ओरसे घेर लिया था। शहर श्मशानके जैसा मालूम होता था। रास्तेमें लोथोंके ढेर-के-ढेर पड़े दिखाई देते थे! बहुतसे आदमी जिनके गोली लगी थीं, सड़कपर छटपटाते और कराहते हुए अपने प्राण-विसर्जन कर रहे थे। ग़रीब लोग खानेके लिये भीख माँगते फिरते थे। हाथी, घोड़े, ऊँट इत्यादि जानवर बे-मालिक होकर इधर-उधर दौड़ते फिरते थे। जो लोग घास के गंज या ढेरमें जाकर छिप रहते उन्हें गोरे सिपाही उस ढेरमें आग लगाकर जला डालते थे! जो लोग कुएँमें कूदकर अपने प्राणोंकी रक्षा करनेका यत्न करते थे वे भी वहाँ सुरक्षित न रहने पाते थे!

इस प्रकार तीन दिनके लिए झाँसीमें 'बिजन' बोला गया। अँगरेज़ी सेनाने अपनी वीरता और बहादुरीके बदले झाँसीके लूट लेनेकी इजाज़त ले ली; किन्तु सेना के लोग तो इसके पहले हीसे लूट-मार कर रहे थे। सोना, चाँदी, जवाहरात आदि लाखों रुपये का धन, जो कुछ उनके हाथ लगा उसीको लूटकर उन लोगोंने अपने क़ब्ज़ेमें कर लिया। तीसरे दिन राजमहलके लूटनेकी बारी आई। राजमहलमें कई पीढ़ियोंकी सम्पत्ति थी। पेशवाओंके समयसे बुँदेलखंडके राजाओंसे प्राप्त किये हुए अनेक बहुमूल्य रत्न ख़ज़ानेमें थे। पन्नाकी खानसे निकले हुए अनेक अप्रतिम हीरे भी वहाँ थे। सरकारी-सेनाने महलमें घुसकर जो कुछ पाया सब लूट लिया और शेष वस्तुओंको नष्टकर डाला*। इस लूट-मारके कारण सबसे

* इस लूट-मारका कुछ वर्णन डा० लो साहबने किया है। वह Central India नामक पुस्तकके २६४ पृष्ठमें दिया है। बहुतेरे अँगरेज़ ग्रन्थकारोंने इसका वर्णन ही अपने ग्रंथोंमें नहीं दिया है। मिस्टर जान हेनरी सिल्वेस्टरने यह लिखा है कि झाँसीमें गोरोंने जो लूट की उसे 'लूट'

बड़ी हानि यह हुई कि उन लोगोंने झाँसीके प्राचीन पुस्तकालयको भी नष्ट कर दिया! धन-सम्पत्ति और रत्न-जवाहरात फिर मिल सकते हैं, राजमहल फिर बन सकता है, सोने, चाँदीकी कुर्सियाँ और नाना प्रकारके आभूषण आदि सब बना लिये जा सकते हैं; परन्तु प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकोंका फिरसे संग्रह करना असंभव है! मुसलमानों पर जब यह कलंक लगाया जाता है कि उन्होंने हिन्दुओंकी प्राचीन पुस्तकें और मूर्तियोंको नष्टकर बड़ी ही संकीर्णताका परिचय दिया तब झाँसीके एक प्राचीन पुस्तकालयको जलानेवाले ये लोग उसी दोषसे कैसे बच सकते हैं? झाँसीके प्रथम सूबेदार रघुनाथरावसे लेकर अंतिम महाराजा गंगाधरराव तक सब राज-पुरुषोंने प्राचीन पुस्तकोंके संग्रह करनेमें अपना द्रव्य और समय व्यय किया था। चारों वेद, उनके भाष्य, भाष्य-सहित सब शाखाओंके सूत्र, टीका-सहित स्मृति, सम्पूर्ण शास्त्र और पुराण ग्रंथ, झाँसी-दरबारके पुस्तकालयमें थे। इन धर्म-विषयक ग्रंथोंके

नहीं कहना चाहिए; किन्तु यह कहना चाहिए कि उन लोगोंने अपनी कौतूहल-जिज्ञासा पूर्ण की थी! सिल्वेस्टर साहबके लेखसे यह भी विदित होता है कि अँगरेज़ोंने अपनी कौतूहल-जिज्ञासा तृप्त करने हीके लिए झाँसी में देवताओंकी मूर्त्तियों को भी नष्ट किया था! सिल्वेस्टर साहबके लेखसे कुछ वाक्य यहाँ उद्धृत किये जाते हैं:—

"So soon as the fighting had ceased officers and men began to look about them with that spirit of curiosity...... They dived into every house and searched its dark corners, they pulled down walls, all in this self-same spirit of curiosity—not to loot............One class of articles, however, seemed to me to be looked on as fair loot by even the most scrupulous these were the gods found in the temples."

अतिरिक्त ज्योतिष, वैद्यक, नाटक, काव्य आदि विविध विषयोंके भी अनेक ग्रंथ थे। यदि झाँसीसे चार-पाँच-सौ कोस पर भी किसी प्राचीन या नवीन ग्रंथकी ख़बर मिलती थी तो तुरंत वहाँ लेखक भेजा जाता था और उस ग्रंथकी नक़ल दरबार-पुस्तकालयमें मँगवा ली जाती थी। झाँसी-दरबारके पुस्तकालयके ग्रंथोंको देखनेके लिए कभी-कभी काशीके विद्वान् तक वहाँ जाते थे। इस प्रकार बड़े परिश्रमसे पुस्तकालय संग्रह किया गया था। उसे अँग्रेज़ी-सेनाने बात-की-बातमें नष्ट कर दिया!

क़िला, शहर और राजमहल लूटनेके बाद अँगरेज़ी-सेनाने झाँसीकी प्रसिद्ध देवी महालक्ष्मीके मन्दिर पर धावा किया और वहाँके सब आभूषण आदि लूट लिये। जान पड़ता है कि श्रीमहालक्ष्मी देवी अपने वैभव और बहुमूल्य अलंकारोंसे ऊब गई थीं!

तीन दिन तक गोरोंने शहरको ख़ूब मनमाना लूटा। चौथे दिन मद्रासी पलटनने ताँबा, पीतल आदि धातुके पदार्थोंकी लूट मचाई। इसके बाद हैदराबादकी पलटन कपड़े लूटने लगी और अन्य लोग अनाज लूटने लगे। इसी तरह लगातार सात दिन शहरमें लूट होती रही! मालूम होता था कि परमेश्वरने झाँसीके लोगोंको उनके पूर्व कर्मोंका यह भयंकर फल दिया है!

आठवें दिन सरकारने ढिंढोरा पिटवाकर माफ़ीकी सूचना प्रकाशित की; और शहरके लोगोंको निर्भय किया। जो लाशें सड़क पर पड़ी थीं उनको उठवाकर उनकी अंतिम क्रिया की गई। हज़ारों लोगोंको शहरमें भेजकर रास्ते साफ़ कराये गये। जिन मुहल्लोंमें आग लगी थी, वहाँ पानीसे आग बुझानेका प्रबंध किया गया। हाथी, घोड़े, बैल, ऊँट आदि जानवर जो स्थान-स्थान पर मरे-कटे पड़े थे वे सब इकट्ठा किये गये और शहरके बाहर एक

खन्दक खुदवाकर गाड़ दिये गये। इस तरह उस दिन सरकारने सारे शहरको साफ़ और शुद्ध किया।

झाँसीमें ढिंढोरा पिटनेके दूसरे दिन महलके सामने बाज़ार लगाया गया। लोगोंने अपनी-अपनी आवश्यकताके अनुसार चीज़ें लेकर फिर कुछ दिनों तक संसारमें रहनेकी तैयारी की।

शहरके बाहर अँगरेज़ी छावनीमें लूटा हुआ सामान रोज़ नीलाम किया जाता था।* लड़ाईका उपयोगी सामान और हाथी-घोड़े आदि सेंधिया-सरकारने मोल ले लिये। बाक़ी सामान अन्य-अन्य राजों और रईसोंने अपनी-अपनी आवश्यकताके अनुसार नीलाममें लिया। इस तरह झाँसीके प्राचीन राज्य-वैभवका अंत हुआ और बहुतसा धन ब्रिटिश-सरकारके हाथ आया!

झाँसी-विजयके बाद सर ह्यू-रोज़ने २५ वीं पलटनके अधिकारी मेजर राबटर्सनके अधिकारमें क़िला देकर शहरका अच्छा प्रबंध किया। उन्होंने अपनी सेना के घायल हुए लोगोंकी सेवा और दवा-पानीके लिए एक अस्पताल खोल दिया। युद्धमें मरे हुए ले० डिक, ले० मिकली जान, ले० सिनक्लेयर, ले० सियंसन आदि योद्धाओंके मृत शरीरका क्रिस्तानी धर्मके अनुसार अन्तिम संस्कार किया गया। इसी तरह सन् ५७ के जून महीनेमें जो अँगरेज़ अफ़-

---

* इस विषयका उल्लेख लो साहबने भी किया है। आप लिखते हैं:—

"The prize agents were busily engaged daily in taking stock of the money, jewels and other valuables found in the palace and town, and sales were going on daily in camp for the disposal of prize goods and the property that once belonged to officers who had died in action."

—*Central India P. 265.*

सर विद्रोहियोंके हाथसे मारे गये थे उनका भी संस्कार करवाकर उनकी आत्माको शांति दी गई।

इस युद्धमें सर ह्यू-रोज़ने अपनी वीरता और कुशलताका बहुत ही उत्तमताके साथ परिचय दिया। इसके संबंधमें ड्यूक आफ़ केम्ब्रिज और सर कालिन केबल आदि बड़े-बड़े लोगोंने उनकी बड़ी प्रशंसा और स्तुति की है।

यह एक महत्वका प्रश्न है कि झाँसीमें जो घनघोर संग्राम और महाप्रलय हुआ उसमें दोनों ओरके कितने आदमी मारे गये। अँगरेज ग्रंथकारोंके प्रमाणोंसे विदित होता है कि अँगरेज़ोंके ३६ सेनापति और ३०७ सिपाही मरे और जख़मी हुए; और झाँसीके ५००० आदमी काम आये। परन्तु इस बातका निर्णय नहीं किया गया कि झाँसीके ५००० आदमी युद्ध में मारे गये या 'बिजन' में। डाक्टर लो साहबके कथन से यह ध्वनि निकलती है कि झाँसीके 'बिजन' हीमें बहुतसे लोग मारे गये। आप लिखते हैं—

"In Jhansi we burnt and buried upwards of a thousand bodies and if we take into account the constant fighting carried since investment, and the battle of the Betwa. I fancy, I am not far wrong when I say I believe *we must have slain 3000* of the enemy."

यद्यपि अन्य ग्रन्थकारोंने झाँसीकी लूट और महाप्रलयका विस्तृत वर्णन अपने ग्रन्थोंमें नहीं किया है तथापि अन्य विषयोंका वर्णन करते समय जो इन बातोंका थोड़ा-सा उल्लेख किया गया है उससे प्रतीत होता है कि झाँसीमें लगातार तीन दिनके लिए जो 'बिजन' बोला गया उसीमें बहुतसे आदमी मारे गये; युद्ध में उतने आदमी नहीं मारे गये। अँगरेज़ लेखक मि० मार्टिनने अपने ग्रंथमें लिखा है—

"On the 4th of April, the fort and remainder of the City were taken possession of by the troops who committed *fearful slaughter*. No less than 5000 persons are stated to have perished at Jhansi or to have been *cut down* by the flying camps. The plunder obtained is said to have been *very great*."

अँगरेज़ ग्रंथकारोंके भिन्न-भिन्न लेखोंसे यह बात निर्विवाद सिद्ध नहीं होती कि महारानी लक्ष्मीबाईके ५००० आदमी झाँसीकी लड़ाईमें ही मारे गये; किन्तु यह जान पड़ता है कि इनमेंसे अधिकांश लोग झाँसी की लूट और 'बिजन' में ही क़तल किये गये।

महारानी लक्ष्मीबाई झाँसीके क़िलेसे निकलकर दूसरे दिन—पाँचवीं अप्रेलको—भांडेर नामक एक गाँवमें पहुँची। वहाँ स्नानादिसे निवृत्त होकर उन्होंने अपने पुत्र दामोदररावको कुछ खिलाया-पिलाया। इसके बाद वे कालपीकी ओर जानेकी तैयारी कर रही थीं कि इतनेमें लेफ़्टिनेंट बोकर महारानीको पकड़ने के लिए अपनी सेनाके साथ गाँवके समीप आ पहुँचे। उस समय महारानीके पास न तो सेना थी और न अपनी रक्षा का—एक तलवार के सिवा—अन्य कोई साधन था। अतएव तुरंत बालकको पीठ पर बाँध, हाथमें तलवार ले, घोड़े पर सवार हो वे शत्रुसे लड़नेको तैयार हो गईं। अँगरेज़ी सवारोंने उन पर बड़े जोरसे धावा किया। यथार्थमें यही समय महारानीके युद्ध-कौशलकी परीक्षाका था। एक ओर बौकर साहब सरीखे अनुभवी अँगरेज़ वीर अपने चुने हुए सवारों को साथ लेकर वायु-वेग से दौड़ते चले आ रहे थे और दूसरी ओर उनका सामना करके वहाँ से सुरक्षित भाग जानेका यत्न एक ब्राह्मण अबला कर रही थीं! यह बड़ा ही आश्चर्य-जनक दृश्य था। यद्यपि ऐसे कठिन समयमें जय-लाभकी आशा करना महारानी-

के लिये एक असंभव प्रयत्नके जैसा था; तथापि उन्होंने अपने अलौकिक साहस, दृढ़ निश्चय, अद्भुत शूरता और अद्वितीय रण-कौशलसे एक रण-शूर अँगरेज़ योद्धाके भी दाँत खट्टे कर दिये। ज्योंही बौकर साहब अपने घोड़ेको दौड़ाते हुए लक्ष्मीबाईको पकड़नेके लिए आगे बढ़े, त्योंही लक्ष्मीबाईने कुछ दूर हटकर पहले उनके वेगको रोका और अपनी तलवारका एक हाथ ऐसी चपलतासे चलाया कि बौकर साहब घायल होकर छटपटाते हुए नीचे गिर पड़े। बस फिर क्या था, रानी ने उसी समय अपने घोड़े को वायु-गतिसे आगे दौड़ाया और सीधा कालपीका रास्ता पकड़ा। इस समय लक्ष्मीबाई की युद्ध-निपुणता की परीक्षा क्षण भर हीमें हो गई।

संग्रामे सुभटेन्द्राणां कवीनां कविमण्डले।
दीप्तिर्वा दीप्ति हानिर्वा मूहूर्त्तादेव जायते॥

"संग्राममें योद्धाओं और कवियोंमें कवियोंका तेज या उसका अभाव एक क्षण भर हीमें मालूम हो जाता है।" इसमें सन्देह नहीं कि महारानी लक्ष्मीबाईने कविकी इस उक्तिको अपने पर बड़ी अच्छी तरह चरितार्थ कर दिया। एक ही क्षणमें उनका अपूर्व तेज प्रकट हो गया! जख़्मी लेफ्टिनेंट बौकर साहब और उनके साथी सवार हताश होकर झाँसी लौट आये! † महारानी लक्ष्मीबाई

---

† इस लड़ाई का वर्णन अँगरेज़ लेखकोंने अपने ग्रंथोंमें विस्तार-पूर्वक नहींकिया। मार्टिन साहब *British India* नामकी पुस्तक में सिर्फ़ इतना लिखते हैं :—

She was pursued, and nearly overtaken. Lieutenant Bowker, with a party of cavalry, followed her to Bundere, twenty-one miles from Jhansi, and there saw a tent,

दिन भर घोड़ा दौड़ाती हुई रातके बारह बजे कालपी पहुँचीं। धन्य है! जो स्त्री सदा राजकीय सुख, विलास और वैभव में रहती थी उसीने आज बिना कुछ खाये-पिये पीठ पर लड़के को बाँधे, २४ घंटेमें १०२ मील का प्रवास किया; और मार्ग में अनेक आपत्तियों के आ जाने पर भी अपनी प्रतिज्ञाका दृढ़तासे पालन किया! इससे महारानीके साहस, मनोनिग्रह और घोड़े पर बैठने की शक्तिका सच्चा परिचय मिलता है।

कालपी एक छोटासा शहर है। यह यमुना नदीके किनारे बसा हुआ है। यमुनाके पश्चिमी किनारे पर एक मज़बूत किला बना हुआ है। वह तीन ओर मज़बूत कोटसे घिरा हुआ है; और एक ओर स्वयं यमुनाका गहरा और गभीर प्रवाह उसे बेढ़े हुए है। क़िलेके पश्चिम ओर एक मैदान है। उसके बाद शहरकी आबादी है। यह शहर बहुत प्राचीन है। यहाँ बड़े-बड़े धनिक व्यापारी

---

in which was spread an unfinished breakfast. Pressing on, he came in sight of the Ranee, who was escaping on a grey horse, with four attendants: but at this point he was severely wounded, and compelled to relinquish the pursuit."

उनका पीछा किया गया। वे प्रायः पकड़ी जा चुकी थीं। लेफ़्टिनेन्ट बौकरने घुड़सवारोंकी एक पार्टी अपने साथ लेकर झाँसीसे २१ मील दूर भांडेर तक उनका पीछा किया। इन्होंने वहाँ एक डेरा देखा, जिसमें कलेवा की कुछ चीज़ें थीं—मालूम होता है कि वे कलेवा करने न पाई थीं कुछ दूर आगे बढ़कर उन्होंने रानीको भागते हुए, देखा जो चार अनुयायियों के साथ सफ़ेद घोड़े पर बैठ कर भाग रही थीं। परंतु इसी समय ले० बौकर बहुत घायल हुए। और इस लिए उन्हें रानीका पीछा करना छोड़ देना पड़ा।"

रहते हैं। शाही ज़माने में यहाँ कई बार भयंकर युद्ध हुए थे। यहाँ एक बहुत बड़ा क़बरस्तान है। लड़ाईमें जो शाही सरदार मारे गये थे वे सब वहाँ गड़े हैं। इस क़ब्रस्तानमें बादशाहके बड़े-बड़े चौरासी सरदारोंकी अच्छी-अच्छी कबरें बनी हुई हैं। इन कबरों के गुम्बजोंसे वह मैदान शोभायमान देख पड़ता है। इसलिए उस स्थान को "चौरासी गुम्बजका मैदान" कहते हैं। यह इतिहास-प्रसिद्ध शहर पहले गोविन्दपंत बुँदेलेके अधिकारमें था। इसके बाद वह उनके वंशज जालौनके जागीरदार नाना गोविन्दरावके अधीन रहा। सन् १८०६ ई० में ब्रिटिश-सरकारने जालौनके साथ संधि करके कालपीको अपने अधिकारमें कर लिया तबसे वह अँगरेजी-सरकार हीके अधिकारमें है। एक बार सन् १८२५ ई० में नाना पंडितने विद्रोह करके उसे अपने अधिकारमें कर लिया था; परंतु उस समय ब्रिटिश-सरकारने झाँसीके सूबेदार रामचंद्ररावकी सहा-यतासे उस पर फिर अपना अधिकार जमा लिया। उसके बाद सन् १८५७ ई० के जून महीनेकी १२ तारीख़को जब झाँसी और कानपुरके बाग़ी कालपी आये तब वहाँकी फ़ौजने बलवा किया और मुंशी शिवप्रसाद डिप्टी कलेक्टरको वहाँसे मार भगाया। तभीसे कालपीमें अँगरेज़ोंकी राज-सत्ता नष्ट हो गई थी और केवल बाग़ियों हीका वहाँ अमल था। नाना साहब पेशवाके भाई रावसाहब भी यह सोचकर कि कालपी बुँदेलखंडके मध्यमें है और वहाँका क़िला बड़ा मज़बूत है, अपनी सेना लेकर यहीं आ गये। इससे कालपी विद्रोहियोंका एक मुख्य अड्डा बन गया था। युद्धके लिए इन विद्रोहियोंने गोला-बारूद आदि बहुतसा सामान भी इकट्ठा कर लिया था। महारानी लक्ष्मीबाई इसी कारण राव-साहब पेशवाके पास कालपी आई थीं कि वहाँ पहुँचकर अपनी रक्षाका कोई उपाय सोचा जा सकेगा।

कालपी पहुँचते ही रावसाहिब पेशवाकी ओरसे महारानीके रहने आदिका सब प्रबंध उत्तम प्रकारसे हो गया। दूसरे दिन महारानीने पेशवासे भेंट कर अपनी तलवार उनके सामने रख दी और आँखोंमें आँसू भर कहा कि "आपके पूर्वजोंने यह तलवार हमें दी थी। उनके पुण्य-प्रतापसे आज तक हमारे पूर्वजोंने और मैंने इसका उचित उपयोग किया है। परंतु अब आपकी सहायता और कृपा नहीं है; इसलिए यह अपनी तलवार आप वापस लीजिए।" महारानीकी इस युक्ति-संगत चतुरता देखकर पेशवाने इस पर खेद प्रगट किया कि झाँसीकी लड़ाईमें उनकी सेना कुछ सहायता न कर सकी।* उन्होंने महारानीसे कहा—"आपने

* इसका ठीक-ठीक कारण समझमें नहीं आता कि जिस समय झाँसीमें युद्ध हो रहा था उस समय पेशवाकी सेनासे महारानी लक्ष्मीबाईको सहायता क्यों नहीं पहुँची? जब अँगरेज़ी-सेना पेशवाकी सेनासे लड़ने लगी तब झाँसीके क़िलेसे अँगरेज़ी—सेना पर तोपके गोले क्यों नहीं चलाये गये? यदि चलाये जाते तो अँगरेज़ी-सेनाको पेशवाकी सेना पर हमला करनेका मौक़ा न मिलता और पेशवाकी सेनाका पराजय न होता। ऐसा मालूम होता है कि उस समय क़िलेके बुर्ज पर लालताबादी नामका जो सरदार था उसने यह कहा था कि अँगरेज़ी फ़ौज पेशवा हीकी फौज है; और इसीलिए उसने अँगरेज़ी फ़ौज पर क़िलेमें तोपें नहीं चलने दीं। यह हाल 'गिलियन' नामके ग्रन्थकारने "रानी" नामक ग्रन्थके २६० पृष्ठमें महारानी और तात्याटोपेकी बातचीतमें दिया है। जिस समय तात्याटोपेने महारानीसे पूछा कि "जब हम तुम्हारी सहायताके लिए सेना लेकर आये और अँगरेज़ी-सेनासे हमारी लड़ाई आरम्भ हुई तब यदि उन पर क़िलेसे गोले बरसते तो उनकी एक भी न चलती और न हमारी हार होती।" उस समय महारानीने उत्तर दियाकि "क़िलेमें लालताबादी नामका एक ब्राह्मण

झाँसीके सूबेदारोंकी प्राचीन कीर्ति अनुसार ही अब तक शूरता प्रकट की है और प्रबल अँगरेज़ी-सेनाकी कुछ भी परवा न कर उसके साथ बहुत दिनों तक घोर युद्ध किया है। इस समय सब लोग आपकी शूरता, युद्ध-निपुणता और पराक्रम-

---

मुख्य हवलदार था। उसने हमें वैसा करने नहीं दिया। उसने अन्त तक हमसे यही कहा कि वे लोग सचमुच हमला नहीं करते हैं; किन्तु वे इस लिये तोपें दाग रहे हैं कि हम लोग बाहर निकल आवें।" इस परसे मालूम होता है कि उस समय क़िलेमें या तो कुछ दग़ाबाज़ी की गई थी या मूर्खता वश यह भारी ग़लती की जा रही थी। जिस समय तात्याटोपेकी सेना पर अँगरेज़ी-सेनाने धावा किया। ठीक उसी समय क़िलेसे अँगरेज़ी-सेनाके ऊपर तोपें चलाना बन्द हो गया था। इस कारण अँगरेज़ी-सेनाको तात्याके हरानेका अच्छा मौक़ा हाथ लगा! यही बात एक और अँगरेज़ी लेखककी गवाहीसे सिद्ध होती है। सर ह्यू रोज़के साथ डॉक्टर सिल्वेस्टर नामके असिस्टेंट सरजन थे। आप *The Campaign in Central India* के पृष्ठ १०१-१०२ में लिखते हैं:—" Why the garrison did not make a sortie, and destroy our batteries, while the Peshwa's army was attempting their rescue from without, *it is impossible to imagine*. Their overpowering numbers must have been successful, howev er well our infantry and gunners might have stood to their guns."

"हम इस बातकी कल्पना तक नहीं कर सकते कि जिस समय पेशवा की सेना क़िलेमें घिरे हुए लोगोंकी बाहर से रक्षा कर रही थी उस समय क़िलेके लोगोंने हम पर एक दम हमला क्यों नहीं किया। उन लोगोंकी संख्या ही इतनी अधिक थी कि उनकी अवश्य जीत होती, फिर हमारी पैदल पलटन और तोपें चलाने वाले चाहे कैसा ही अच्छा काम क्यों न करते।"

बहुत धीरज हुआ। कोंचसे दस मीलकी दूरी पर लोहारी नामके गाँवमें मरहठोंका बनवाया हुआ एक बहुत मज़बूत क़िला था। रोज़ साहबने सोचा कि यदि यह क़िला हम लोगोंके हाथ आ जाय तो यहाँसे कोंच पर चढ़ाई करनेमें कुछ कठिनाई न होगी। इसलिए उन्होंने मेजर गालको उस क़िले पर धावा करनेकी आज्ञा दी। मेजर गालने तीसरी यूरोपियन पलटनके कुछ सिपाही साथ लेकर लोहारी पर धावा किया। इस क़िलेकी रक्षाके लिए कुछ अफग़ानी लोग नियत थे। उनमें और अँगरेज़ी-सेनामें ख़ूब घनघोर युद्ध हुआ। अन्तमें अँगरेज़ोंके भाग्यकी प्रबलतासे विद्रोहियोंकी हार हुई और क़िला उनके हाथ आ गया। इस लड़ाईमें दो अँगरेज़ी अफ़सर और बहुतसे गोरे सिपाही मारे गये।

लोहारीका क़िला हस्तगत करके रोज़ साहबने कोंच पर धावा करनेकी सलाह की। रोज़ साहब यह बात जानते थे कि विद्रोही लोग अपनी सेनाके अग्रभागका अच्छा बंदोबस्त करते हैं। इसलिए उन्होंने सामनेसे धावा न करके विद्रोहियोंकी सेनाके पिछले भाग पर धावा करनेका निश्चय किया। इसके अनुसार दूसरे दिन अँगरेज़ी-सेना १४ मीलकी दूरी पर हटाकर अपने अनुकूल स्थान पर रक्खी गई। वहाँसे उन्होंने पहली ब्रिगेडको अपनी बाईं ओर रक्खा और उसके पीछेके लोगोंको नगपुरा गाँवके पास रक्खा। दूसरी ब्रिगेडको मध्य भागमें चुमेर गाँवके पास रक्खा और दाहिनी ओर मेजर आरकी अधीनतामें हैदराबादकी पलटनको रक्खा। इस तरह मारकेकी जगह ढूँढ़ कर अँगरेज़ी-सेना युद्धके लिए तैयार हो गई। इधर बाँदाके नवाब, तात्याटोपे आदि ग्वालियरसे सेना आनेकी राह देख रहे थे। इनकी थोड़ीसी फ़ौज कोंच गाँवके मैदानमें पेड़ोंके नीचे पड़ी थी। उसको जब अँगरेज़ी सेनाके आनेका समाचार मिला तब उसने एकदम उन पर तोपें चलाना

आरंभ कर दिया। रोज़ साहबने अपनी सेनाके कई भाग करके उसको भिन्न-भिन्न स्थानोंमें रक्खा था; इसलिए विद्रोहियोंकी तोपें अँगरेज़ी-सेनाके सामने हीके भाग पर चल रहीथी। अँगरेज़ी-सेनाने इसे परास्त करनेके लिए चारों ओरसे अपनी तोपें और बंदूकें चलाना आरंभ किया, जिसके कारण विद्रोहियोंके घुड़-सवारोंकी बड़ी दुर्दशा हुई। वे रण-भूमिसे भागने लगे। विद्रो-हियोंने सिर्फ़ सामनेके भागका प्रबंध किया था और अँगरेज़ी-सेनाने उन पर चारों ओरसे गोले बरसाना आरंभ किया। अतएव उनको मैदानसे भाग जानेके सिवा और कोई उपाय न था। अँगरेज़ी-सेनाको गर्मीके कारण बहुत कष्ट उठाना पड़ा। उन दिनों गर्मी ११० डिगरी थी। परन्तु ऐसी सख़्त गर्मीमें भी रोज़ साहबने युद्धका अच्छा प्रबंध करके विद्रोहियोंको मार भगाया। इस लड़ाईके संबंधमें रोज़ साहब स्वयं अपनी रिपोर्टमें इस प्रकार लिखते हैं:—"सख़्त गर्मीसे हमारी सेनाका जो नाश हुआ यदि वह न हुआ होता तो हम पूर्ण-रूपसे शत्रुओंका विध्वंस कर डालते। हमारी सेनाके ११ सिपाही तेज़ धूपके कारण मृत्युके मुखमें चले गये। बहुतसे बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। उनकी दशाका वर्णन हमसे नहीं हो सकता। चार बार गर्मीके कारण ख़ुद मुझे अपना घोड़ा एक ओर छायामें ले जाना पड़ा। डाक्टरोंने मेरे सिर पर जब ठण्ढे पानीकी धार छुड़वाई और गर्मी शान्त करनेवाली औषधियाँ दीं तब मुझे होश आया।" डाक्टर अर्नाट साहबके लेखसे भी यही मालूम होता है कि इस लड़ाईमें गर्मीके कारण अँगरेज़ी-सेनाकी हालत बहुत बुरी हो गई थी।

यद्यपि गर्मीके कारण अँगरेज़ी-सेनाकी दशा बहुत बुरी थी तथापि उसने एक घंटे तक बड़ा भयंकर युद्ध किया। ठीक दोपहर

के समय ८६ वीं और २५ वीं पलटनने कोंच गाँव पर धावा किया। पेशवाकी फ़ौजने अपना पराक्रम ख़ूब दिखलाया। हैदराबाद इनफेन्ट्रीके अफ़सरने विद्रोहियोंको पीछे हटाकर उनकी जगह छीन ली; परंतु पेशवाकी फ़ौजके सामने उनको फिर पीछे हटना पड़ा। उस समय अँगरेज़ी घुड़सवारोंने बड़ी बहादुरीका काम किया। तात्याटोपे और बाँदेके नवाबने अँगरेज़ी-सेनाको परास्त करनेका बहुत प्रयत्न किया; परंतु सब निष्फल हुआ! आख़िर अँगरेज़ों हीकी विजय हुई। तात्याटोपे और बाँदेके नवाब बची हुई फ़ौजको साथ लेकर कालपी चले गये। विद्रोहियोंकी आठ तोपें, बहुतसी बारूद, गोली, गोला आदि अँगरेज़ोंके हाथ लगा। इस युद्धमें यद्यपि विद्रोहियोंकी संख्या २०००० थी तथापि उन लोगोंका प्रबंध अच्छा न था। यही कारण है कि उनको एक मुट्ठी भर अँगरेज़ोंने हरा दिया। रोज़ साहबने अपनी सेनाकी इस तरह प्रशंसा की है:—"इन सज्जन सिपाहियोंने कभी किसी बातकी शिकायत नहीं की। यद्यपि धूप और थकावटके मारे उनकी संख्या घटने लगी थी तथापि उन्होंने शिकायत करके अपने अफ़सरोंकी चिन्ता कभी नहीं बढ़ाई। वे चाहे कितने ही थके हों और उन्हें चाहे कितनी थोड़ी नींद आई हो, पर बिगुल बजते ही तुरंत वे हथियार बाँधकर ख़ुशीसे खड़े हो जाते थे। अपने दुश्मनसे हार खाना या उसको पीठ दिखाना वे अपना अपमान समझते थे। सब लोगोंका यही निश्चय था कि हमारा शारीरिक बल भले ही कम हो जाय, पर हमारा जोश, मानसिक शक्ति और आज्ञा-पालन करनेकी बुद्धि कभी कम न होगी। अकसर वे इतने बीमार हो जाते थे कि चल भी नहीं सकते थे; पर इसकी उन्होंने कभी परवा न की। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि हमारे

सिपाही कर्तव्य-परायण शान्त और आज्ञाकारी थे।" ऐसी शूर, आज्ञाकारी और कर्तव्य-परायण सेना के सामने विद्रोही लोग रणभूमिमें कैसे ठहर सकते थे। महारानी लक्ष्मीबाई इस युद्धमें प्रधान रीतिसे शामिल न थीं। बाँदेके नवाब और रावसाहब पेशवा ने सब प्रबंध अपने ही अधीन रक्खा था। परन्तु उन लोगोंने न तो स्वयं कोई उत्तम प्रबंध किया और न लक्ष्मीबाईको किसी प्रबंधका अधिकार दिया। इसीसे उनकी फ़ौजका बंदोबस्त ढीला पड़ गया और अँगरेज़ोंने मारकोंकी जगह पर अपना अधिकार जमा लिया।

कोंचको फ़तह करके सर ह्यू-रोज़ने कालपी पर धावा करनेका निश्चय किया। रोज़ साहबने इस बात पर खूब विचार कर लिया था कि कालपी पर किस ओर से धावा किया जाय। उनको सबसे सरल मार्ग हर्दोई और उरई होकर दिखलाई पड़ा। उसी मार्गसे कालपी पर चढ़ाई करने की उन्होंने आज्ञा दी। मार्गमें विद्रोहियों ने अँगरेज़ी सेनाको बहुत तंग किया; परन्तु रण-पण्डित रोज़ साहब धीरता और कुशलता-पूर्वक आगे बढ़ते ही चले गये। गर्मी के कारण अँगरेज़ी-सेना हैरान हो गई थी, इसलिए रोज़ साहबने कमांडर-इन-चीफ़को लिखा कि आप कर्नल मैक्सवेलको सेना-सहित कालपी भेज दीजिए। यह समाचार पाते ही कमांडर-इन-चीफ़ने ८८ वीं पलटनके दो भाग, सिख लोगोंकी एक पलटन और ऊँटोंका एक रिसाला रोज़ साहबकी सहायताके लिए भेज दिया। इस तरह रोज़ साहबने अपनी सेनाका अच्छा प्रबंध करके कालपीको घेरकर ऐसा स्थान हस्तगत करनेका विचार किया जहाँ शत्रुओंका प्रबन्ध ढीला हो।

जब विद्रोही लोग कोंचसे भागकर कालपी चले आये तब वहाँ महारानी लक्ष्मीबाईने पेशवासे कहा—"कोंचकी लड़ाईमें आपका प्रबंध बहुतही बुरा था। इस समय आपको होशियारीके साथ

प्रबंध करना चाहिए। अव्यवस्थित सेना कभी युद्धमें विजय नहीं पा सकती। उत्तम व्यवस्थाके कारण ही अँगरेज़ी-सेनाको विजय प्राप्त होती है। अँगरेज़ी-सेनाके सेनापति भिन्न-भिन्न और अपने अपने काममें बड़े कुशल हैं। उनके सिपाही युद्ध-कलामें प्रवीण और आज्ञाकारी हैं; उन सब लोगों पर एक ही मुख्य अधिकारी है, जिसकी आज्ञाके अनुसार सब लोग प्रबंध करते हैं। इस लिए जब तक आप अपनी सेनाका अच्छा प्रबन्ध न करेंगे तब तक अँगरेज़ोंसे युद्ध करनेमें आपको कभी यश प्राप्त न होगा। आपको सबसे पहले मारकेकी जगह ढूँढ़ कर अपने मोरचे बाँधना चाहिए और कार्य-कुशल पुरुषोंको वहाँ नियत करना चाहिए।" रावसाहब पेशवाने महारानीकी सूचना को ध्यान में रखकर अपनी सेनाका कुछ प्रबंध किया। एक ओर उन्होंने बाँदेके नवाबकी सेनाको नियत किया और दूसरी ओर रुहेल-खण्डसे आये हुए रुहेलों और बंगाल-नेटिव इन्फेन्ट्रीकी काली पलटनको नियुक्त किया। बड़ी-बड़ी तोपें मोरचों पर चढ़ाई गईं और वहाँ होशियार गोलन्दाज़ नियत किये गये। अँगरेज़ी फ़ौजका रास्ता रोकनेके लिए बुंदेलोंकी सेना नियत की गई। इस प्रकार सेनाका प्रबंध करके रावसाहब पेशवाने प्रधान सेनापतिका काम अपने हाथमें लिया।

यद्यपि रावसाहब यह जानते थे कि लक्ष्मीबाई युद्ध-विद्यामें बहुत प्रवीण हैं—सच पूछिए तो उस समय सारे रण पंडितोंमें महारानीसे अधिक निपुण कोई नहीं था; तथापि वे स्वयं अपनी विशेष महत्त्वाकांक्षा के कारण अपनी सेनाका मुख्य अधिकार एक स्त्रीके अधीन कर देना अच्छा नहीं समझते थे। केवल बाहरसे संतुष्ट रखने और आदर करनेके हेतु उन्होंने लालवर्दी के ढाई सौ घुड़-सवार स्वतंत्र रीतिसे महारानीके अधीन कर दिये और कहा कि

आप यमुनाकी ओर रहिए। रावसाहबके बहुत कहने-सुनने पर महारानी लक्ष्मीबाईने उत्तर-ओरकी रक्षा करनेका काम स्वीकार किया और एक अच्छे युद्ध-कला-विशारद सेनानायकके समान अपनी सेनाका प्रबंध किया।

१५ तारीखको अँगरेज़ी-सेना कालपीसे छः मीलकी दूरी पर गलावली गाँवके पास आ पहुँची। यह खबर लगते ही कालपीके छबीनाने ज्यों ही देखा कि अँगरेज़ी सेना अब सीधे मार्गसे समर-भूमिमें पहुँचेगी त्योंही उसने उतावलीसे उस पर छापा मारा और अँगरेज़ी-सेना का रसद बन्द कर देने का प्रयत्न किया। छबीनाके पास ग्वालियरकी बहुतसी फ़ौज थी। इस फौज़ने अँगरेज़ी सेनाकी २७ वीं इन्फेन्ट्री पर धावा करके बहुतसे लोगोंको मार डाला और बहुतोंको घायल किया। परन्तु केवल इतनी हानि होने से अँगरेज़ी फौज़का सामर्थ्य कुछ बहुत घट नहीं गया; क्योंकि अँगरेज़ी फ़ौजके डेरे जगह-जगह पर टिड्डी दलकी तरह पड़े थे। परंतु ग्वालियरकी फ़ौज इतने हीमें फूल गई। उसने सोचा अब कोई डरकी बात नहीं, विजय निश्चित है। इस ज़रासी खुशीसे अपनेको भूलकर इधरकी फ़ौजके लोगोंने खूब भंग चढ़ाई और अपने ही रंगमें मस्त होकर वे अँगरेज़ी फ़ौजसे बोले "तुम्हींने झाँसीको लूटा है और अब कालपीकी ओर आ रहे हो? ठीक है। आओ! तुम्हारी ख़बर लेनेके लिए हम तैयार हैं!" धन्य आत्म-श्लाघा!

१६ तारीख़को मेजर आपकी दूसरी ब्रिगेडकी सेनासे बलबाइ-योंने सामना किया। कुछ लोगोंको मारा और कुछको घायल किया। सर ह्यु-रोज़ साहब अपनी सेना दयापुर नामक गाँवके पास ले आये। उन्हें सेना रखनेके लिए यह जगह बहुत अच्छी जान पड़ी। अन्तमें उन्होंने वहीं डेरा डालकर बलवाइयोंसे युद्ध करना

प्रारंभ किया। इस युद्धमें बहुतसे विद्रोही मारे गये और अंतमें उनको पीछे हटना पड़ा। दूसरी ब्रिगेडवालोंने भी खूब घोर युद्ध किया और ७१ वीं हायलैंडर्स पलटनने भी बलवाइयोंका संहार करना शुरू कर दिया!

अँगरेज़ी-सेनाने जिस जगह अपना डेरा डाला था वहाँसे कालपी बहुत अंतर पर थी। बीचमें यमुना नदी तक बड़ा भारी बीहड़ रास्ता था। इस मार्गमें लगातार यमुना नदी तक बड़ी-बड़ी दरारें और भयानक खड्डे थे। इसी कारण वहाँ तोपख़ाना नहीं जा सकता था। बलवाइयोंको अपनी रक्षाके लिए यह अच्छा मौक़ा हाथ लगा।

सर ह्यू-रोज़ साहबने कालपीका रास्ता बहुत भयंकर देखकर एकाएक कालपी पर चढ़ाई करनेका विचार छोड़ दिया। गलावली गाँव ही उन्हें अपने आश्रयके योग्य स्थान देख पड़ा और इसलिए वहीं आकर उन्होंने अपनी छावनी डाल दी।

कोंचमें विद्रोहियोंने जो हार खाई थी उससे वे अधिक लज्जित और क्रोधित हुए थे। कालपीकी सेनाको इस समय अधिक स्फूर्ति चढ़ रही थी और यमुनाकी शपथ खाकर उन लोगोंने संकल्प किया था कि अब या तो अँगरेज़ी-सेनाको पराजित करेंगे अथवा हम खुद ही रणमें प्राण दे देंगे। इधर यह फौज क्रोध और अभिमानसे मत्त अँगरेज़ी-सेनाको मार भगानेका संकल्प किये हुए तैयार थी और उधर सरकारी अफ़सर ब्रिगेडियर स्टुवर्ट, ले० के० रॉबर्टसन और ले० गार्डन आदि रण-शूर पंडित अपनी सेनाके साथ बलवाइयोंको मार भगा कर कालपी विजय करनेके लिये बढ़ रहे थे। विद्रोहि-योंने बड़े आवेशसे आगे बढ़कर शत्रु-सेना पर छापा मारा। इससे उनकी फ़ौज की रक्षाका स्थान छूट गया! अँगरेज़ी सेनाको यह

अच्छा मौक़ा मिल गया। वह अपने मौक़े पर आ डटी और तोपों-की मार शुरू हो गई।

कालपीकी फ़ौजने अपनी जगह छोड़ दी, इस कारण इस तर-फ़की गोलियाँ अँगरेज़ी-सेना पर कुछ काम नहीं कर सकती थीं। और अँगरेज़ी-सेनाकी तोपें धड़ाधड़ गोले बरसाकर विद्रोहियोंको स्वाहा कर रही थीं। कालपीकी फ़ौजने अपनी रक्षाके लिए बहुत प्रयत्न किया; और बड़े ज़ोरशोरसे अँगरेज़ी फ़ौज पर धावा किया; पर अपनी भूलके कारण उसे कुछ सफलता नहीं हुई; उलटी इन्हीं लोगोंकी अधिक हानि हुई। इस बीचमें कालपीकी फ़ौजका अधिक ज़ोर देखकर हैदराबादकी पलटन भी अँगरेज़ी फ़ौजसे आ मिली थी।

इस प्रकार कालपीकी सेनाके अगले भागका पराभव सुनकर सारी सेना बड़ी भयभीत हुई। सब लोगोंमें निराशा छा गई। राव-साहब पेशवा, बाँदाके नवाब आदि मुख्य-मुख्य योद्धा डरकर भागनेका विचार करने लगे। इस समय महारानी लक्ष्मीबाईने उन्हें धीरज देकर कहा कि आप लोगोंके लिये घबरानेकी कोई बात नहीं; अब ज़रा आप मेरा भी कौशल देखिए। इतना कहकर उन्होंने अपना घोड़ा बुलवाया; और उस पर सवार होकर अपने लालवर्दीके सवारों को साथ लिये वे आगे बढ़ीं। अँगरेज़ोंकी दाहिनी ओर जाकर उन्होंने बड़े वेगसे उन पर धावा किया! उनके इस अचानक प्रचण्ड आक्र-मणसे अँगरेज़ोंकी फ़ौज एकदम पीछे हट गई। बड़े-बड़े अँगरेज़ शूरवीर कट-कट कर धराशायी होने लगे! इस बार महारानीने इतनी बुद्धिमानी और सुव्यस्थित रीतिसे युद्ध किया कि उनके शौर्यके कारण "लाइट फ़ील्ड" तोपोंके गोले कुछ देरके लिए बिलकुल बन्द हो गये और उनके गोलन्दाज़ स्तब्ध होकर जैसेके तैसे खड़े रह गये!

इतना ही नहीं, किन्तु महारानी उन तोपोंसे २० फ़ीटके अन्तर तक मारती-काटती चली गईं ! महारानीकी इस विलक्षण वीरताको देखकर कालपीकी दूसरी सेनाओंका भी साहस बढ़ा और उन्होंने फिर बड़े वेगसे अँगरेज़ी सेना पर चढ़ाई की। दोनों ओरसे घमासान युद्ध मचा। जिस समय महारानी लक्ष्मीबाई अपने चपल घोड़ेको बढ़ाती हुई और अपनी शमशेरके हाथ बड़ी चालाकीसे चलाती हुई अँगरेज़ी तोपख़ानों पर चढ़ीं उस समय उनकी वह वीर-श्री, वह आवेश, वह मर्दूमी और बहादुरी देखकर पेशवाके दूसरे सेनानायक भी फड़क उठे ! और वे भी अँगरेज़ी-सेना पर इस प्रकार टूट पड़े जैसे जौके खेत पर टिड्डी दल टूट पड़ता हैं ! उस समय जो घनघोर युद्ध हुआ उससे जान पड़ता था कि अब बलवाइयोंकी जीत होनेमें विलम्ब नहीं है। महारानी दाँतोंसे घोड़ेकी लगाम पकड़े, दोनों हाथोंसे सड़ासड़ तलवार चला रही थीं। उन तेज और शौर्य मानो इस समय फूटा निकलता था; वे प्रत्यक्ष चण्डिकाका अवतार जान पड़ती थीं ! पेशवाकी सेना भी बड़ी बहादुरीसे लड़ रही थी। इस लड़ाईमें अँगरेज़ वीरोंके छक्के छूट गये ! तोपख़ानोंके बचे बचाये गोलन्दाज़ हतवीर्य होकर भागने लगे। घोड़ोंके ऊपरका तोपख़ाना फिसल गया; तोपख़ानोंकी व्यवस्था बिलकुल बिगडने लगी। इतने हीमें ब्रिगेडियर स्टुवर्ट अपना घोड़ा बढ़ाते हुए तोपख़ानेके पास आये और गोलन्दाज़ोंको उन्होंने ख़ूब उत्साहित किया। वे लोग फिरसे तोपें दागने लगे। जब सर ह्यू-रोज़को यह समाचार जान पड़ा कि महारानी लक्ष्मीबाईने पेशवाकी सेना साथ लेकर बड़े वेगसे धावा किया है और अँगरेज़ी तोपें बन्द कर दी हैं तब वे अपने साथ ऊँट-सवारोंकी सेना लेकर बहुत जल्दी युद्ध-स्थलकी ओर दौड़े और स्वयं सेनानायक बनकर उन्होंने कालपीकी फ़ौज पर बड़े जोरसे

हमला किया। बलवाइयोंकी सेना बहुत देर तक भगके रङ्गमें मस्त होकर अँगरेज़ी-सेनासे लड़ती रही; पर जब उस पर ८६ वीं और २५ वीं पलटनके शूर-वीर सिपाही टूट पड़े तब उसके होश-हवास जाते रहे। सर ह्यू-रोज़के ऊँट-सवारोंने बड़े ज़ोरसे विद्रोहियों पर गोलोंकी वर्षा की। कालपीकी फ़ौज भागकर तितर-बितर होने लगी। महारानीने अपने सिपाहियोंके साथ बढ़कर अँगरेज़ी सेनाकी मार बन्द करके उन्हें पीछे हटानेका बहुत यत्न किया। पर पेशवाकी फ़ौजका साहस छूट जानेके कारण उन्हें और आगे बढ़नेकी सहायता न मिली और निराश होकर पीछे लौटना पड़ा। इस प्रकार पेशवाकी फ़ौजके हताश हो जाने पर महारानी भी रावसाहब पेशवाकी छावनीमें लौट आईं।

इस प्रकार कालपीकी सेनाके फूटतेही सर ह्यू-रोज़ने विद्रोहियोंका पीछा कर चारों ओरसे उनका संहार करना शुरू किया! अँगरेज़ी-सेना विजयसे उत्साहित होकर बलवाइयोंको ज़ोर-शोरसे क़तल करने लगी। उसे जहाँ जो मिला वहीं वह मारा गया! हज़ारों लोग भयभीत होकर बचावके लिए यमुना नदीके बीहड़में जा छिपे! इस प्रकार सर रोज़ने अपने उत्तम प्रबंध और सुशिक्षिता सेनाके ज़ोरसे असंख्य बलवाइयोंको नीचा दिखाया। और पेशवाकी सेना अशिक्षित होनेके कारण हार गई।

युद्ध-स्थलसे विद्रोहियोंको भगा कर रोज़ साहबने कालपी पर अपना अधिकार करने और ब्रिटिश झण्डा गाड़नेका निश्चय किया। उन्होंने पहले ब्रिगेडकी सेना ब्रिगेडियर सी० एस० स्टुवर्टके साथ यमुना नदीके किनारेसे कालपीकी ओर भेजी और दूसरे ब्रिगेडको ख़ुद अपने साथ लेकर वे सीधे कालपीकी ओर रवाना हुए। रावसाहब पेशवाने कालपीके क़िलेमें गोला-बारूद आदि बहुतसा लड़ाईका सामान इकट्ठा कर रक्खा था। क़िलेमें उसकी

रक्षाके लिए बहुतसी सेना भी थी। इसके सिवा जो सेना समर-भूमिसे भागकर आई थी वह भी चारों ओर घिरी हुई थी। अँगरेज़ी तोपख़ानेके अफ़सर कर्नल मैक्सवेलने अपनी बड़ी-बड़ी तोपें लगवा कर उन्हें पेशवाकी सेना पर दागना शुरू किया। इससे जो सेना कालपीकी रक्षाके लिए जमी हुई थी वह पीछे हटने लगी। इतने हीमें अँगरेज़ी सेना बड़ीतेज़ीसे शहरमें आ घुसी। पेशवाके गोल-न्दाज़ोंने और दूसरी जगहोंके मोर्चेवालोंने शत्रु-सेना पर मार शुरू की; परन्तु इस समय विरुद्ध पक्षकी तोपें भयंकर गोले वमन कर रही थीं, इसलिए कालपीवालोंकी तोपोंका कुछ असर नहीं हुआ। कालपीकी सेना इन तोपोंकी मारसे घबड़ा उठी। अँग-रेज़ी फ़ौजने बड़े बेगसे धावा करके उसके चार हाथी जीत-लिये और कालपीके आगेके मैदानमें अपना डेरा डाल दिया। इतने हीमें सर ह्यू-रोज़ भी अपनी सेनाके साथ वहाँ आ दाख़िल हुए। इसके बाद सारी अँगरेज़ी फ़ौजने मिलकर शहरमें प्रवेश किया। कालपीकी फ़ौज भागने लगी। कर्नल गाल और हैदराबाद कंटीजंट सेनाके अफ़सर कप्तान ऐबटने कई मील तक उसका पीछा किया और उससे बहुतसे हाथी, घोड़े, ऊँट और तोपें छीन लीं! बहुतसी युद्ध-सामग्री अँगरेज़ोंको मिल गई। इस झपाटेमें बहुत लोग काम आये! २४ तारीख़को सरकारी-सेनाने पूरे तौर पर कालपीको सर कर लियां। इसी तारीख़को महारानी विक्टोरियाका जन्म हुआ था। इस कारण कालपीके मैदानमें ख़ूब तोपोंकी सलामी हुई और विजय-उत्सवके उत्साहमें दूना आनन्द मनाया गया।

अँगरेज़ी फ़ौजको कालपीकी ओर अधिक-अधिक घुसते हुए देखकर रावसाहब पेशवा, महारानी लक्ष्मीबाई, बाँदाके नवाब आदि प्रमुख लोग वहाँसे बड़ी युक्तिसे निकल गये। अँगरेज़ी-

सेनाको कालपीका क़िला और शहर लेनेमें कुछ भी परिश्रम नहीं पड़ा। शहरमें जो पेशवाकी पलटन थी वह लड़ाई कर ही नहीं सकती थी; क्योंकि इन दिनों सब बलवाई लोग निराशसे हो गये थे। दिल्ली, लखनऊ, झाँसी आदि बड़े-बड़े संस्थान अँगरेज़ोंने जीत लिये थे। बड़े-बड़े अनुभवी और पुराने फ़ौजी वीर निराश होकर अपना-अपना काम छोड़ बैठे थे। जगह-जगह जो नोटिस निकाले गये थे उनको देखकर वे लोग अपने प्राण बचा कर भागे-भागे फिरते थे; कोई-कोई तो भेस बदलकर दूसरा धंधा करने लग गये थे। जो नये सिपाही भरती किये गये उन्हें युद्ध करनेकी रीति ही मालूम न थी। नवसिखुए होनेके कारण वे युद्धमें टिक नहीं सकते थे। सच बात तो यह है कि कालपीकी फ़ौजमें अच्छे और सच्चे वीर थे ही नहीं; चोर, लुटेरे ही उसमें अधिक रह गये थे। उनका लड़ाईकी ओर बिलकुल ध्यान नहीं था; लूट-मार करने पर ही अधिक ध्यान था। कालपीमें तीन दिन तक लड़ाई होने के बाद ज्यों ही उन लोगोंको मालूम हुआ कि अब अँगरेज़ों-की जीत हुई और पेशवा हार गये त्यों ही सैकड़ों सिपाही युद्ध छोड़ कर शहरमें लूट-मार करने लगे! उन्होंने शक्कर* के बोरों और सब प्रकारकी जिंसोंको बड़ी दुर्दशाके साथ लूटा! इतने हीमें तीसरे दिन अँगरेज़ लोग शहरमें घुसे और देखते-देखते उन्होंने उन लुटेरोंको क़तल कर डाला। अँगरेज़ोंको सब लूटी हुई सामग्री अनायास मिलगई। अँगरेज़ी फ़ौज शक्कर आदि खा-पी कर ख़ूब आनंदित हुई।

---

*कालपीमें पहले शक्करका बड़ा व्यापार होता था। वहाँ शक्करके कई कारखाने थे, जिनमें शक्कर बनाई जाती थी। विदेशियोंने ये सब कार-ख़ाने नष्ट कर डाले।

अँगरेज़ोंको यहाँ जो फ़ायदा हुआ उससे कई गुना अधिक फ़ायदा यह हुआ कि उन्हें क़िलेमें ख़ूब माल असबाब मिला। रावसाहब पेशवा और उनके प्रधान तात्याटोपेने एक वर्ष भारी परिश्रमसे जो युद्धकी सामग्री एकत्र की थी वह सब सरकारी सेनाको बिना परिश्रमके मिल गई। उसमें सिर्फ़ बन्दूकमें भरनेकी बारूद ६०००० पौंड थी! इससे पाठक गण अनुमान कर सकते हैं कि और और चीज़ें - जैसे तोप, बन्दूक, तलवार, आदि— कितनी होंगी! ख़ुद एक अँगरेज़ ग्रंथकारने लिखा है कि इस सामानकी क़ीमत दो लाख रुपयेसे अधिक होगी! +अस्तु।

+डा० सिलवेस्टर लिखते हैं :—

"There was an indescribable medley here, just as in the fort of Jhansi, but the articles here all pertained to the art of war. There were guns, large and small, numbering fifteen, besides a large mortar and howitzer: There were conical stocks, of English round shot and shell, and several sheds in which the manufacture of cannon, howitzer, shells and the repair of arms, was being carried on. The tools and appliances, such as forges, hammers vices, smiths, braces, &c. were all of English make. Several muskets had been restocked, and very well fitted. There were vast numbers of broken brass shells, which proved they had rather failed in that branch of ordnance manufacture: they had all been cast on clay moulds, and the outside filed smooth......In fact this was the greatest central arsenal of the mutineers, and had it been capable of defence *it would not have fallen such an easy prey to us". The Campaign in Central India P. 116-17.*

सर ह्यूरोज़ने अनेक कठिनाइयाँ सहकर जो कालपीका विजय किया उसके लिए लार्ड केनिंगने २४ मई सन् १८५८ को तार द्वारा उनका अभिनंदन किया और लिखा कि "आज तक आपका युद्धमें जो बराबर यश छाया हुआ है उसमें कालपोकी विजय सबसे श्रेष्ठ है। इस विजय के लिए मैं आपका और आपके शूर सैनिकोंको बड़ा आभार मानता हूँ"। इस प्रकार सर रोज़ने सब मध्य हिन्दुस्तान बलवाइयोंसे ले लिया और कालपीमें अपनी विजय ध्वजा फहराई। इसके बाद कमांडर-इन-चीफ़ सर कॉलिन कैबेलने अपने अधीन सेनाके दो भाग करके उन्हें झाँसी और ग्वालियरमें बन्दोबस्त रखनेके लिए भेजने का निश्चय किया। युद्धमें लगातार कठिन परिश्रम करनेके कारण सर ह्यू-रोज़ बहुत थक गये थे, इस लिए विश्राम लेनेके लिए उन्होंने छुट्टी लेकर बम्बई लौट जानेका

"झाँसीके क़िलेमें जैसी गड़बड़ हुई वैसी ही यहाँ भी हुई। परन्तु यहाँ पर जितना सामान था सब युद्ध से सम्बन्ध रखता था। बमके गोले छोड़नेवाली दो बड़ी-बड़ी तोपोंके सिवा छोटी-बड़ी सब मिलाकर वहाँ कोई १५ तोपें और थीं। चोबदार विलायती गोलियोंका वहाँ एक ढेर-का-ढेर जमा था। कई एक छप्परोंके नीचे छोटी-छोटी तोपें, गोले और हथियारोंके बनाने और सुधारनेका काम चल रहा था। भट्टी, घन, सँड़सा, धौकनी वग़ैरह सब औज़ार विलायती बने हुए थे। बहुतसी बन्दूकोंके कुन्दे फिरसे लगाये गये थे और वे बिलकुल ठीक लगे थे। मिट्टीके साँचेमें ढाले हुए, ऊपरसे ख़ूब चिकने बहुतसे टूटे हुए पीतलके गोले वहाँ पड़े हुए थे। जिनसे यह बात साफ़ तौरसे मालूम होती थी कि बलवाई लोग गोले आदि बख़ूबी बना सकते थे। * * * सच तो यह है कि उनका यह सिलहख़ाना बहुत बढ़कर था। उसका यदि बचाव किया जाता तो इतनी आसानीसे वह हमारे हाथ न लगता।"

निश्चय किया। तारीख़ १ जूनको उन्होंने अपनी सेनाका फिर प्रकट रीतिसे गुण गाया और सैनिक लोगोंको धन्यवाद दिया। इस बार रोज़ साहबने कहा—"अँगरेज़ी फौजके आज्ञा-पालन और प्रबन्धके कारण ही सब जगह विजय प्राप्त हुई है"। उन्होंने अँगरेज़ोंकी असीम प्रशंसा की। क्योंकि विरुद्ध पक्ष की सेनामें किसी प्रकारकी व्यवस्था नहीं रह गई थी; और यही सारी गड़बड़का कारण हुआ; इसीलिए पेशवाकी फ़ौजकी प्रबल शक्ति, अद्वितीय शौर्य और अगणित युद्ध सामग्रियोंका कुछ उपयोग नहीं हुआ। यही कारण है कि उनके असंख्य आदमी मारे गये और अँगरेज़ोंकी थोड़ी सी सेनाको यह यश मिला। वास्तवमें कालपीके समान प्राकृतिक सुरक्षित जगह और चौरासी गुम्वजके मैदान सरीखे इतिहास-प्रसिद्ध रणाङ्गणमें हज़ारों पौंड बारूद, सैकड़ों तोप और अगणित फ़ौजके होने पर भी प्रतापशाली पन्तप्रधान समशेर बहादुर और सूबेदार शिवराम भाऊके समान वीर योद्धाओंके वंशजोंको थोड़ीसी अँगरेज़ी फ़ौजके सामने भागनेका यह दुर्द्धर प्रसंग क्यों आया? इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि इसका मुख्य कारण 'अप्रबंधही है। अथवा अप्रबंध कहनेकी अपेक्षा इसको 'दुर्दैव' कहें तो भी ठीक है! एक बार जहाँ दुर्दैवने घेर लिया वहाँ फिर किसीका वश नहीं चलता!

इस अध्यायके शीर्षमें दिये हुए श्लोकमें कविने क्या ही यथार्थ कहा है—"दैवके प्रतिकूल होने पर जलनिधिमें जल नहीं मिलता; अमृतके अनन्त सागर चन्द्रमामें सुधाकी बूँद नहीं मिलती, प्रत्यक्ष कल्पवृक्षके पास जानेसे भी वाञ्छा सिद्धि नहीं होती और सोनेके मेरूपर्वत में सोनेका एक टुकड़ा नहीं मिल पाता"।

सातवाँ अध्याय ।
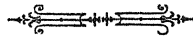
ग्वालियरकी लड़ाई और महारानीकी मृत्यु ।

जब रावसाहब पेशवाने देखा कि अब कालपी पर अँगरेज़ोंका अधिकार हो गया तब वे अपनी बची हुई सेनाको लेकर ग्वालियरसे ४६ मीलकी दूरी पर गोपालपुर नामक गाँवमें भाग आये । महारानी लक्ष्मीबाई भी उनके साथ ही थीं । रावसाहब पेशवाके सेनापति तात्याटोपे कोंचकी लड़ाईमें हारकर जालौनके पास चरखी नामक महलमें अपने पितासे भेंट करने चले आये थे । कालपीका पराभव सुनकर वे बहुत जल्दी गोपालपुरमें आकर इन लोगोंसे मिल गये । रावसाहब पेशवाके मित्र बाँदाके नवाब भी भागते-भागते गोपालपुरमें आ मिले ।

जिस प्रकार वर्षा ऋतुमें किसी-किसी दिन चारों ओरसे बादल घिर आते हैं और कुछ समय तक बिलकुल अन्धकार छा जाता है; और फिर एकाएक ख़ूब ज़ोरसे पानी बरसकर आकाश स्वच्छ और शांत हो जाता है, इसी प्रकार उस समय बुन्देलखण्डमें बलवाइयोंकी सत्ताका हाल हुआ । सन् १८५७ के जून मासमें एकाएक सागर, कालपी, बाँदा आदि स्थानोंसे ब्रिटिश राजसत्ता नष्ट होकर वहाँ बलवाइयोंका साम्राज्य शुरू हो गया ! परन्तु जब सर ह्यू-रोज़ और विटलाकने उन पर चढ़ाई की तब फिरसे अँगरेज़ी सत्ता स्थापित होनेमें बहुत समय भी नहीं लगा ! दो ही तीन महीनेमें सर ह्यू-रोज़ने नर्मदाके किनारेका सारा प्रांत अपने अधीन कर झाँसी और कालपीको भी जीत लिया । विटलाक साहबने बाँदा और करवी जीतकर

कालपीकी लड़ाईमें मदद दी। मेजर राबर्टसने राजपूतानासे कर्नल स्मिथको एक नवीन पलटन देकर यमुनाके पश्चिमी किनारे पर भेजा। इसके सिवा सरकारी अधिकारियोंने जगह-जगह बलवाइयों-के दबानेके लिए सेनाएँ नियत कर दीं। इस प्रकार धीरे-धीरे सारा बुन्देलखण्ड उनके हाथसे चला गया। झाँसी और कालपीके भारी क़िले, प्रचंड तोपें और अगणित युद्ध-सामग्री अँगरेज़ोंको मिल गई। और अन्तमें बहुतसी सेनाका भी नाश हुआ। इस कारण निराश होकर रावसाहब पेशवा, तात्याटोपे, बाँदाके नवाब आदि इस बात का विचार करने लगे कि अब क्या करना चाहिए।

इन सब लोगोंके लिए यह बड़ा कठिन समय था। यह वह समय था कि जब इन सब राजसी लोगोंकी बुद्धि-चतुरता कसौटी पर कसी जानेवाली थी। ऐसे समयमें किसी युक्तिके बल पर फिर विजय प्राप्त किये बिना रक्षाका और कोई उपाय न था। और इधर अँगरेज़ी सेनासे टक्कर लेना भी बहुत कठिन हो गया था; क्योंकि पहले तो वह सेना स्वयं शिक्षित और युद्ध-कलामें प्रवीण थी, तिस पर समय-समय पर बहुत सी युद्ध-सामग्री मिलनेके कारण उसका पक्ष और भी ज़ोरदार हो गया था। विरुद्ध पक्षकी दशा इस समय बिलकुल शोचनीय हो रही थी और न सेना हीका प्रबन्ध ठीक था। यदि ये लोग अब चुप बैठते हैं तो भी काम नहीं चलता; उधर अँगरेज़ी सेना इनकी तलाशमें है। रावसाहब पेशवा, बाँदाके नवाब और तात्याटोपे बड़े सोचमें पड़ रहे थे कि इस संकट के समयमें क्या उपाय करना चाहिए। पेशवाकी छावनीमें रातभर इसी बात पर विचार होता रहा; पर कोई बात निश्चित नहीं हुई। सब लोगों पर घबराहट और चिन्ता छा गई।

महारानी लक्ष्मीबाई यह बात जानती थी कि बलवान अँगरेज़ी फौजके सामने हमारी एक भी न चलेगी। परन्तु तब भी उनका

निश्चय और साहस विलक्षण था; इस कारण बार-बार अँगरेज़ों पर चढ़ाई करने के लिए उन्हें आवेश चढ़ आता था और एक वीर-शिरोमणिकी तरह रणशूरता दिखलाकर विजय प्राप्त करनेकी उन्हें बड़ी लालसा थी। वे चाहती थीं कि पेशवाकी फौजका एकबार खुद प्रबन्ध कर प्रबल युद्ध करें। जब उन्हें मालूम हुआ कि रावसाहब पेशवा इस समय बहुत चिन्तित है तब वे स्वयं उनके डेरे पर गईं और उनसे बोलीं—

"आज तक जिन-जिन वीरोंने बहादुरी दिखलाई है उन सबको सुदृढ़ क़िलोंका आश्रय लेना पड़ा है। छत्रपति श्रीशिवाजी महाराजने मुसल्मानोंको नीचा दिखाकर जो हिन्दू-राष्ट्र स्थापित किया था वह भी सिंहगढ़, रायगढ़, तोरण आदि क़िलोंके ज़ोर पर किया था। पहले पहल अपनी रक्षाके लिए उन्होंने प्रचंड और लड़ाईके योग्य क़िलेले लिये; इसके बाद अपना पराक्रम और शूरता दिखलाकर राजसत्ता स्थापित की। इसलिए प्राचीन अनुभवसेभी यही सिद्ध होता है कि बिना क़िलोंके लड़ाई करना वृथा है, झाँसी और कालपीके समान जंगी क़िले हमारे अधीन थे। इसीलिए इतने दिनों तक अँगरेज़ी फ़ौज के सामने हम लोग लड़ सके। परन्तु दुर्दैवके कारण अब ये क़िले हम लोगोंके हाथमें नहीं रहे। इसलिए फिर एक प्रचंड क़िला हस्तगत करनेका प्रयत्न करना चाहिए। इस समय जी बचाकर जहाँ हम लोग भागकर जायँगे; अँगरेज़ी-सेना वहीं हमारे पीछे-पीछे पहुँचेगी और हमारा नाश किये बिना न रहेगी। जोकुछ होना होगा सो तो होगा ही; उस पर कुछ ध्यान न देकर इस समय हमें कोई क़िला लेना चाहिए, और उसकी मददसे अँगरेज़ोंसे लड़ाई करके विजय प्राप्त करना चाहिए, यही इस समय कर्तव्य है"। महारानी लक्ष्मीबाईकी यह सलाह सबको पसंद आई। रावसाहब पेशवाने पूछा कि कौनसा क़िला हस्तगत करना चाहिए? महारानी

यह बात स्वयं क़बूल की है कि यदि महारानी उस समय न होतीं तो शायद यह उपाय और किसीको न सूझता। इस उपायके ढूँढ़ निकालनेका सारा श्रेय महारानीको ही प्राप्त है। अब रही महारानीकी बात सो इसमें सन्देह नहीं कि बड़े कामोंके करनेमें जिस प्रकारके साहस और बुद्धिमानीकी ज़रूरत पड़ती है वह सब उनमें थी। उन्हें अपने शत्रुओंके प्रति द्वेष-बुद्धि, बदला लेने की तीव्र इच्छा, हृदयके सदा जलते रहने और प्राणान्त हो जाने तक युद्ध करनेकी इच्छा आदिके कारण इस मार्गका अवलम्बन करना पड़ा था। उनके मार्गमें जो आपत्तियाँ थीं उनको वे अच्छी तरह जानती थीं; वे यह भी जानती थीं कि पहली बार चाहे उनकी जीत हो भी जाय; पर अन्तमें उनका पराभव निश्चित है। उनके साथियोंमें राव-साहब पेशवा पर उनका वज़न अधिक था। उपर्युक्त बातोंसे हम यह निश्चय-पूर्वक कह सकते हैं कि साहसी महारानीने जो उपाय सुझाया उसका अवलम्बन उनके साथियोंको गोपालपुरमें करना ही पड़ा।"†

"The situation then seemed desperate to the rebel chieftains. But desperate situations suggest desperate remedies; and a remedy which, on first inspection might well seem desperate, did occur to the fertile brain of one of the confiderates. To which one it is not certainly known. But, judging the leading group of conspirators by their antecedents—Rao Saheb, the Nawab of Banda, Tantia Topi, and the Rani of Jhansi—we may at once dismiss the two first from consideration. They possessed neither the character nor the genius to conceive a plan so vast and so daring. Of the two who remain, we may dismiss Tantia Topi. Not that he was incapable of form-

महारानीकी युक्ति रावसाहब पेशवाको बहुत पसन्द आई। इसके लिए उन्होंने महारानी लक्ष्मीबाईकी बड़ी प्रशंसा की। उस समय तात्याटोपे भी वहीं मौजूद थे। महारानीके कथनका उन्होंने पूर्ण-रूपसे अनुमोदन किया। तात्याटोपे अनेक बार गुप्त रीतिसे ग्वालियर गये थे, इस कारण उनको वहाँके दरबार और सेनाका हाल अच्छी तरह मालूम था। उनको यह मालूम हो गया था कि इस धावेमें पेशवाको किस क़दर यश प्राप्त होगा। महारानीका प्रस्ताव सबकी अनुमतिसे पास हो गया और ग्वालियर पर चढ़ाई करनेकी तैयारी हुई। महारानीकी यह युक्ति बड़ी चतुरता और महत्त्वकी थी! जब पेशवाकी फौजके सरदारोंको यह बात मालूम

---

ing the design, but—we have his memoirs and in those he takes to himself no credit for the most successful act with which his career is associated. The fourth conspirator possessed the genius, the daring, the despair necessary for the conception of great deeds. She was urged on by hatred, by desire of vengeance, by a blood-stained conscience, by a determination to strike hard whilst there was yet a chance. She could recognise the possibilities before her, she could hope even that if the first blow were successful the fortunes of the campaign might be changed; she possessed and exercised unbounded influence over one at least of her companions—the Rao Sahib. The conjecture, then, almost amounts to certainty that the desperate remedy which the confiderates, decided to execute at Gopalpur was suggested and pressed upon her comrades by the daring Rani of Jhansi:—*Malleson's History of the Indian Mutiny*, *Vol. V. P. 143-144.*

हुई तब उन्हें भी कुछ विजय पानेकी आशा और उत्साह हुआ। उन्होंने भी महारानीकी बहुत तारीफ़ की और ग्वालियर पर चढ़ाई करके वहाँका क़िला जीतनेकी इच्छा प्रदर्शित की।

महारानी लक्ष्मीबाईकी सलाहके अनुसार सब लोगोंने ग्वालियरकी ओर कूच किया। यहाँ पर पाठकोंके जाननेके लिए पहले सेंधिया-सरकारके दरबारकी दशाका कुछ हाल लिखना आवश्यक जान पड़ता है।

उस समय जयाजीराव सेंधिया ग्वालियरके महाराज थे। उनकी अवस्था उस समय २३ वर्षकी थी। सन् १८४४ ई० में जब अँगरेज़ों और ग्वालियरकी लड़ाई हुई थी तब उसमें अँगरेज़ोंकी विजय हुई थी। सेंधिया-सरकारने तब उनसे सुलह कर ली थी। उसी समयसे ग्वालियर-राज्यमें अँगरेज़ी-सरकारका अच्छी तरह प्रवेश हो गया; वहाँके दरबारमें उसका ख़ूब दबाव हो गया। इस सुलहसे ग्वालियरका क़िला भी अँगरेज़ोंके हाथमें चला गया था और सेंधिया-सरकारका लड़ाईका सामान और सेना भी तितर-बितर हो गई थी। सन् १८५३ से यद्यपि महाराज जयाजीरावको रियासतका पूरा अधिकार मिल गया था तो भी उसका कुल इन्तज़ाम रेज़िडेंटके विचारसे चलता था। महाराज जयाजीराव बड़े बुद्धिमान पुरुष थे। महाराजकी ओरसे श्रीयुत दिनकरराव राजवाड़े राज-काज करते थे। वे राज-काज करनेमें बड़े निपुण और व्यवहार-दक्ष थे। उन्होंने रेज़िडेंटसे मिलकर राज्यका अच्छा सुधार किया था।

मई महीनेमें जब मेरठ और दिल्ली आदि स्थानोंमें खुल्लमखुल्ला बलवा हुआ और अँगरेज़ोंका पराभव हुआ तब इसकी ख़बर ग्वालियरमें भी पहुँची। ग्वालियरमें अँगरेज़ सरकारकी कंटीन्जंट फ़ौज थी और ख़ुद सेंधिया-सरकारकी भी १०००० फ़ौज थी। अँगरेज़ सरकारके विरुद्ध

कुल सेनाओंका मन बिगड़ रहा था। इस बातका कुछ ठीक न था कि यह सब फ़ौज कब विरोधियोंसे जा मिले। इन्हीं दोनों में अँगरेज़-सरकार ने बहुत-सी रियासतें ब्रिटिश राज्यमें मिला ली थीं, इसलिए लोगोंका असन्तोष और भी बढ़ रहा था इसी असन्तोषमें कारतूसों की चर्बीसे हिन्दू-धर्मके विध्वंसका जोश भी लोगोंमें एकदम फैल गया; थोड़े ही समयमें अँगरेज़ी राज्यके विरुद्ध लोगोंके मन ख़राब हो गये। ग्वालियर-दरबारमें भी अराजनिष्ठा फैल गई और पुराने सरदार और राजनीतिज्ञ अँगरेज़ी राज्य-पद्धतिके प्रतिकूल हो गये।

मेरठ और दिल्लीमें बलवाइयोंकी विजय देखकर उत्तर हिन्दुस्तानमें बहुत जगहकी सेनाएँ बलवा करनेके लिए उद्यत हो गईं। यह देखकर सेंधिया सरकारने खुद अपने पासके लोगोंको लेफ्टिनेंट गवर्नरको रक्षा के लिए बहुत जल्दी आगरे रवाना किया और मराठी फ़ौजकी एक टुकड़ी इटावाको भेज दी। इतना ही नहीं, किन्तु उन्होंने ग्वालियरकी कंटीन्जंट फ़ौजको बिगड़ी हुई देखकर वहाँके यूरोपियनोंको बचानेके लिए अनेक प्रयत्न किये। ता० १४ जूनको वहाँकी फ़ौज एक दम भड़क उठी; उसने खुल्लम-खुल्ला बलवा करना शुरू कर दिया। अँगरेज़ी छावनीमें आग लगा दी गई और मेजर ब्लेक, शेरीफ़, कैप्टन हाकिन्स और स्टुवर्ट आदि फ़ौजी अँगरेज़ोंको मार डाला! कप्तान मैकफर्सनको यह हाल मालूम होते ही वे बहुत जल्दी फूलबाग़में सेंधिया-सरकारके महलमें आये और निश्चय किया कि रेजिडेन्सीके सब यूरोपियन लोगोंको स्त्री-बच्चों-सहित बहुतसी सेनाके साथ आगरे भेज देना चाहिए। मैकफ़र्सन साहब ग्वालियर हीमें रहना चाहते थे; पर सेंधिया-सरकारने यह बात पसन्द नहीं की; उन्होंने साफ़ तौरसे कह दिया कि "तुम भी आगरे चले जाओ, यहाँ रहोगे तो बलवाई

लोग तुम्हारी जान लिये बिना न छोड़ेंगे" ! इसके बाद महाराज जयाजीरावने बहुतसी सेना उन सबके साथ कर दी और उन्हें आगरा रवाना कर दिया ।

चम्बल नदीसे छः कोस पर हिंगोना नामक एक गाँव है। वहाँ पर कुछ बलवाई लोग छिपे हुए थे। उन सबका मुखिया सेंधिया-सरकारका एक पुराना नौकर जहाँगीरखाँ था। उसकी इच्छा थी कि इन सबको बातोंमें भुलाकर नदीके खोहमें ले जायँ और अपनी छिपी हुई सेनाके द्वारा इनका नाश कर डालें। परन्तु ग्वालियर महाराजके दीवान दिनकरराव रघुनाथ रजवाड़े ने ठाकुर बलदेवसिंह नामक एक चतुर सरदारको इन लोगोंकी मददके लिए भेजा था, उसने बड़ी होशियारीके साथ कुल सेनाके दो भाग करके बलवाइयोंकी इच्छा पूरी न होने दी। उसने सब यूरोपियनों को सुख-पूर्वक चम्बल पार कर दिया। इसके बाद धौलपुरके राना ने हाथी आदि भेजकर अँगरेज़ोंको आगरे पहुँचा दिया। इस समय अँगरेज़ोंके साथ ग्वालियरके महाराज जयाजीराव, दीवान दिनकरराव, ठाकुर बलदेवसिंह और धोलपुरके रानाने जो उपकार किया, वह चिरस्मरणीय है।

इसके बाद अन्य सब अँगरेज़ भी शीघ्र ग्वालियरसे आगरे भेज दिये गये। अब कंटोन्जंट फ़ौजने सेंधिया-सरकारसे इस बातकी बिनती की कि आप अँगरेज़ोंका पक्ष छोड़ दें और हमारी सेनाके अधिनायक बनकर आगरे पर चढ़ाई करें। ऐसा करनेसे आप फिर स्वतंत्र हो सकेंगे। परन्तु राजभक्त सेंधिया महाराजके मन पर इस बिनतीने कुछ असर न किया। उस समय आगरेमें अँगरेज़ोंका बन्दोबस्त बिलकुल कच्चा था। ग्वालियरकी फ़ौज और दूसरे बलवाई लोग यदि वहाँ चढ़ाई कर देतेतो विरोधियोंकी अवश्य विजय होती। इसीलिए मेजर मैकफ़र्सनने वहांसे सेंधिया

सरकारके पास यह ख़बर भेजी कि जहाँ तक हो सके ऐसा उपाय कीजिए कि जिसमें बलवाई फ़ौज आगरेकी तरफ़ न आने पावे। यह ख़बर पाते ही सेंधिया-सरकार और उनके दीवानने बिगड़ी हुई फ़ौजको समझा-बुझाकर किसी-न किसी तरह ग्वालियर हीमें रख लिया। और इसी कारण अँगरेज़ लोग आगरेके क़िलेमें संरक्षित बने रहे।

ग्वालियरकी कंटोन्जंट फ़ौज कुछ दिन तक चुप रही। उसके मुख्य-मुख्य अधिकारियोंने सेंधिया-सरकारको वशमें करनेका बहुत प्रयत्न किया। उन्होंने यहाँ तक कहा कि आप हमारे साथ होकर आगरे पर चढ़ाई करें अथवा इस काममें हमें द्रव्यकी सहायता करें, पर दीवान दिनकररावने अपना गुप्त उद्देश फ़ौजके लोगों पर बिलकुल प्रकट नहीं होने दिया। उन्होंने अपनी चतुरता, दृढ़ निश्चय और धैर्य्यसे विरोधी फ़ौजवालोंके पक्षको अपनी अनुकूलता दिखाकर सेंधिया सरकार की और अपनी रक्षा की। दरबारके दो सरदार और दीवान दिनकरराव सिर्फ़ यही तीन आदमी ग्वालियर-महाराजके अनुकूल थे। बाक़ी सब लोगोंके मन अँगरेज़ोंके विरुद्ध हो गये थे। ये विरोधी लोग सेंधिया सरकारको वशमें करनेका प्रयत्न कर रहे थे। यदि महाराज जयाजीरावका भीतरी हेतु इन लोगोंको उस वक्त मालूम हो जाता तो ये लोग उसी वक्त राजमहलको तोपोंकी मारसे नष्ट कर डालते क्योंकि उनकी १०००० फ़ौज भी विरोधियोंमें गुप्त रीतिसे मिली हुई थी। सारे दरबारमें अँगरेज़ोंके विरुद्ध सलाहें हो रहीं थीं। नाना साहब पेशवाकी कानपुरकी विजय ही ग्वालियर-दरबारके प्रोत्साहनका कारण थी। दरबारके सब महाराष्ट्र नाना साहबसे बहुत ख़ुश थे। दिल्ली, मेरठ और लखनऊ आदि स्थानोंमें अँगरेज़ोंकी दशा बहुत शोचनीय हो रही थी। बहुत लोगोंका तो यही मत

है कि उस समय ब्रिटिश-सत्ता एक प्रकारसे नष्ट ही हो गई थी यदि ऐसे अवसर पर सेंधिया-सरकार भी अँगरेज़ी सरकारके विरुद्ध हो जाते तो सन् ५७ के बलवेको पूरी सफलता प्राप्त हो सकती थी। बुन्देलखण्डकी प्रायः सभी रियासत ग्वालियर-महाराज को इस काममें सहायता देतीं। भूपाल और मालवा कंटींजन्ट और होलकरकी बहुत सी फ़ौज विरोधियोंके अनुकूल हो गई थी। ऐसे समयमें ग्वालियर-सरकारने यदि थोड़ीसी गड़बड़ करदी होती तो हिन्दुस्तानके इन प्रान्तोंमें अँगरेज़ोंका टिकना कठिन हो जाता। *इस समयका वर्णन एक अँगरेज़ ग्रन्थकारने इस प्रकार किया है:—

"Gwalior, while it thus continued in his hands, might have been regarded as in one sense the key of India, or rather, parhaps, as one link of a chain, which could not have given way in any part without ruining our power in India. If the Ruler of Gwalior had either played us false, or succumbed to the strong adverse elements with which he had to contend, the revolt would almost certainly have been national and general instead of being local and mainly military; and instead of its fate being decided by those operations in the easily traversable Gangetic valley, upon which public attention was concentrated, we should have had to face the warlike races of Upper India combined against us, in a most difficult country and, in all probability, those of the south also'..."had Scindia then struck against us—nay, had he even done his best in our behalf, but failed—the character of the rebellion might

"ग्वालियरको एक प्रकारसे हिन्दुस्तानकी कुंजी समझना चाहिए अथवा यह कहना चाहिए कि वह एक ऐसी शृंखला थी जिसका यदि कोई भी भाग टूट जाता तो वह हिन्दुस्तान में हमारी युक्तिका नाश किये बिना न रहता। ग्वालियरके महाराज हमको धोखा देते या बलवाइयोंके वश हो जाता तो यह बलवा केवल स्थानिक और फ़ौजी सिपाहियोंका न होकर सार्वत्रिक और राष्ट्रीय हो जाता। उस समय हमें गंगा नदीके उन प्रदेशोंमें ही, जो आसानीसे पार हो सकते हैं, लड़ना नहीं पड़ता; किन्तु उत्तरीय हिन्दुस्तानके कठिन प्रदेशमें और युद्ध-कुशल जातियोंसे युद्ध करना पड़ता। यह भी सम्भव है कि दक्षिणी जातियोंसे भी युद्ध करना पड़ता। यदि इस समय महाराज सेंधिया हमारे विरुद्ध खड़े हो जाते—इतना ही नहीं यदि वे अपनी पूरी शक्तिसे हमारी ही ओरसे शत्रुओंके विरुद्ध लड़कर हार जाते—तो भी इस बलवेका रूप इतना बदल जाता कि जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।"

सितंबर महीनेके अन्त तक सेंधिया-सरकार और दीवानने अपना गुप्त हेतु कन्टीजन फौज पर प्रकट नहीं होने दिया। परन्तु इसके बाद स्वयं एक ऐसा अवसर आ पड़ा कि जिससे उनका हेतु छिप नहीं सका। महू और इन्दौरके विरोधियोंने ग्वालियरकी फ़ौज को और भी भड़काया। इधर नाना साहब पेशवाके गुप्तचर भी इस फ़ौज को अपने वश में कर लेनेका प्रयत्न करने लगे। इस कारण ७ सितंबर को इस फ़ौज ने अपने ३०० चुने हुए आदमी महाराज के महल में भेजे। उन्होंने सेंधिया-सरकार के पास जाकर कहा कि हम लोग आगरे पर चढ़ाई करके गोरे लोगों को मार भगाना चाहते हैं, इसलिए आप हमारी सहायता करें। इसके उत्तर में ग्वालियर महा-

---

have been changed almost beyond the scope of speculation." *Memorials of Service in India.*

राज ने साफ़ कह दिया कि "तुम्हारा यह बर्ताव हमारे हुक्म के बाहर है। बरसात ख़तम होने तक अगर तुमने किसी प्रकार की भी गड़बड़ की तो हमारी ओर से तुम्हें कोई मदद न मिलेगी और और तुम्हारी तनख़्वाह भी बन्द कर दी जायगी"! यह सुनते ही सेंधिया-महाराज का गुप्त हेतु उन लोगों को मालूम हो गया। उन्होंने आवेश के साथ उत्तर देकर प्रकट रीति से बलवेका झंडा खड़ा कर दिया। महाराज जयाजीराव पर यह बड़े संकट का समय आ पड़ा। कंटींजंट फ़ौजने तोपों का मोरचा लगाकर महल पर और शहर पर चढ़ाई करने का निश्चय किया। यह ख़बर लगते ही महाराज ने भी अपनी मराठी पलटन की तैयारी शुरू कर दी और ५००० नवीन सेना भरती की। महाराज ठाकुर लोगों की फ़ौज को आगे कर के ख़ुद उसके सेनापति बनें और बड़ी होशियारी से उन्होंने शहर की रक्षा की। जब कंटींजंट फ़ौजने देखा कि अब हमारी एक भी न चलेगी तब वह पीछे हट गई। और इसी समय नाना साहब पेशवा के प्रधान तात्याटोपे के साथ यह सब सेना कानपुर चली गई। (इसी फ़ौजने कानपुर में जनरल विंडहम की फ़ौज को हराया और तात्याटोपे के साथ जाकर पीछे से झाँसी की लड़ाई में मदद की) इस कारण आगरे के अँगरेज़ों पर जो आपत्ति आने वाली थी वह एक दम टल गई।

यद्यपि कंटींजंट फ़ौज ग्वालियर से चली गई तो भी सेंधिया-सरकार की भीति तिलमात्र भी कम नहीं हुई; क्योंकि ग्वालियर की सब पलटनें भीतर-ही-भीतर महाराज के विरुद्ध भड़क उठी थीं। ग्वालियर के कुछ मुख्य सरदार अपनी चतुरता और मैकफ़र्सन साहब की गुप्त सलाह से उन फ़ौजों को साधे हुए थे। चारों ओर बलवाइयों का ज़ोर सुनकर ग्वालियर के सरदार

भी ब्रिटिश-राज्य के विरुद्ध हो गये थे; उनको सिर्फ हुक्म पाने की देरी थी। ऐसे समय में ग्वालियर के राज-काज कुशल और समग्र-दर्शी लोगों ने अँगरेज़ों को बहुत बचाया।

सितम्बर सन् १८५७ से अप्रेल १८५८ तक सात-आठ महीने किसी तरह बीत गये थे। इधर झाँसी और कालपी आदि के युद्धों की खबरें सुन-सुनकर ग्वालियरवालों के मन और भी भड़क रहे थे। दीवान दिनकररावने यद्यपि अभी तक अपनी चतुराई से सब प्रबन्ध ठीक कर रक्खा था; पर ऐसा जान पड़ने लगा कि अब उनके मनके अनुसार सब बातें न चलेंगी। इसी समय एक बार फिर तात्याटोपे सेंधिया की फ़ौज को भड़काने के लिये आये थे। उनको इस समय सब दरबार के लोगोंने वचन दिया कि हम लोग आपको जब काम पड़ेगा, सहायता देंगे। जिस प्रकार बारूद के कारखाने में आग लगने के लिए आग की एक चिनगारी ही काम कर जाती है उसी प्रकार ग्वालियर में भी गड़-बड़ हो जाने के लिए सिर्फ़ एक अल्प कारण की आवश्यकता थी।

ग्वालियर-दरबार की तो यह दशा हो गई थी। उधर सर ह्यू रोज़ साहबने झाँसी और कालपी जीतकर विद्रोहियों को इधर की ओर भगा दिया था। तो भी चारों ओर अराज-निष्ठाकी आग धधक रही थी। इतना ही नहीं, किन्तु अवध प्रान्त के रुहेले और कालपी से हताश हुई रावसाहब पेशवा की सेना के लोग यदि मिल जाते और सेंधिया-सरकार की कुल फौज यदि इन लोगों को मदद दे देती तो फिर इस आग के इतनी ज़ोर से भड़क उठने की सम्भावना थी कि उसकी ज्वाला चारों ओर फैलकर अँगरेज़ी राज्य-सत्ताको भस्मीभूत कर देती। इस समय सारा दार-मदार सेंधिया सरकार पर था।†

---

†इस समय सेंधिया महाराज यदि बलवाइयोंमें शामिल हो गये होते

इसलिए आगरेमें ग्वालियरके रेजिडेण्ट मेकफ़र्सन साहबने विचार किया कि ग्वालियरमें भी कुछ अँगरेज़ी फ़ौज रखना उचित है। इस विचारके अनुसार उन्होंने लार्ड केनिंग साहबको भी पत्र भेजा था। पर ग्वालियरमें गोरी सेना पहुँचने ही पर थी कि इधर गोपालपुरमें पेशवाकी छावनीमें ग्वालियर पर चढ़ाई करना निश्चित हो गया और उनकी सेना वहाँसे कूच करके सेंधियाके राज्यमें आमन गाँव तक आ भी पहुँची।

तात्याटोपेने ग्वालियर जाकर वहाँके मुखिया दरबारी लोगोंके

तो प्रलयाग्निकी ज्वाला दक्षिण तक भभक उठती; और यदि उधर भी इस ज्वाला का प्रवेश हो जाता तो यहाँके राजकर्ताओंको हिंदुस्तानसे अन्तिम 'राम-राम' करनेका मौका आ जाता। इस विषयमें एक ग्रन्थकार लिखता है:—

"It needs but a glance at the map to show what the result might have been, had Gwaliar sided with the rebels. The Nizam's territories, already sufficiently inflammable, would assuredly have caught the fire and it is questionable, whether in that case any part of Southern India could have been saved." *P. 326.*

सचमुच ऐसे संकटके समयमें सेंधिया सरकारकी राजभक्ति ही अँगरेज़ी राज्यके लिए संजीवनी हो गई! कहते हैं कि गवर्नर जनरल लार्ड केनिंग तो यहाँ तक निराश हो गये थे कि उन्होंने नीचे लिखा हुआ तार भेजा था:—"If the Scindia joins tne Mutiny I shall have to pack off to-morrow." अर्थात 'यदि सेंधिया-सरकार बलवेमें शामिल हो जायँगे तो फिर मुझको कल ही अपना डेरा-डंडा उठाना पड़ेगा'!

मन पहले हीसे मिला लिये थे। इसी कारण पेशवाकी फ़ौजके आनेमें किसीने कुछ रोक-टोक नहीं की। यही नहीं किन्तु राव-साहब पेशवाने प्रकट रीतिसे महाराज जयाजीराव और श्रीमती बायजाबाई † को इस प्रकारके पत्र लिखे थे कि 'हम आपके पास स्नेह-भावसे आते हैं। आप हमारे पुराने नातेको यादकर हमें इस समय सहायता दें, तब हम दक्षिणको जा सकेंगे।' परंतु दीवान दिनकररावने इस पत्रका जवाब संदिग्ध और बड़ा ही गोलमाल दिया और यह सब हाल रेज़िडेण्ट साहबको लिख भेजा। इधर राव साहब पेशवा इस भरोसे पर ता० २८ मईको आमन गाँवमें आ पहुँचे कि सेंधिया हमारे पीढ़ीजाद नौकर हैं; वे हमको अवश्य सहायता करेंगे। पेशवाके वहाँ आते ही सेंधिया-सरकार्के सूबाने ४०० पैदल और १५० घुड़सवार सिपाही लेकर पेशवाकी सेनाका मार्ग रोका। उस समय राव साहब पेशवाने उसकी बड़ी भर्त्सना की और कहा—"तुम हमें रोकनेवाले कौन हो? सेंधिया और दिनकररावको हम क्या समझते हैं। वे कौन हैं

---

† श्रीमती बायजाबाई सेंधिया दौलतराव सेंधियाकी पत्नी और महाराज जयाजीरावकी मातामही थीं। दूसरे बाजीराव पेशवाके समयमें सर्जेराव घाडगे नामक जो प्रसिद्ध पुरुष थे वह बायजाबाईके पिता थे। बायजाबाई एक इतिहास-प्रसिद्ध स्त्री है; उन्होंने अपने पतिके मरने पर कई वर्ष तक बड़ी बुद्धिमत्तासे राजकाज किया था। आगे चल कर कुछ दिनोंके बाद उनकी धर्म पर बड़ी निष्ठा हो गई थी। उनका दान, धर्म बहुत प्रसिद्ध है। लाख ब्राह्मण भोजन करानेका प्रण करके जगह जगह तार द्वारा निमन्त्रण भेजनेकी जो कहावत बृद्ध लोग बताते हैं वह इन्हींकी है। बलवे की समाप्ति होने पर कुछ दिनके बाद इनकी मृत्यु हुई। मिसेस फैनी पार्क नामक विलायती स्त्रीने इनकी भेंटका हाल बहुत अच्छा लिखा है।

और हमें किस लिए रोकेंगे ? हम राव पंत प्रधान पेशवा हैं, और स्वराज्यके लिए तथा स्वधर्मके लिए युद्ध करते हैं। सेंधियाके पूर्वजोंने हमारी चाकरी की है और हमने ही उन्हें राज्य दिया है। सेंधियाकी सब सेना हमसे मिली हुई है। सेनाके अफ़सरोंके हमारे पास आश्वासन-पत्र आये हैं। तात्याटोपे ग्वालियरमें आकर और सबसे मिलकर पहले ही सब हाल मालूम करले गये हैं। अब तैयारी हो चुकी है। इसीलिए हम लश्करकी ओर आ रहे हैं। हमारे साथ युद्ध करनेकी क्या तुम्हारी इच्छा है ?" राव साहब पेशवाका ऐसा आवेश-युक्त भाषण सुनकर वह सूबा बिलकुल सिटपिटा गया और जब उसने देखा कि उनकी प्रचंड सेनाके सामने मेरा कुछ वश न चलेगा तब उसने लाचार होकर युद्ध करनेका विचार छोड़ दिया। पेशवाकी सेना ३० मई १८५८ को रातके समय ग्वालियरसे ६ मील पर बड़ागाँव नामक स्थानमें निर्भयतासे उतर पड़ी।

राव साहब पेशवाने अपने आनेका समाचार सेंधिया सरकारके पास भेज दिया और योग्य सहायता देनेके लिए उनसे बिनती की। ग्वालियर-दरबारमें पेशवाका पत्र पहुँचते ही उस पर बड़ा वाद-विवाद शुरू हुआ। सेंधिया महाराजके बहुतसे सरदारों और राजनीतिज्ञोंने अंतस्थ रीतिसे पेशवाके वशमें होनेके कारण सहायता देनेके लिए अपनी सम्मति दी। दीवान दिनकरराव और महाराज जयाजीरावका उस समय ब्रिटिश-सरकार पर बड़ा स्नेह और विश्वास हो गया था. इस कारण उनकी इच्छा इन लोगोंकी सहायता करनेकी न हुई। पेशवाके साथ पहलेसे चले आये अपने सेव्य-सेवक-भाव-सम्बन्ध पर यदि उस समय महाराज ग्वालियर विचार करते अथवा अधिक नहीं तो केवल स्वदेश-बंधुत्वसे नातेसे ही स्वराज्य स्थापित करनेमें उनका अभिनन्दन

करनेकी उनकी इच्छा होती तो शायद उस समय वे रावसाहब पेशवाको मदद देते। पर उन्होंने वैसा नहीं किया। उन्होंने प्रत्यक्ष स्वराज्य--संस्थापन और स्वधर्म-रक्षण करनेकी अभिलाषा रखनेवाले प्रतापशाली पेशवाके वंशज रावसाहबकी बिनती नहीं स्वीकार की; और परकीय तथा परधर्मोंके साथ अपना सच्चाईका बर्ताव क़ायम रखकर उसकी सत्ता स्थापित होनेमें सहायता दी! भारतवर्ष के इतिहासमें यह बात ध्यान देकर विचारने योग्य है।

सेंधिया-सरकारने इस बातका पूर्ण रीति से निश्चय कर लिया था कि हम बलवाइयोंकी बिलकुल सहायता न करेंगे और न उनको किसी प्रकारका आश्रय देंगे। इतनाही नहीं किन्तु उन्होंने कहा था कि "बलवाइयोंसे युद्ध करके हम उन्हें पराजित करनेके लिए तैयार हैं"। दीवान दिनकरराव बड़े अनुभवी और चालाक पुरुष थे। वे विचार कर रहे थे कि अपना भीतरी हेतु बलवाइयोंको एक दम जताना न चाहिए; और अपनी ओरसे पहले उनके ऊपर धावा न करके बड़ी युक्तिसे शहरकी रक्षा करनी चाहिए; एवं अँगरेज़ी सेनाकी सहायता पाते ही एकदम बलवाइयोंका नाश करना चाहिए। इसी विचारके अनुसार वे अपने पोलिटिकल एजेंट मेजर मेकफ़र्सनसे पत्र-व्यवहार भी कर रहे थे। इसलिए उन्होंने जब तक सर ह्यू-रोज़ साहबकी फ़ौज न आ जाय तब तक अपनी सब फ़ौज जहाँकी तहाँ बनी रखनेका विचार किया; और केवल थोड़ीसी चुनी हुई मराठी फ़ौजको आगे बढ़ाकर बलवाइयोंको वहीं रोके रखनेका विचार किया; और केवल थोड़ीसी चुनी हुई मराठी फौजको आगे बढ़ाकर बलवाइयोंको वहीं रोके रखनेका प्रबन्ध किया। परन्तु सेंधिया-सरकारकी सेनाके सिपाहियों और उनके अफ़सरोंके मन शुद्ध न थे।

वे सब लोग बलवाइयोंके हित-चिन्तक थे। कुछ थोड़ी सी मराठी पलटन महाराज ग्वालियरकी ओर थी। इसी कारण इन सबमें परस्पर द्वेष-भाव और मत्सर भी था। फ़ौजी सरदारोंमें नित्य नई-नई सलाह हुआ करती थीं। ३१ तारीखको प्रातःकाल सेंधिया-सरकारके सरदारोंने सलाह दी कि ८००० फ़ौज और २४ तोपें लेकर मुरार की छावनीसे बलवाइयों पर हमला करना चाहिए और उन्हें भगाना चाहिए। दीवान साहबको यह विचार पसन्द नहीं आया। उन्होंने वैसा न करके उस दिन तो सब फ़ौज जहाँकी तहाँ रहने दी; परन्तु आधीरातके समय सेंधिया-महाराजको फिर किसीने उलटी पट्टी पढ़ा दी और शीघ्रही बलवाइयों पर चढ़ाई करनेके लिए सलाह दी। दीवान साहबकी गैरहाज़िरीमें महाराजने तरुणाईके जोशमें आकर इस बिचारका अनुमोदन कर दिया! इससे राव साहब पेशवाको ग्वालियर-महाराजसे सहायता मिलना तो एक ओर रहा; उलटा १ जूनको उनकी सेनासे टक्कर लेनेका प्रसंग आ पड़ा!

ता० १ जूनको प्रातःकाल महाराज जयाजीराव स्वयं फ़ौजी पोशाक पहनकर, कमरमें तलवार लटकाकर, घोड़े पर सवार हुए और अपनी सब सेनाको साथ लेकर मुरारके पूर्व दो मील पर बहादुरपुर नामक गाँवमें बलवाइयोंसे मुक़ाबला करनेके लिए समरांगणमें जा डटे। इस समय उनके साथ ६००० पैदल, १२०० सिलेदार लोगोंकी घाटीवाली पलटन और बड़ी-बड़ी प्रचण्ड तोपें थीं। उन्होंने सेना का क्रम चतुरता और प्रबन्धके साथ लगाया। सेंधिया-सरकारका तोपख़ाना प्राचीन समयसे प्रसिद्ध था। जान पेरू, सबाई सिकंदर, जान बत्तीस, आदि फ़रासीसी युद्ध-कुशल गोलन्दाज सरदारोंने उनके तोपख़ानेकी जो व्यवस्था पहलेसे कर रक्खी थी वह उस समय तक क़ायम थी। सेंधिया-महाराजने बलवाइयोंको उड़ा देनेके लिए सबसे आगे यही

तोपखाना रक्खा। सहस्त्ररश्मि सूर्यनारायणका उदय होतेही उनके आरक्त बिम्ब को लजानेके लिए उन प्रचण्ड तोपोंसे हज़ारों लाल लाल गोलोंकी शत्रुओं पर बरसा होने लगी।

पेशवाकी सेनाके अग्रभाग पर यकायक मुरारकी ओरसे गोले आकर गिरने लगे। यह हाल देखकर आगेकी फ़ौजके मुख्य अफ़सरने बिगुल बजाकर सेनाको युद्धके लिए सचेत किया और एक जासूसके द्वारा पेशवाके तम्बूमें यह ख़बर भेजी कि सेंधियाकी फ़ौज लड़ाईके लिए सिर पर आ पहुँची, इसलिए अब आप अपनी फ़ौजको भी लड़ाईके लिए बहुत जल्दी हुक्म दें। राव साहब पेशवा और तात्याटोपेको इस बातका ध्यान भी न था कि सेंधिया महाराज हमारे ऊपर चढ़ाईके लिए आ रहे हैं। इसके प्रतिकूल इधरके प्रायः सभी राजनीतिज्ञोंको इस बातका विश्वास था कि ये गोलोंकी आवाज़ें नहीं हैं; तोपोंकी सलामी हो रही है; सेंधिया-महाराज अपने पूर्व-सम्बन्धको याद करके पेशवा साहबका प्रेम-पूर्वक स्वागत करनेके लिए आ रहे हैं! यही समझ कर पेशवाकी ओरसे सेनाको लड़ाईके लिए तैयार होनेकी आज्ञा नहीं दी गई! इतने हीमें सेंधियाके तोपख़ानेके गोलन्दाज़ोंने लगातार ख़ूब ज़ोरसे मार शुरू की। अब पेशवाकी सेनामें एकदम गड़बड़ मच गई; लोग इधर-उधर भागने लगे। यह देखते ही राव साहब पेशवा एकदम घबड़ाकर बड़े सोचमें पड़ गये; परंतु महारानी लक्ष्मीबाईने उस समय उनका पक्ष बड़ी दृढ़ताके साथ सँभाला।

यद्यपि महारानी रावसाहब पेशवाको उत्साहित करके ग्वालियरकी ओर लाई थीं तो भी उनकी इच्छानुसार कुल सेनाकी व्यवस्था उनके हाथोंसे नहीं हो पाई थी। महारानी स्वयं बड़ी शूरवीर और चतुर थीं; इसी कारण उनकी सलाह रावसाहब मानते थे; पर

रावसाहबमें आत्म-प्रतिष्ठाका एक विशेष अवगुण था। इस कारण महारानीके मनके अनुसार सब बातें वास्तवमें नहीं होती थीं। यही कारण था कि उस समय भी पेशवाकी सेनाका प्रबन्ध ढीला-ढाला था।

जब महारानीने देखा कि सेंधिया-सरकारकी तोपोंके मारे अकस्मात् पेशवाकी फ़ौज हैरान है तब उन्होंने बड़े आवेशके साथ अपने वही दो-तीन सौ घुड़सवारोंको लेकर, क्रोधसे तड़पती हुई नागिनकी तरह, सेंधियाके तोपखाने पर हमला किया। इधर तात्याटोपेने भी अपनी सेनाके भिन्न-भिन्न भाग करके उन्हें तोपोंकी मारसे बचाया। महारानी लक्ष्मीबाई अपने वीर और रणपटु सवारोंके साथ ज्योंही सेंधियाके तोपखाने पर टूट पड़ी त्योंहीं गोलन्दाज़ लोग तोपें छोड़कर भाग गये। सेंधियाकी ओरकी दूसरी सेनाएँ भी तात्याटोपे और उनकी सेनाको देखकर भाग गईं। केवल महाराज जयाजीराव शूरताके आवेशमें आकर अपनी घाटीवाली पलटनको आगे लाकर विरोधियोंसे युद्ध करने लगे। एक ओर रणांगणसे अच्छी तरह जमा हुआ एक तरुण राजकुमार और उसकी खासी हज़ार-बारह सौ सिलेदार पलटन और दूसरी ओर दुर्दैवपंकमें फँसी हुई एक अबला और थोड़ेसे उसके रणशूर सवारोंका अपूर्व सामना हुआ। जयाजी महाराजके अन्तःकरणमें अँगरेज़ी-सरकारके प्रति बड़ी आदर-बुद्धि और प्रेम था; अतएव उनकी क्रोधाग्नि खूब प्रज्वलित हो उठी थी; इससे उनकी वीरश्री अति सुन्दर रङ्ग खिल रहा थी। और इधर महारानी लक्ष्मीबाईके मृदु हृदयमें अँगरेज़ी सरकारके जुल्मी बर्तावके कारण भयंकर क्रोधाग्नि धधक उठी थीं; इस कारण उनके आवेशका विलक्षण प्रखर स्वरूप हो गया था। कुछ देर तक दोनों ओरसे खूब तलवार पर तलवार बजी। सेंधिया सरकारके भड़कीली पोशाकवाले सिलेदार सिपाही क्षण भरमें हैरान

हो गये; महारानीके कस पर चढ़े हुए जवाँमर्द सवार अपने शत्रुओं-को स्वाहा करने लगे ! यह देखकर सेंधिया-महाराज पीछेकी ओर मुड़े और अपनी प्राण-रक्षाके लिए दीवान दिनकरराव और दूसरे एक दो अपने विश्वासी सरदारोंको साथ लेकर धौलपुरके मार्गसे आगरेके क़िलेमें आकर उन्होंने अँगरेज़ोंकी शरण ली।

वास्तवमें सेंधिया-सरकारने उस समय अपनी राजभक्तिका बहुत अच्छा परिचय दिया और अपनी मित्रता पालन करनेके लिए उन्होंने अपने प्राणोंकी भी कुछ परवा न करके प्राचीन सम्बन्धियोंसे युद्ध किया। यह बात जिस प्रकार उनके लिए उस समय गौरवकी हुई उसी प्रकार झाँसीकी महारानी लक्ष्मीबाईने अपने पराक्रमसे स्वराज्य-स्थापन करनेकी अभिलाषासे जो कीर्ति सम्पादन की वह भी सदैव अटल रहेगी। यह कोई सामान्य बात नहीं है कि महाराज जयाजीराव सेंधियाको—जिनके शौर्यकी बड़े-बड़े यूरोपियन लोगोंने तारीफ़की है, जिनकी लड़ाईकी तैयारीको देखकर शत्रुकी छाती दहल उठती और जिनके रथी, महारथी शूर सरदारोंको देखकर विजयश्री स्वयं वश हो जाती—महारानीके समान एक अबलाने, किसी प्रकारकी विशेष सहायता न होने पर भी, केवल अपनी तलवारके ज़ोर पर, संग्रामसे भगा दिया ! एक संस्कृत कविके कथनानुसार इस नियमकी सत्यता अच्छी तरह सिद्ध होती है कि:—

'क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे'

अर्थात् 'महापुरुषोंकी कार्य-सिद्धि उनके सच्चे पराक्रम पर निर्भर है, न कि केवल साधनों पर।'

महाराज जयाजीराव सेंधियाके महारानी लक्ष्मीबाईसे पराजित होकर ग्वालियरसे आगरा भाग आने पर राजमहलमें बड़ा हाहाकार मचा ! सरकारकी सवारी हारकर आगरे चले जानेकी

खबर सुनते ही सब राज-स्त्रियाँ आत्म-संरक्षणके लिए नरवर गाँवमें चली गईं। वहाँ सेंधिया-सरकारके एक-दो विश्वास-पात्र सरदार और पुराने रिसालेके जो कुछ स्वामिभक्त लोग थे उन्होंने उनकी बड़ी रक्षा की।

इधर विद्रोही लोगोंने बड़े आनन्दसे शहरमें प्रवेश किया। ग्वालियर-दरबारके जो सरदार और राजनीतिज्ञ भीतरी तौरसे राव साहब पेशवा और तात्याटोपे आदिका अभीष्ट चिन्तन करते थे उनको इस विजयका हाल सुनकर बड़ा आनन्द हुआ; उन्होंने इन लोगोंका आगमन सुनकर अपनी आदर-बुद्धि प्रकट करनेमें कोई आगा-पीछा नहीं सोचा। ग्वालियरकी फ़ौजने अब रावसाहबको ही अपना मुख्य स्वामी समझकर उनके स्वागतके लिए तोपोंकी सलामी दी; और किसी प्रकारका प्रतिबन्ध न कर उन्हें लश्कर राजधानीमें आने दिया। पेशवा बड़े ठाठसे अपने लवाजमाके साथ सेंधियाके राजमहलमें पधारे और वहीं उन्होंने अपना डेरा डाला। महारानी लक्ष्मीबाई लश्करके पास नवलखा नामक बाग़में उतरीं। पेशवाके साथके और दूसरे सरदार तथा मित्र शहरके भिन्न-भिन्न महलोंमे उतरे। मतलब यह कि रावसाहब पेशवाको बिना विशेष परिश्रमके थोड़े ही समयमें सेंधिया-सरकारकी राजधानी मिल गई और वहाँ उनकी स्वतंत्रता-दर्शक विजय-पताका फहराने लगी।

शहर पर अधिकार होते ही तात्याटोपेने ग्वालियरके क़िलेकी तरफ़ कुछ सेना भेजी। क़िलेके अधिकारी तात्या साहबसे पहले हीसे मिले हुए थे, इसलिए क़िले पर अधिकारी करनेमें उन्हें कुछ प्रयास नहीं पड़ा। तात्याटोपेकी सेनाके पहुँचते ही क़िलेवालोंने दरवाज़े खोलकर सारा क़िला उनके स्वाधीन कर दिया। ग्वालियरके समान जंगी और पहाड़ी क़िला तथा अगणित युद्ध सामग्री पाकर तात्याको अत्यन्त हर्ष हुआ; उनको इस बातका गर्व भी हुआ कि

ऐसे अजेय क़िलेके अप्रतिम सामर्थ्यके आगे अब हमारी बराबरी कौन कर सकता है !

क़िला और शहर ले लेने पर विद्रोहियोंने ग्वालियरमें बड़ा उपद्रव मचाया। पहले तो उन्होंने रेज़िडेन्सी पर धावा करके उसे जला दिया और वहाँका सारा माल-असबाब लूट लिया। इसके बाद सेंधिया-सरकारके पुराने राजमहल और उनके अँगरेज-हितैषी सरदारोंके महलों पर उन्होंने धावा किया और उन्हें नष्ट करना आरम्भ किया। उन्होंने राजमहलका विध्वन्स करके दीवान दिन-करराव, सरदार बलवन्तराव और माहुरकर आदि प्रधान दरबारी लोगोंकी हवेलियाँ मिट्टीमें मिला दीं। इतना ही नहीं, किन्तु उन्होंने अपनी धन-तृष्णा तृप्त करनेके लिए शहर लूटना भी आरम्भ कर दिया। परन्तु सौभाग्यसे जब रावसाहब पेशवाने इस बातका सख़्त हुक्म दिया कि शहरवालोंको कोई न लूटे और न कोई उन्हें किसी प्रकारकी तकलीफ़ दे, तब कहीं जाकर यह लूट-मार बन्द हुई।

ग्वालियर विजय करके विद्रोहियोंने और ख़ासकर रावसाहब पेशवाने सोचा कि अब सेंधियाशाही गई और पेशवाई आई ! सब दरबादियोंको अनुकूल देखकर रावसाहबने ग्वालियरके सब सर-दारों और जागीरदारोंको इकट्ठा किया। फ़ौजके अफ़सर भी जमा हुए। सेंधिया-महाराजने जिन चार सरदारोंको बलवाई समझकर क़ैद कर रक्खा था उन्हें पेशवाने छुड़ा दिया और वस्त्र वग़ैरह प्रदान किये। इन सबकी सलाहसे आसपासके अनुकूल राजाओंको निमंत्रण-पत्र भेजे गये। इस प्रकार सब तैयारी करके पेशवाने ख़ुद अपनेको सिंहासनारूढ़ करनेका शुभ मुहूर्त्त निश्चय किया।

३ तारीख़को फूलबाग़में बड़ा जंगी दरबार हुआ। पेशवाके अनुकूल सब सरदार राजनीतिज्ञ, सिलेदार आदि अपने-अपने

योग्य स्थानोंमें सुशोभित हुए। तात्याटोपे और उनके नीचेके सब फ़ौजी सरदार अपनी-अपनी पोशाक पहनकर सभामें हाज़िर हुए। ख़ुद रावसाहब भी पेशवाई राजसी पोशाक पहनकर, मस्तकमें सिर-पेंच और कलँगी लगाकर, कानोंमें मोतियोंके चौकड़े और गलेमें हार पहनकर, पूर्ण वैभवके साथ चोबदार और बन्दीगणोंकी मंगल-ध्वनि सुनते हुए, दरबारमें पधारे। इसके बाद यथाविधि ताजीम और दरबारी लोगोंके मुजरे होकर पेशवा सिंहासनारूढ़ हुए। उन्होंने इस ख़ुशीमें अपने सरदारोंका अभिनन्दन किया और बहुमूल्य वस्त्रालंकार प्रदान कर उनका उचित सम्मान किया। रामराव गोविन्द नामक एक सज्जनको प्रधान मंत्रीके वस्त्र दिये और तात्याटोपेको सेनापति नियत कर रत्न-जटित तलवार दी। इसके बाद आठ प्रधान नियत करके उन्हें योग्यतानुसार अधिकार दिये। फ़ौजी लोगोंको २० लाख रुपया बाँटा गया! चारों ओर आनन्द-ही-आनन्द देख पड़ने लगा! राव साहबने सेंधिया-सरकारके अचानक मिले हुए धनका ख़ूब उपयोग किया। नित्य ब्राह्मण-भोजन होने लगे। सैकड़ों भिक्षुकोंको उत्तम-उत्तम भोजन मिलने लगा। पाकशालाओंमें हज़ारों आदमी ब्राह्मण-भोजन हीके लिए नौकर रक्खे गये। इस प्रकार राजमहलमें नित्य नये-नये उत्सव होने लगे। रावसाहब पेशवा, तात्याटोपे आदि सुखमें निमग्न होकर अपने कर्तव्यको बिलकुल भूल गये।

यह हाल देखकर महारानी लक्ष्मीबाईको बहुत खेद हुआ। उन्होंने रावसाहबसे बारंबार यही कहा कि आप इस समय ये सब सुख-साज बन्द कीजिए। यह समय उत्सव और आनन्द करनेका नहीं है; युद्धके लिए तैयार होनेका है। परंतु रावसाहब पेशवाने महारानीकी बातों पर कुछ ध्यान न दिया। इस पर महा-

रानीने ज़रा ज़ोर देकर कहा—"आप इस समय विजयके आनन्दमें मग्न हैं; पर यह बात अच्छी नहीं है। सेंधियाका सब ख़ज़ाना और सेना आपके आधीन है। इसका यदि अच्छा उपयोग नहीं किया जायगा तो आपकी सब आशाएं धूलमें मिल जायँगी। अँगरेज़ लोग बड़े चालाक और उद्योगी हैं। इस बातका कुछ ठीक नहीं है कि वे कब हम लोगों पर चढ़ाई कर दें। यदि आप ऐसे ही अचेत पड़े रहे तो हमारा नाश होनेमें तनिक भी देर न लगेगी। इससे आप अब यह ऐश-आराम छोड़िए और सेनाकी तैयारीमें लगिए। फ़ौजी लोगोंकी तनख्वाह बढ़ाकर उन्हें उत्साहित करना चाहिए। यह समय व्यर्थ नष्ट करनेका नहीं है। बड़ी कठिनतासे कार्य-साधनके लिए अनुकूल समय मिला है; अतएव अब आपको सावधानीके साथ युद्धकी तैयारीमें लग जाना चाहिए।" परंतु बे-समझीके कारण पेशवा के मन पर महारानीके इस उपदेशका कुछ असर न हुआ। वे बराबर उसी आनन्दमें मग्न रहे। ब्राह्मण-भोजन भी वैसा ही चलता रहा। तात्याटोपे भी अपनी बलवान् सेनाके घमंडमें मस्त रहे; उन्होंने तो यहाँ तक समझ लिया कि अब हमारी सेनाका मुक़ाबला अँगरेज़ लोग कर ही नहीं सकते!

इधर कालपी-युद्धके बाद सर ह्यू-रोज़ साहब विश्राम लेनेके लिए बम्बई जानेवाले थ। उन्होंने भिन्न-भिन्न अँगरेज़ वीरोंके अधीन भिन्न-भिन्न पलटनें करके चारों ओर विद्रोहियोंके नाश कर देनेका प्रबंध कर दिया था। कर्नल रॉबर्टसन सेना-सहित ग्वालियरकी ओर भेजे गये थे। १ जूनको रॉबर्टसन साहबकी ओरसे विद्रोहियोंके ग्वालियर पहुँचनेकी ख़बर सर ह्यू रोज़ साहबको मिली। इस ख़बरसे उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ; उन्होंने बहुतसी गोरी और काली फ़ौज, घुड़सवार और तोपख़ाना आदि मेजर

स्टुवर्टके अधीन करके रॉबर्टसन साहबकी मददके लिए भेज दिया। यह फ़ौज ग्वालियर पहुँचने भी न पाई थी कि ४ जूनको रोज़साहबको यह दुःखदायक समाचार मिला कि विरोधियोंने ग्वालियर जीत लिया और वहाँके महाराज आगरे भाग गये। यह सुनते ही रोज़ साहब बहुत चिन्तित हुए और घबड़ाये; उनकी सब आशाओं पर पानी फिर गया। झाँसी और कालपीके जीतनेसे उन्हें जो आनन्द हुआ था उसे वे क्षण भरके लिए भूल गये। कहाँ तो वे विश्राम लेनेके लिए बम्बई जा रहे थे और कहाँ उन्हें इस बड़ी भारी चिन्ताने आ घेरा। पर वे बड़े दृढ़ और साहसी वीर थे। वे धैर्यके साथ फिर विद्रोहियोंको पराजित करनेके लिए तैयार हुए। इसमें सन्देह नहीं कि इस समय यदि सर ह्यू रोज़के समान वीर, पराक्रमी और चतुर योद्धा विरोधियोंसे सामना करनेके लिए तैयार न होता तो ग्वालियरमें रावसाहब पेशवा-द्वारा पुनरुज्जीवित किया हुआ पेशवाईका वृक्ष ज़ोरदार हो जाता और उसकी जड़ें दक्षिण तक जम जातीं ! †

---

† इन दिनों बरसातके कारण ग्वालियर पर चढ़ाई करके विद्रोहियोंके नाश करनेमें अँग्रेज़ी फौज़के लिए बहुत सी अड़चनें थीं। इन अड़चनोंको दूर करके ग्वालियर पर चढ़ाई करना उनके लिए बहुत आवश्यक था। मैलिसनके समान अँगरेज़ी इतिहासकारने क़बूल किया है कि यदि उनको थोड़ा सा विलम्ब लग जाता तो तात्या टोपेके समान पाताल-यंत्री पुरुष अपनी अतर्क्य और अलौकिक बुद्धिसे न जाने क्या कर डालता। अँगरेज़-सरकारका भाग्य बहुत अच्छा था कि ऐसे विकट प्रसंगमें सरह्यू-रोज़के समान योद्धा उसे मिल गया। मैलिसन साहबने इस भयानक प्रसंगका वर्णन करते हुए लिखा है:—

" No one could foresee the extent of evil possible if

सर ह्यू रोज़ने बहुत जल्दी गवर्नर जनरल लार्ड केनिंगको तार-द्वारा इस बातकी सूचना दीकि मैं स्वयं ग्वालियर पर धावा करके वहाँ का क़िला और शहर अपने अधिकारमें कर लेनेके लिए तैयार हूँ। लार्ड केनिंगने रोज़ साहबका उत्साह देखकर ग्वालियर पर चढ़ाई करने की आज्ञा दी और उन्हींको इस युद्धका सेनापति नियत किया। सर ह्यू रोज़ने ज्यों ही फिर अपना कर्तव्य-पालन स्वीकार

Gwalior were not promptly wrested from rebel hands. Grant them delay and Tantia Topi, with the immense acquisition of political and military strength secured by the possession of Gwalior, and with all its resources in men, money and material at his disposal, would be able to form a new army on the fragments of that beaten at Kalpi, and to provoke a Mahratta rising throughout India. It might be possible for him, using the dexterity of which he was a master, to unfurl the Peishwa's banner in southern Mahratta countries." *Malleson's History of the Indian Mutiny Vol. V. p. 150.*

"यह बात कोई नहीं जानता था कि यदि ग्वालियर बलवाइयोंके हाथसे शीघ्र न छीन लिया जाता तो कितनी हानि होती। यदि कुछ भी देर हो जाती तो तात्याटोपे कालपीकी लड़ाईमें हारी हुई सेनाको एकत्र करके बहुत बड़ी फ़ौज तैयार कर लेता और सारे हिंदुस्तानमें मराठोंका बलवा खड़ा कर देता; क्योंकि ग्वालियरका क़िला उसके हाथमें आ जानेसे उसके पास राजकीय और फ़ौजी शक्ति बहुत बढ़ गई थी और उसके पास धन-जन तथा लड़ाईका दूसरा बहुतसा सामान इकट्ठा हो गया था। यह बात भी सम्भव है कि वह अत्यन्त चतुर होनेके कारण मराठे प्रान्तोंमें पेशवाई का झंडा खड़ा कर देता।"

किया त्योंही जनरल नेपियर, जो उनकी जगह पर आये थे, द्वितीय सेनापति बन गये और बड़े उत्साहके साथ उन्हें मदद देनेकी प्रतिज्ञा की। इससे मालूम होता है कि अँगरेज़ लोग राष्ट्र-कार्यके लिए आपसमें कितने प्रेमसे बर्ताव करते हैं।

पाँच तारीख़ को सर ह्यू रोज़ और ब्रिगेडियर जनरल नेपियरने अपनी-अपनी सेनाके कई भाग करके उसे भिन्न-भिन्न अफ़सरोंके सिपुर्द किया और ग्वालियर पर चढ़ाई करनेके लिए उपयुक्त मार्ग निश्चित किया। मेजर आर को उन्होंने हैदराबाद कंटीजंट फ़ौज देकर दक्षिणकी ओरके बलवाइयोंको दबानेके लिए ग्वालियर और सीपरीके बीच पनिहारके पास भेजा। ब्रिगेडियर स्मिथको राजपूताना फ़ील्ड फ़ोर्सकी नवीन सेनाका अफ़सर नियत करके ग्वालियरके पूर्व पाँच मील पर कोटेकी सरायकी ओर भेजा, कर्नल रिडेलके साथमें बहुतसा तोपख़ाना देकर उन्हें आगरा और ग्वालियरके रास्ते पर भेजा। स्वयं रोज़साहब और जनरल नेपियरने बहुतसी सेना लेकर कई ओरसे मुरारकी छावनी पर धावा करनेका विचार किया। ६ जूनको सर ह्यू रोज़ साहबने कालपीसे ग्वालियरकी ओर प्रस्थान किया। इस समय इनके साथ मध्य-भारतके पोलिटिकल एजंट सर रॉबर्ट हैमिल्टन और ग्वालियरके रेज़िडेंट मेकफ़र्सन भी थे। इन दोनोंसे रोज़ साहबको ग्वालियरका भीतरी हाल और मारकेकी जगहोंकी जानकारी अच्छी तरहसे हो गई; और समय-समयपर सलाह लेनेका भी अच्छा मौक़ा मिल गया। अँगरेज़ी सेना बड़े वेग से जा रही थी। ११ जूनको इन्दुरकी गाँवमें स्टुअर्ट साहबकी पहली ब्रिडेगसे उसकी भेंट हुई। दोनों सेनाएँ पहूज नदी पार करके उस पहाड़ी प्रदेशमें खूब तेज़ी और परिश्रम के साथ जा रही थीं। रास्ता बहुत बिकट होनेके कारण यद्यपि सेनाके लोगों की दुर्दशा हो गई थी तो भ

उन्होंने अपना साहस नहीं छोड़ा और सेनापति की आज्ञानुसार वे बराबर मार्ग तै करते गये। अँगरेजी सेना का यह उत्साह और साहस देखकर रोज़ साहब का मन और भी बढ़ गया।

१६ जूनको प्रातःकाल सरकारी सेना बहादुरपुर नामक गाँवमें, जहाँ सेंधिया-महाराजकी हार हुई थी, जा पहुंची; वहाँसे उसे ग्वालियरके प्राचीन, प्रचंड और पहाड़ी क़िलेका भीम रूप देखपड़ने लगा। रोज़ साहबने सूक्ष्म रीतिसे विद्रोयोंके बलाबलका निरीक्षण किया। वहाँ से उन्होंने विविध वृक्षोंसे घिरे हुए मुरारकी छावनी के उच्च प्रदेश को जब देखा तब उन्हें मालूम हुआ कि वह सारा प्रदेश विरोधियोंने ले लिया है और छावनी के अग्रभाग में घुड़सवार सेना का रिसाला, दाहनी ओर तोपख़ाना और बाईं ओर पैदल फ़ौज आदि रखकर ख़ूब घमासान तैयारी कर रक्खी है। यह हाल देखकर अँगरेज़ वीरों ने भी अपनी सेना के कई भाग करके तोपों के हथियारबन्द दृढ़ मोरचे तैयार किये। अँगरेज़ी फ़ौज के ठहरने के लिए अभी कोई अच्छा मुक़ाम न मिला था; इसलिए सर ह्यू-रोज़ साहब ने सोचा कि सब से पहले अपनी रणशूर ८६ वीं पलटन को आगे करके मुरारको छावनी पर हमला करना चाहिए।

इस समय मुरारकी छावनी में जो फ़ौजें थीं वे सब सेंधिया-सरकार की नामी फ़ौजों में से थीं। सेंधिया-सरकार की दूसरी फ़ौजें, तोपख़ाने और ख़ास रिसाले भी बलवाइयों के अधीन थे। परन्तु रावसाहब पेशवा और तात्याटोपे के अंधाधुन्ध कारबार के आगे इन युद्ध-सामग्रियों की ओर किसी का ध्यान ही न था। महारानी लक्ष्मीबाई ने कई बार पेशवासाहब को इनका ध्यान भी दिलाया; पर वहाँ कौन किसकी सुनता था!

ग्वालियरकी कंटींजंट फ़ौज, और अवध प्रान्त के रुहेल तथा पठान लोगोंकी सेनाएँ भी शहरके आसपास पड़ी थीं। परन्तु किसीका भी प्रबन्ध चतुरतासे नहीं किया गया था। इस कारण विरोधियोंकी ओर फ़ौज और युद्ध सामग्री अधिक होने पर भी देख-भालके बिना उनका होना न होना बराबर था।

अँगरेज़ी सेना लगभग मुरारके समीप आ पहुँची; परन्तु राव-साहब पेशवा और उनके सेनापति तात्याटोपेको इसकी बिलकुल ख़बर न हुई। ये सब विजय-महोत्सवके आनन्दमें मग्न थे। राव साहब पेशवाके पूर्वजोंने महाराष्ट्र राज्यकी पताका भारतमें अधि-कांश अपने वीर योद्धाओं और तलवारके ज़ोरसे फहराई थी; पर रावसाहबको उस समय इस बातका बिलकुल ध्यान न था। वे समझते थे कि इस बार दान-पुण्य और ब्राह्मण-भोजनके ही बल पर स्वराज्य स्थापित हो सकेगा। जब अँगरेज़ी सेनाने अच्छी तरह से अपना सब प्रबन्ध कर लिया तब कहीं पेशवासाहबको इस बात का ख़बर लगी। उन्होंने फिर तुरन्त ही तात्याटोपेको फौज़ तैयार करने के लिए आज्ञा दी और अपना दान-पुण्य और ब्राह्मण-भोजन का क्रम बराबर वैसा ही चलने दिया।

तात्याटोपे यद्यपि-विद्या में बहुत ही निपुण थे; परन्तु इस समय उनको भी रावसाहब के साथ ऐश-आराम की सूझी थी। शायद वे समझते थे कि अब पेशवाई का ज़माना फिर आ गया। यदि अँगरेज़ लोग हमारे ऊपर चढ़ाई करेंगे तो आसपास के सब राजा लोग हमारी मदद करेंगे। पर यह केवल उनका भ्रम-मात्र था। जब तात्यासाहब ने देखा कि इस समय कोई मदद देने-वाला नहीं है तब उन्होंने फौज़ी पोशाक पहनकर जगह-जगह मोर्चा-बन्दी करने का अपनी सेना को हुक्म दिया और स्वयं दौड़-धूपकर मुरार की छावनी की रक्षा का प्रयत्न करने लगे! परन्तु

उनका यह सब प्रयत्न बेकार हुआ; क्योंकि सर ह्यू-रोज़ ने अकस्मात् ज़ो उनपर हमला किया उससे बलवाइयों की फ़ौज एक दम घबड़ा गई। विद्रोहियों की इस सेना में अधिकांश वे ही लोग थे जो महाराज सेंधिया के विरोधी थे। इस सेना ने अँगरेज़ी सेना पर बड़ी बीरता से गोले बरसना शुरू किया। पर सर ह्यू-रोज़ने मारकेके सब स्थान पहले ही से रोक रक्खे थे; इसलिए विरोधियोंको लाचार होकर युद्धस्थल छोड़ देना पड़ा। बलवाइयों मेंसे कितने ही शूर-वीर लोगोंने इस समय भी अपना पराक्रम दिखलाया। हैदराबाद कंटींजंट फ़ौज लेकर ऐबट साहबने जब विद्रोहियों पर हमला किया यब ये शूर-वीर एकदम अँगरेज़ी फ़ौज़ पर टूट पड़े और ख़ूब दृढ़तासे साथ उन्होंने युद्ध किया। ७१वीं हाइलैंडर्स पलटनके बहुतसे अँगरेजोंको इन वीरोंने यमलोक पहुँचाया। इस युद्धमें लेफ्टिनेन्ट नीव को बड़ा नीचा देखना पड़ा और वे घायल हुए। अन्तमें बम्बईकी २५वीं नेटिव-इंफेंट्रीके अधिकारी ले० रोज़ने अपने पराक्रमसे विद्रोहियोंको हराया। बलवाइयोंकी ओर रणभीरु और धोखेबाज़ आदमी ही अधिक थे। इसी कारण इस ओरके शूर-वीर लोगोंकी वीरताका कोई उत्तम परिणाम नहीं निकला। सच्चे योद्धा अपना तेज दिखाते हुए धराशायी होते जा रहे थे। मुरारमें दो घंटे तक यह भयंकर युद्ध होता रहा; अन्तमें अँगरेज़ी सेनाकी जीत हुई। विद्रोही लोग मुरारकी छावनी छोड़कर भाग गये। अँगरेज़ोंने उसे अपने अधिकारमें कर लिया और ख़ूब आनन्दके साथ वहीं अपने डेरे डाल दिये†।

---

†बलवाइयोंकी ओरके सेना-धुरंधर सेंधिया-सरकारकी फ़ौजके भरोसे पर ख़ूब उछल रहे थे और उनको अपने पराभवका कुछ भी डर न था।

जब यह समाचार लश्करमें पहुँचा कि मुरारकी छावनी अँगरेज़ोंने जीत ली तब वहाँ बड़ी घबड़ाहट मची। रावसाहब पेशवा एकदम घबड़ा गये और बहुत जल्दी अपनी फ़ौज को उत्तेजना देनेके लिए बाहर निकले। बाँदाके नवाब भी अपना मिजाज़ सँभाल कर शहरके मोरचोंका बंदोबस्त करने लगे। तात्याटोपे पहले हीसे अपने कैंपमें जाकर सेनाका प्रबन्ध कर रहे थे। उन्होंने जगह-जगह तोपोंके मोर्चे लगा दिये; घुड़सवारोंके रिसाले और पैदल पलटनें यथास्थान विभाजित कर दीं; और बड़ी धूमधामसे वे लड़ाईकी तैयारी करने लगे। उन्होंने महारानी लक्ष्मीबाईसे भेंट करके पहलेकी तरह युद्धमें सहायता करनेके लिए बड़ी नम्रतासे विनती

परन्तु कहते हैं कि अँगरेज़ी सेनाकी ओरके बुद्धिमान अफ़सरोंने उनकी इस भ्रांतिको बड़ी खूबीके साथ दूर किया। सर रौबर्ट हैमिल्टन और मेजर मैक-फ़र्सन ये दोनों पोलिटिकल अफ़सर सर ह्यू-रोज़की सेनाके साथ ही थे। उन्होंने ग्वालियरकी सेनाका भीतरी हाल जानकर जयाजी महाराजको आगरेसे बुलवा लिया और माफ़ीका इश्तहार देकर यह प्रकट कर दिया कि सेंधिया-सरकारकी तरफसे हम लड़ते हैं! अर्थात् सेंधिया महाराजके अँगरेज़ोंकी ओर होनेके कारण बलवाइयोंसे मिले हुए सेंधिया-सरकारके फ़ौजी अफ़सरोंको अपने मालिकके विरुद्ध लड़ना पसन्द नहीं हुआ उनके मनमें तुरंत ही स्वामि-निष्ठाका मोह उत्पन्न हो गया और समरांगणमें आते ही उनको अर्जुनकी तरह 'अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयं'—उक्तिका ज्ञान होगया। इसी कारण फिर उन्होंने अपने स्वामीके विरुद्ध लड़ाई करनेका विचार छोड़ दिया और इसीलिए बलवाइयोंकी हार होनेमें कुछ देर नहीं लगी। यह बात विशेष ध्यानमें रखने योग्य है। इस स्वामि-निष्ठाके लिए सेंधिया-सरकारके इन सरदारोंकी कौन तारीफ़ न करेगा?

की; और बड़े अदबके साथ उन्होंने फ़ौजका बन्दोबस्त करनेकी सलाह ली।

महारानीने फ़ौजकी व्यवस्था करनेके लिए पहले ही बहुत अच्छी सलाह दी थी; पर पेशवा साहब उससमय पेशवाईकी पुनः स्थापना करनेके महोत्सवमें मग्न थे! उन्होंने कर्म-सिद्धिके दुर्लभ समयको ऐश्वर्योपभोगके सामने नाश कर दिया! रावसाहब पेशवाकी इस आत्म-नाशक कृतिसे महारानीको बहुत खेद हुआ। उनके सब मनोरथ एक प्रकारसे मुरझासे गये। परन्तु जब तात्या-टोपेने उदास मन और दीन वाणीसे महारानीसे प्रार्थना की तब उनका हृदय भर आया। उन्होंने तात्याटोपेसे कहा कि आज तक हज़ारों उपाय रचकर इतना जो परिश्रम किया गया उसका अब कोई फल निकलता हुआ नहीं देख पड़ता! ऐन मौक़े पर जो सलाह हमने दी वह पेशवाके दुराग्रह और विजय-रंगके कारण बेकार हो रही है! अँगरेज़ी सेना सिर पर आ गई है तो भी अपनी सेनाका अभी कोई प्रबन्ध ही नहीं किया गया है। ऐसी दशामें उनसे सामना करके हम लोगोंको यशकी आशा रखना व्यर्थ है। तथापि ऐसे समय धीरज छोड़ना भी अच्छा नहीं है। आप लोग अपनी फ़ौजें युद्धके लिए तैयार कीजिए और चारों ओर अपने चतुर सरदारों द्वारा बन्दोबस्त करके शत्रुओंको रोकिए। मैं अपना कर्तव्य पालन करनेके लिए तैयार हूँ, आप अपना कर्तव्य पालन कीजिए।

महारानीके ये उत्साह भरे वचन सुनते ही तात्याटोपेका तेज भड़क उठा और उन्होंने हर्ष-पूर्वक उनकी बातें स्वीकार कीं। इसके बाद वे महारानीको ग्वालियरकी पूर्व ओरकी रक्षाका भार सौंप कर स्वयं दूसरी फ़ौजोंका बंदोबस्त करने लगे। महारानी लक्ष्मीबाई ने इसे अपना अंतिम युद्ध समझकर अद्वितीय रणोत्साहसे बहुत

जल्दी अपनी फ़ौजकी जंगी तैयारी शुरू की। † वे अपनी सदैवकी फ़ौजी पोशाक धारण कर अपने उमदा और चतुर घोड़े पर सवार हुईं और अपनी प्राणप्रिय रत्नजटित तलवार म्यानसे निकाल

†इस विषयमें एक अँगरेज़लेखकने लिखा है—

"* * * * But little preparation was made for the defence of the fort; and it is probable that both Tope and the Ranee concurred in resolving to abide by the old Maharatha tactics, and avoid shutting themselves up within walls. Therefore they disposed their forces so as to observe and hold the roads leading upon the city from Icnoorkee Seepree, and the north; the necessary arrangements being effected mainly under the direction and personal supervison of the Ranee, who, clad in military attire, and attended by a picked and well-armed escort, was constantly in the saddle, ubiquitous and untiring."

Letter from Bombay Correspondent
Times, August 3rd, 1858.

"* * * * क़िलेकी रक्षाके लिए कुछ भी प्रबन्ध नहीं किया गया था। जान पड़ता है कि तात्याटोपे और रानीने मराठोंकी पुरानी चाल चलने और क़िलेमें अपनेको बन्द न कर लेने हीका निश्चय किया था। इसलिए उन्होंने अपनी सेनाका ऐसा प्रबन्ध किया था कि इन्दुरखी, सिपरी और उत्तरकी ओरसे शहरमें आनेकी सड़कें रोक ली थीं। युद्धका मुख्य और आवश्यक प्रबन्ध केवल महारानीकी आज्ञा और देख-भालसे किया गया था। महारानी सदा फ़ौजी पोशाक पहनकर और अपने साथ चुने हुए हथियारबन्द सवार लेकर, घोड़े पर सवार हो, सब जगह हाज़िर रहती थीं और बड़े परिश्रमके साथ प्रबन्ध किया करती थीं।

एक युद्ध-पटु योद्धाके समान अपनी फ़ौजकी क़वायद लेने ल
उनका उस समयका वह भव्य स्वरूप, वह गम्भीर स्वर और कट्टर स्वाभिमान देखकर उनके सैनिकोंके अन्तःकरण वीरश्रीसे भर गये; और शत्रुओं पर एकदम धावा करके उन्हें नष्ट कर देनेके लिए उन्हें आवेश चढ़ आया! उस समय महारानी लक्ष्मी-बाईके महालक्ष्मीके समान प्रखर जाज्वल्यमान स्वरूप और संग्राममें प्रतापाग्निकी धूमधाराके समान झलकनेवाली उनकी तलवारकी दिव्य चमकको देखकर किसका हृदय न थर्रा उठा होगा?

१४ जूनको ब्रिगेडियर स्मिथ अपनी सेनाके साथ आँतरी नामक स्थानमें आ पहुँचे। वहाँ मेजर आर से उनकी मुलाक़ात हुई। इन दोनों वीरोंने सर ह्यू-रोज़की आज्ञानुसार ग्वालियरसे पाँच मील कोटाकी सराय नामक गाँवमें अपनी सेनाएँ लाकर वहाँसे शहर पर हमला करनेका निश्चय किया। इन दोनों अँगरेज़-वीरोंने बड़ी बारीकीके साथ ग्वालियरकी सेना और उसके प्रबंधकी देख-भाल शुरू की। इधरके मोरचे महारानीके अधिकारमें थे; उन्होंने बड़ी दृढ़ताके साथ अपनी व्यूह-रचना की थी—पहाड़ी ऊँचे-नीचे प्रदेशमें बड़े बंदोबस्तके साथ अपनी सेनाका क्रम लगाया था। महारानी लक्ष्मीबाईने अपनी सब सेनाके आगे साहसी लोगोंका छबीना रख कर उनके पीछे थोड़े-थोड़े अंतरसे लाल रिसालेके घुड़सवार और पैदल पलटनें बड़ी ख़ूबीके साथ खड़ी की थीं। इसके अतिरिक्त उन्होंने सब मारकेकी जगह रोक ली थीं और एक ऊँचे स्थलमें तोपें भी ख़ूब लगा रक्खी थीं। इस कारण उनके इस व्यूहको पार करके जाना अँगरेज़ोंके लिए और भी दुःसाध्य हो गया था।

१७ तारीख़को ब्रिगेडियर स्मिथने लड़ाईका बिगुल बजाकर युद्ध प्रारम्भ किया। अँगरेज़ी-सेनाके आगे बढ़ते ही महारानीने अपने

गोलन्दाज़ोंको इशारा कर तोपोंकी मार शुरू कर दी। उनकी तोपों की मार शुरू होते ही अँगरेज़ी सेनाके छक्के छूट गये और वे लोग पीछे हटने लगे। यह देखकर महारानीके कट्टर रणशूर मुसलमान सवार एकदम आगे दौड़े और बड़ी बहादुरीके साथ युद्ध करने लगे। ब्रिगेडियर स्मिथने जब देखा कि हमारी सेना मारकी जगहमें पड़ गई है तब उन्होंने एक चाल यह खेली कि महारानीकी सेनाके अग्रभागके वीरोंको अपनी ओर भगाकर बीच मैदान खाली कर लिया। इसके बाद बड़ी चतुरतासे उन्होंने कई तरफ़ अपनी सेना भेजी और अपने घुड़सवारोंके द्वारा महारानीके मोरचे तोड़नेका प्रयत्न किया। अँगरेज़ घुड़सवार बड़े आवेशके साथ विरुद्ध दल पर हमला करनेके लिए निकले। इधर महारानीके छबीनाके वीर सवारोंसे उनका सामना हुआ; घनघोर युद्ध शुरू हुआ। दोनों दलोंने अपनी-अपनी युद्ध-कुशलताकी पराकाष्ठा दिखा दी। महारानीके वीर सवारोंने आवेशमें आकर बड़ा भयंकर युद्ध किया; वे अपनी-अपनी तलवारें म्यानसे खींच,कर प्राणोंका भय छोड़कर, विजयश्री पानेकी लालसासे, अँगरेज़ शत्रुओं पर एकदम टूट पड़े। झनाझन तलवारें बजने लगीं। अँगरेज़ वीर अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठे थे कि इतनेमें कर्नल रेन्स और कर्नक पेलीने ९५ वीं पलटनके बे-थके शूर और बम्बई की १० वीं नेटिव इन्फेंट्रीको आगे कर एकदम झोंका देते हुए विरोधियोंके पार्श्व भाग पर धावा कर दिया। इधरके वीरों पर चारों ओरसे मार पड़ने लगी; इसलिए उनको पीछे हटना पड़ा। अँगरेज़ोंकी विलक्षण युक्ति, कावेबाज़ी और अगणित सेनाके आगे थोड़ेसे सवारोंका पराक्रम कहाँ तक कामयाब हो सकता है ?

कर्नल रेन्स और ब्रिगेडियर स्मिथ अपने-अपने घुड़सवारोंको साथ लिये हुए शत्रुओंके दलको चीरकर आगे बढ़ जानेका विचार कर

रहे थे। इधर महारानी लक्ष्मीबाईने जब देखा कि हमारी सेना कुछ पीछे हटने लगी है तब वे घोड़े पर सवार होकर तलवार चमकाती हुई अपनी सेनाके अग्रभागकी ओर गईं और अपनी ओजस्विनी वाणीसे वीर सैनिकोंके अन्तःकरणमें उत्साह जागृत करने लगीं। महारानीकी स्वयंसिद्ध योग्यता, अटल निश्चय और तेजस्विता आदि गुणोंकी उनके सैनिकों पर ऐसी छाप बैठी कि वे खूब उत्साहित होकर, अपने प्राणोंको हथेली पर लिये, अँगरेज़ी सेनासे तुमुल युद्ध करनेको तैयार हो गये। महारानीकी ओर यद्यपि अच्छे योद्धाओंकी संख्या बहुत अधिक नहीं थी; परंतु जितने थे उनमें रणोत्साहकी वायुका संचार खूब हो गया था। मतलब यह कि महारानीके हाथमें जितना प्रबन्ध था वह बहुत अच्छा था। उधर रावसाहब पेशवा, तात्याटोपे तथा दूसरे बड़े-बड़े सरदार भी अपनी-अपनी फौजें तैयार किये शहरके दूसरे मोर्चों पर जमे हुए थे। उनकी फ़ौजोंमें विशेष करके सेंधिया-सरकारके लोगों हीकी अधिक भरती थी। इसलिए बाहरसे देखनेमें तो भारी तैयारी देख पड़ती थी; पर वास्तवमें उनकी सेनामें अब भी अच्छी व्यवस्था नहीं थी।

१७ तारीख़को ही अँगरेज़ सेनापति हरएक तरफ़से ग्वालियर पर चढ़ाई कर उसे जीतनेका प्रयत्न करने लगे। कोटेकी सरायके के पाससे ऊँची-नीची ज़मीनसे होकर जो रास्ता लश्कर तक गया है उसी रास्तेसे विरोधी दलको चीरते हुए, लश्कर पर हमला करनेके उद्देशसे, ब्रिगेडियर स्मिथने अपनी ज़ोरदार सेना आगे बढ़ाई। अँगरेज़ी सेनाको आगे बढ़ते देखकर महारानीने तुरंत ही अपनी फ़ौज को लड़नेके लिए आज्ञा दी। चारों ओरसे रण-भेरी बजने लगी, उसकी प्रचंड ध्वनिसे आकाश-मंडल गूँज उठा। महारानीके कट्टर सवार कराल कालके समान जोशमें आकर अपना अनुपम युद्ध-कर्त्तव्य दिखानेके लिए अपनी प्रिय स्वामिनीके साथ एकदम आगे

बढ़े और अँगरेज़ी सेनासे छाती भिड़ाकर घोरतर युद्ध करने लगे। महारानी लक्ष्मीबाईके मुख पर इस समय रण-शूरताकी अनुपम छटा छा रही थी। उनके नेत्र तेजसे देदीप्यमान हो रहे थे। शत्रुओं के प्रति उन्हें जो क्रोध चढ़ रहा था उससे वे सेनाके लोगोंमें अपूर्व उत्साह भर रही थीं। सारे दिन वे युद्धमें भिड़ी रहीं और बहुतसे अँगरेज़ वीरोंको उन्होंने यमपुरीका मार्ग दिखलाया। ब्रिगेडियर स्मिथने भी बड़ी वीरतासे युद्ध किया। दोनों दलोंके बहुतसे वीर कट-कट कर गिरने लगे। चारों ओर रण गर्जना छा गई। आकाश-मंडल धूलसे भर गया। उस समयके प्रचंड युद्धका वर्णन करना कठिन है। महारानीने वीरताके साथ अपनी सेनाको उत्साहित कर अच्छे-अच्छे अँगरेज़ वीरोंको युद्धमें बड़ी बुरी तरह छकाया। इस युद्धमें बड़े-बड़े युद्ध-कुशल अँगरेज़ वीर हताश हो गये जब उन्होंने देखा कि महारानी का यह दुर्भेद्य सैन्य-व्यूह तोड़ना असम्भव है तब वे पीछे लौट पड़े और लाचार होकर उस दिन उन्हें युद्ध बन्द कर देना पड़ा!

१८ तारीखका दिन था। महारानीकी रण-कुशलता देखकर वीर अँगरेज़ सेनापतियोंको जो निराशा हो गई थी उससे उन्हें और भी अधिक स्फूर्ति चढ़ आई; वे अपनी सेनाकी क़वायद लेकर दूसरी ओरसे ग्वालियर पर चढ़ाई करनेके लिए आगे बढ़े। इतनेमें कर्नल रेन्स साहबका दल भी उन्हें मिल गया। दोनों वीरोंने अपनी-अपनी पैदल सेनाको बड़ी चतुरताके साथ बीहड़में छिपा रखनेकी युक्ति निकालकर आठवीं हुर्जास पलटनके घुड़सवारों द्वारा विरुद्ध दल पर कई ओरसे हमला करनेका विचार किया। उन्होंने कर्नल हिक्स और कप्तान हेनेजके समान बड़े-बड़े धीर-वीरोंकी मदद लेकर अपने शत्रुओं पर असह्य मार मारनेकी तजवीज़ की। सारे

अँगरेज़ सेनाधिकारी युद्धके लिए तैयार होकर विजय-लालसासे शत्रुओंको स्वाहा करनेके लिए निकल पड़े।

इधर महारानी भी अपने दलके साथ लड़ाईके लिए तैयार हुईं। उन्होंने अपनी वही फ़ौजी पोशाक धारण की। सिरमें ज़री-दार चन्देरीका साफ़ा बाँधा, शरीरमें तमामी अँगरखा पहना, पावोंमें बढ़िया पाजामा और गलेमें सुंदर मोतियोंका हार पहना, इसके बाद साक्षात् रण-लक्ष्मीके जैसी जानपड़नेवाली वह रण-चंडिका एक सुंदर घोड़े पर आरूढ़ हुईं और अपनी कराल करवाल निकालकर उसके दिव्य तेजसे अपनी फ़ौजका प्रबंध करने लगीं। चारों ओरसे अँगरेज़ी-सेनाने बड़े वेगके साथ ग्वालियर पर धावा किया। सर ह्यू-रोज़ने एक तरफ़से विद्रोहियों पर हमला किया और दूसरी ओरसे ब्रिगेडियर स्मिथ ने, अपनी प्रचंड सेनाके साथ, महारानी की सेना पर, कई दिशाओंसे, वार किया। महारानी बड़े जोशके साथ अपने वीर सवारों-सहित अँगरेज़ी सेनासे लड़ने लगीं। वे अपने कट्टर जवाँमर्द घुड़सवार और परम विश्वासपात्र दो चार सेवक साथ लेकर अँगरेज़ी सेना पर एकदम टूटपड़ीं। और इधर क्रोधसे मत्त हुए अँगरेज़ी हुज़ार्स सेनाके सवार भी आगे बढ़े। दोनों ओरके योद्धाओंका सामना होतेही घनघोर युद्ध शुरू हुआ। पहले पहल बन्दूकोंकी मार शुरू हुई; क्रोधसे भरे हुये दोनों सेनाओंके लड़वैयोंने हद करदी। उस समय महारानी अपनी सेनामें बिजलीके समान चमकती थीं। उनकी धीरता और शूरता परमावधिको पहुँच चुकी थी। उनके सवारोंने उत्साहके साथ जी-जान होमकर अपनी बहादुरीकी पराकाष्ठा करदी। उनके साथ लड़नेवाली अँगरेज़ी सेनाके सरदार भी बड़े बहादुर थे; उन्होंने भी अपना ख़ूब पराक्रम दिखाया। वे महारानीकी सेना पर बड़े वेगसे टूट पड़ते और अपने वारसे बहुतसे लोगोंको यमपुरी भेज देते थे।

परंतु इससे ❊ महारानी लक्ष्मीबाईका साहस भंग न होकर उलटा और भी दृढ़ हो जाता था । वे स्वाभिमानके तेज से उत्तेजित होकर और अपने घुड़सवारोंको उत्तेजित करके शत्रुओं पर टूट पड़ती थीं । वे अपना क्षात्र तेज दिखलाकर अपने गौरवको बनाये रखती थीं ।

❊ रानी साहबके इस अन्तिम युद्धका वर्णन करते हुए D. L. G नामक एक लेखकने इस प्रकार लिखा है:—

" She was surprised in her camp near the city of Kotaki Sarai in Gwalior. When this took placo, Ranee Lakshmibai and her sister, who also was a lady of remarkable valour and beauty, were seated together in the camp in male attire and drinking sherbet. Immediately the beautiful Ranee went over the field and made a firm stand against tha array of Sir Hugh Rose. She led her troops to repeated and fierce attacks, and though her ranks wee pierced through and gradually thinner and thinner, the Ranee was seen in the foremost rank, rallying her shattered troops and performing prodigies of valour. But all was of no avail. The camel corps, pushed up by Sir Hugh Rose in person broke her last line. Still the dauntless and heroic Ranee held her own."—

The National Guardian, December 14, 1891.

इस लेखसे यह भी जान पड़ता है कि महारानीके साथ उनकी बहन भी थी । परंतु यह भूल है । उनके साथमें सुन्दर और काशी नामकी दो दासियाँ थीं । वे दोनों बहुत खूबसूरत थीं । महारानी की तरह उन दोनोंने भी मर्दानी पोशाक पहनी थी । उपर्युक्त लेखकने शायद इन्हींमेंसे किसीको महारानीकी बहन मान लिया हो ।

सरदार इस मार की ओर बिलकुल ध्यान न देकर भी अपने चार हाथ दिखलाते ही गये। पर उनकी सेनाका प्रबन्ध किसी कामका न था; वे युद्ध-विद्या जानते ही न थे। अँगरेज़ोंकी इस भारी मारके सम्मुख वे टिक न सकते थे; फिर ऐसी फ़ौजके बल पर कोई अपनी वीरता कैसे दिखा सकता है? रावसाहब पेशवाके भाग्यमें स्व-राज्य-सुख नहीं बदा था; फिर ग्वालियरमें उन्हें विजय कैसे मिल सकती थी? अँगरेज़ लोग युद्ध-कलामें विशेष निपुण थे; उनकी युक्ति, पालिसी और कर्त्तव्य निश्चित होनेके कारण सदैव उन्हींकी जीत होती थी। पराक्रमसे जो यश नहीं मिलता था उसे वे युक्तिसे प्राप्त करते थे। 'उपायेन हि तत्कुर्याद्यन्न शक्यं पराक्रमैः' का नियम पद-पद पर उनमें देख पड़ता था, फिर उनके इस गुणका आनंददायक परिणाम क्यों न हो! अर्थात् इस बातके कहनेकी कोई ज़रूरत नहीं कि युद्ध-विद्याकी निपुणताके आगे केवल वीरता काम नहीं आ सकती। चतुरता और कपटके आगे केवल तलवारका प्रभाव क्या पड़ सकता है? और दैवकी अनुकूलताके आगे दुर्दैवकी क्या चल सकती है? अस्तु।

जब महारानीने देखा कि अपनी मूर्ख फ़ौज ऐसे संकटके समय में धीरज छोड़कर भाग गई तब दुःखसे उनका अन्तःकरण भर आया; और उन्हें पूरा विश्वास होगया कि इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। अँगरेज़ी सेना चारों ओर प्रचंड आगकी तरह फैली हुई थी और उनके गोलोंकी भयंकर मारसे बलवाइयोंकी तमाम सेना दुर्दशाग्रस्त हो रही थी। इन घबराये हुए विद्रोहियोंका नाश करनेके लिए अँगरेज़ी सेना एकदम उन पर टूट पड़ती थी। चारों ओर घोर और भयंकर चिल्लाहट मची हुई थी। ऐसी बुरी दशामें महारानी किसी तूफ़ानमें फँसे हुए कर्णधारकी तरह अपने बचे हुए दस-बीस सवारोंके साथ अँगरेज़ी सेनाके पंजेसे छूटनेका

प्रयत्न कर रही थीं; परन्तु दुर्दैवके कारण उनका कुछ बश न चला !

तारीख १९ जून सन् १८५८ (जेष्ठ शुक्ल ७ सम्वत् १९१४) के दिन सहस्त्ररश्मि सूर्यनारायण दोनों सेनाओंके वीरोंका अतुल पराक्रम देखकर उनको अपना मंडल (सूर्य-मंडल) भेदकर स्वर्ग-द्वारा जीतनेकी आज्ञा देनेके लिए खूब प्रज्वलित हो बैठे थे। दोनों ओरके योद्धा प्राण-पणसे अपने पराक्रमकी हद दिखा रहे थे। ब्रिगेडियर स्मिथ, कप्तान हेनेज आदि योद्धा आठवीं हुर्जास पलटनके शूर सिपाहियोंके साथ महारानीके मुक़ाबलेमें घोर युद्ध कर रहे थे। महारानी लक्ष्मीबाईकी पोशाक मर्दानी होने और चारों ओर आकाश धूल-धूसरित हो जानेके कारण अँगरेज़ वीरोंने उनको प्रत्यक्ष पहचान नहीं पाया। इस समय अँगरेज़ी सेना चारों ओर दल-बादलकी तरह छाई हुई थी—उसने अब यह प्रतिज्ञा की कि जो सामने पड़े उसको जीतकर फूलबाग़ पर अधिकार करना चाहिए। महारानी अपनी दो-तीन दासियाँ, एक-दो विश्वास-पात्र सरदार और कुछ सवारोंके साथ अँगरेज़ी दलके घेरेसे निकलकर दूसरी अपनी प्रबलसेनाओंमें मिल जानेका प्रयत्न करनेलगीं। परन्तु अँगरेज़ी पलटनकेकट्टर हुर्जास सिपाहियोंने महारानीका उद्देश सिद्ध न होने दिया महारानीने बहुत प्रयत्न किया; पर अँगरेज़ वीरोंसे चारों ओर घिर जानेसे कारण शत्रुओंके घेरेसे उनका इस प्रकार निकलना असम्भव हो गया! दोनों दलोंके लोग प्राणोंका भरोसा छोड़कर लड़ने लगे और तलवारोंकी चमकसे युद्धस्थल प्रकाशमान होने लगा। अँगरेज़ वीर अंधाधुंध गोलियाँ बरसा रहे थे और कितने ही अँगरेज़ तलवारोंसे विद्रोहियोंको स्वाहा कर रहे थे। महारानी लक्ष्मीबाईने इस घोर संग्राममें अपनी शूरताका अद्वितीय प्रभाव दिखाया; उन्होंने भी बड़ी चतुरताके साथ अपनी तलवारके

हाथ शत्रुओं पर फेरे। अँगरेज़ वीर खपाखप कटकर गिरने लगे। अनेक अँगरेज़ वीरोंको उन्होंने अपनी तलवारसे कंठ-स्नान कराया; और मौक़ा पाते ही अपनी तलवार फेरती हुई एकदम शत्रु-सेनाके घेरेसे बड़ी द्रुतगतिसे अपना घोड़ा बाहर निकाल लिया। इशारा पाते ही घोड़ेने चौकड़ी भरी। इतने हीमें ब्रिगेडियर स्मिथने हुर्जास सेनाके कुछ चुने हुए सवारोंको उनके पीछे चीते की तरह छोड़ा। वे गोलियाँ चलाते हुए महारानीके पीछे दौड़े। तीव्र गतिसे चलनेवाली तेजस्विनी महारानीकी दुर्दैवके कारण उन सवारोंके आगे कुछ न चली। पीछेसे महारानीके एक गोली लगी; जिससे वे कुछ शिथिलसी हो गईं। इतने हीमेंवे सवार महारानीके पास पहुँच गये। दोनों दलोंके थोड़ेसे वीरोंमें एक छोटासा युद्ध फिर छिड़ गया।

तीन दिन तक बराबर तुमुल युद्ध करनेके कारण महारानी कुछ थक गई थीं; परन्तु उनका स्वाभिमान और रणोत्साह कुछ विलक्षण ही था। इसी कारण उन्होंने अँगरेज़ोंकी इतनी विस्तृत सेनाको भी कुछ नहीं समझा। सर ह्यू-रोज़ आदि अँगरेज़ वीरोंको महारानीकी युद्ध-निपुणता अच्छी तरहसे मालूम हो गई थी। इतना ही नहीं, किन्तु झाँसीके प्रबल युद्धसे सब अँगरेज़ वीरोंको उनके पराक्रमका बड़ा भारी कुतूहल हो रहा था; इसलिए ऐसी अलौकिक शौर्यशालिनी स्त्रीको पकड़ लेनेकी इच्छा अनेक अँगरेज़ोंको थी। परंतु बलवाइयोंके इतने बड़े सैन्य-सागरमें इस 'दिव्य स्त्रीरत्न' का पता लगना दुर्घट था। महारानीका अन्तःकरण स्वाभिमानसे पूर्ण था; उन्होंने निश्चय कर लिया था कि मृत्युहोने पर भी परधर्मियोंके स्पर्शसे अपने पवित्र शरीरको कलुषित न होने दूँगी। उन्होंने अपने साथकी पुरुष-वेशधारिणी सुन्दर और काशी नामकीदो दासियों और रामचंद्रराव तथा रघुनाथसिंह आदि स्वामि-भक्त सेवकोंसे कह रक्खा था कि 'युद्धमें यदि मेरा पतन हो जाय तो मेरी देहका ऐसा

प्रबंध करना कि जिसमें म्लेच्छों का उसे स्पर्श भी न हो; मेरी यह इच्छा जब तुम पूर्ण करोगे तभी तुम सच्चे स्वामि-भक्त होंगे!' महारानीके ये शब्द उपर्युक्त दास-दासियोंके हृदय-पट पर खचित हो गये थे; इसी कारण वे सब युद्धमें सदैव उनके साथ छायाकी भाँति रहते थे। धन्य है ऐसे स्वामि-भक्त सेवकोंको जो अपनी स्वामिनीके लिये प्राणोंको हथेली पर रक्खे हुए सदा उनके साथ रहे। इस समय भी ये सब स्वामि-भक्त दास-दासी अपनी प्रिय स्वामिनीके पीछे-पीछे अपने प्राण निछावर किये हुए घोड़ों पर दौड़ रहे थे। बालक दामोदरराव, रामचन्द्रराव देशमुखके घोड़े पर थे।

हुर्जास सवार महारानीके इस छोटेसे समूह पर भयानक मार कर रहे थे। महारानी पर जो सवार वार कर रहा था उसे उन्होंने बड़ी चतुरतासे अपनी तलवार का स्वाद चखाया और एकदम अपना घोड़ा आगे बढ़ाया। इतने हीमें उनकी दासी सुन्दर करुणस्वरसे एकाएक चिल्ला उठी—"बाई साहब! मरी! मरी मरी!!"। इन शब्दोंके कानोंमें पड़ते ही महारानीको इतना दुःख हुआ कि मानों उनके हृदय पर किसीने शस्त्र-प्रहार कर दिया हो। वे एकदम झोंकके साथ पीछे लौट पड़ीं और अपनी प्रिय दासीको यमपुरी पहुँचानेवाले उस अँगरेजको उन्होंने उसी दम यमपुरीका मार्ग दिखा दिया; और एकदम लौटकर वे फिर आगेकी ओर भागने लगीं। देखते-ही-देखते उनका घोड़ा पीछेके हुर्जास सवारोंकी मारसे साफ निकल जाता; पर आगे एक छोटा सा नाला पड़ जानेके कारण वह अड़ियल घोड़ा वहीं अड़ गया! महारानीका खास घोड़ा दो दिन युद्धमें श्रम करने और गोली लगकर बीमार होजाने के कारण इस समय उनके पास नहीं था, यह घोड़ा सेंधिया-सरकारके अस्तबलका था। वह देखकर महारानी

रानी बड़ी घबराई । उन्हें मालूम हो गया कि अब रक्षा असम्भव है । उन्होंने घोड़ेको आगे बढ़ाने के लिए बहुत यत्न किये, पर कुछ फल न हुआ । जान पड़ता है कि उनका दुर्दैव जल-प्रवाहके रूपमें उन्हें रोक रहा था । महाभारतके युद्धमें महारथी कर्णके रथ-चक्र जिस प्रकार पृथ्वीमें जम गये थे और टलते नहीं थे, वही हाल इस समय महारानी लक्ष्मीबाईका हुआ ।

बारम्बार घोड़ेको पुचकारकर उन्होंने नाला पार करनेके लिए प्रयत्न किया; पर वह हठी घोड़ा विन्ध्याचलकी भाँति अचल बन रहा ! महारानीके सब सवार शत्रु-दलकी असह्य मार से मारे जा चुके थे; इस समय उनके साथ चार-पाँच स्वामि-निष्ठ सेवकोंको छोड़कर और कोई न था । ऐसे कठिन अवसरमें हुर्जास पलटनके पिछले सवार महारानीके इस छोटेसे समूह पर एकदम आ टूटे । ऐसा तो हो नहीं सकता कि उन अँगरेज़ सवारोंने महारानीको पहचानकर उन पर हमला किया हो; क्योंकि वे उन्हें जीती ही पकड़ना चाहते थे । परंतु जान पड़ता है कि उन्होंने यह जानकर उन पर तलवार चलाई होगी कि यह बलवाइयोंकी तरफ़का कोई वीर योद्धा है । कोई-कोई कहते हैं कि उन हुर्जास वीरोंको महारानीका चमकदार मोतियोंका बहुमूल्य कंठा देखकर लोभ आ गया था; इसलिये उन्होंने उन पर हमला किया † ! अस्तु, किसी इच्छासे भी हो; पर उन कट्टर भीम-

† एक ग्रन्थकार लिखता है:—

"Flying at length from the field where she had lost what she valued more than Jhansi or the memory of her family, i. e. her revenge, an English dragoon, it is said cut her down, taking her for a sowar and tempted by the necklace over her jacket."

—*Dalhousie's Administration of British India. P. 153,*

कर्मी सवारोंने बड़े बुरे समयमें उस अबला पर वार किया। इस समय महारानीकी जो दशा हुई उसे शब्दोंसे व्यक्त करना असम्भव है।

वे कट्टर सवार बिजलीकी तरह महारानी पर टूट पड़े। महारानीने इसकी कुछ भी परवा न करके बड़ी चालाकीके साथ अपनी तलवार चारों ओर फेरी और आवेशके साथ अपनी रक्षाके लिए प्रयत्न किया। महारानीका धीरज मेरुकी तरह अटल था; इसी कारण झंझावातकी तरह उन अँगरेज़ सवारोंका हमला पहले पहल बेकार हुआ!

"न पादपोन्मूलनशक्तिरहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य"

कविकुल-गुरुकी इस उक्तिके अनुसार जिस तरह हवामें बड़े-बड़े वृक्षोंके उखाड़ डालनेकी शक्ति चाहे भले ही हो; पर पर्वत पर उसका कुछ वश नहीं चलता, उसी प्रकार अँगरेज़ सवार प्रबल ज़रूर थे; परंतु महारानीके तेज़के आगे उनकी प्रबलता उस समय व्यर्थ गई! अँगरेज़ सवारोंके टूट पड़ते ही महारानीने अपने अतुल खड्ग-प्रतापसे उनके संहार करनेका प्रयत्न किया और अपने अलौकिक रण-चातुर्यसे उन्हें चकित कर दिया! परंतु वे जोशीले सवार भी बड़े बहादुर थे, इस कारण महारानीकी मारसे बच गये। परंतु इस पुरुष-वेशधारी प्रबल स्त्री-योद्धाका अपार धैर्य देखकर उन्हें

"बदला लेनेका मौक़ा, जिसे वे झाँसी या अपने घरानेकी कीर्तिसे भी महत्त्वका समझती थीं, हाथसे छूट जाने पर जब वे रणभूमिसे भाग रही थीं तब, कहते हैं कि एक अँगरेज़ सवारने मोतियोंके कंठेके लालचसे उन्हें मार डाला।

और भी अधिक जोश चढ़ आया और उन्होने बडी तेज़ीसे अपनी तलवारका ज़ोरदार हाथ महारानीके सिर पर चलाया। इस वारको रोकनेके लिए महारानी लक्ष्मीबाईने बडी चपलतासे अपनी तलवार आगे चमकाई और उसवारको बचाया। उस समय बिजलीके समान दिव्य ज्योतिकी छटा छा गई। इधर महारानी अपने कुछ सेवकोंके साथ अकेली और उधर जगी हुर्जास कट्टर सवार थे। दोनो ओरसे झनाझन तलवारें बजी। महारानीने इस समय भी कई योद्धाओको घायल किया। उन्होंने अपने पराक्रमकी हद कर दी। उस समय एक बहादुर सवारने महारानीके तलवारकी कुछ परवा न कर मौका पाकर शीघ्रताके साथ पीछेकी ओरसे उनके मस्तक पर वार किया। जालमे फँसे हुए सिहके बच्चे पर मस्त हाथी जैसे दन्त प्रहार कर उसे घायल कर देता है वही हाल महारानी पर किये हुए इस वारका हुआ। इस प्रखर वारसे महारानीके सिरका सारा दाहिना भाग विच्छिन्न हो गया और उनका एक नेत्र बाहर निकल आया। इतने हीमे एक सवारने महारानीकी छातीमे किर्च भोक दी। इस प्रकार महारानीके शरीर पर कई बड़े-बड़े घाव हो गये और उनकी दशा बहुत खराब हो गई†। ऐसी दशामे क्या कोई वीर

---

† 'Among the fugitives in the rebel ranks was the resolute woman, who alike in council and in the field, was the soul of the conspirators Clad in the attire of a man and mounted on horse-back, the Ranee of Jhansi might have been seen animating her troops throughout the day When inch by inch the British troops pressed through the defile, and when reaching its summit Smith ordered the Hussars to charge, the Ranee of Jhansi boldly fronted the British horsemen When her comrades failed her, her

शत्रुसे पूरा बदला लेनेके लिए समर्थ हो सकता है ? कदापि नहीं ! इतना होने पर भी अपनी अलौकिक अन्तिम युद्ध-कुशलता प्रकट कर महारानी ने अपना बध करने की इच्छा रखनेवाले उस शूर अँगरेज योद्धा को उसी समय उसके कर्म का भयानक दंड दे दिया;

---

horse, in spite of her efforts, carried her along with the others. With them she might have escaped, but that her horse, crossing the canal near the cantonment stumbled and fell. A Hussar close upon her track, ignorant of her sex and her rank, cut her down. She fell to rise no more. That night her devoted followers determined that the English should not boast that they had captured her even dead, burned the body."

—*History of the Indian Mutiny*.

" बलवाइयोंकी सेनासे जो लोग भाग गये थे उनमें एक अत्यन्त धैर्यशील स्त्री थी। वह युद्ध करने और सलाह देनेमें बलवाइयोंकी मुख्य आत्मा थी। मर्दानी पोशाक पहने, घोड़े पर सवार हुई, झाँसीकी रानी अपनी सेना को उत्साहित करती हुई देख पड़ती थी। जब अँगरेज़ी सेना ज़ोरसे एक एक इंच आगे बढ़ रही थी और जब स्मिथ साहबने अपने हुर्जास सवारोंको फ़ायर करनेकी आज्ञा दी तब झाँसीकी रानीने बड़ी बहादुरी और हिम्मतके साथ उनका सामना किया। जब रानीके साथी साथ छोड़कर भाग गये तब उनका घोड़ा उनकी इच्छाके विरुद्ध उन्हें ले गया। उन लोगोंके साथ भागकर रानी भी बच सकती थी; परन्तु उनका घोड़ा कन्टून्मेन्टके पास नाला पार करते हुए ठोकर खाकर गिर पड़ा। ठीक उसी समय एक अँगरेज़ घुड़सवारने, जो रानीका पीछा करते हुए चला आ रहा था, महारानी को मार डाला। साथियोंने उनका शरीर उसी रातको अग्नि में भस्म कर

उन्होंने अपनी रक्त प्यासी तलवार से उसे यमराज की वेदी पर बलि चढ़ा दिया और अपना क्षत्रिय धर्म-पूर्ण रीति से सार्थक किया ! धन्य है वह शूरता और धन्य है वह साहस ! †

महारानी लक्ष्मीबाईने इस प्रकार अपना पराक्रम दिखलाया; परन्तु उनके शरीर में जो घाव हो गये थे उनसे उनकी शक्ति एक दम नष्ट हो गई और उन्हें मालूम हो गया कि अब उनका अन्त-

---

दिया, जिससे अँगरेज़ लोग इस बातका घमंड न करने पावें कि उन्होंने झाँसीकी रानीके मृत शरीर ही को छू लिया !"

† मि० मैकफ़र्सन लिखते हैं:—

"She was seated, drinking sherbet, 400 of the 5th Irregulars near her, when the alarm was given that the Hussars approached, forty or fifty of them came up, and the rebeles fled save about fifteen. The Ranee's horse refused to leap a canal, when she received a shot in the side, and then a sabre cut on the head, but rode off. She soon after fell dead, and was burnt in a garden close by."

—*Memorials of Service in India. P. 325.*

"झाँसीकी रानी अपने डेरेमें बैठे शरबत पी रही थीं। उनके साथ चार सौ सिपाही भी थे। उस समय यह सूचना दी गई कि अँगरेज़ सवार निकट आ पहुँचे। विद्रोही वहाँसे भागने लगे। महारानीका घोड़ा नाला पार न कर सका। उसी समय उनके शरीरमें एक गोली लगी और सिरमें तलवारका घाव भी लगा। परन्तु वे वैसीही चली गईं। अन्तमें वे घोड़े परसे गिरकर मर गईं और उनका शरीर समीप हीके एक बाग़में भस्म कर दिया गया।

काल नज़दीक आ गया।† जब उन्होंने देखा कि अब यदि हम यहाँ से शीघ्र निकल न चलेंगी तो युद्धस्थल हीमें हमारा देहपात हो जायगा और म्लेच्छ लोग इसका स्पर्श करेंगे। तब तुरन्त

---

† महारानीकी मृत्युका हाल उत्तर हिन्दुस्तानके लोग कई तरहसे बतलाते हैं। पर उन्हें काल्पनिक दंत-कथाओंके सिवा अधिक महत्व नहीं दिया जा सकता। कुछ लोग कहते हैं कि महारानीने जब देखा कि अपना अन्त नहीं होता तब वे घासके किसी ढेरमें कूद पड़ीं और सुतलीके तोड़ेसे उसे जलाकर उसीमें मर गईं। कुछ लोग कहते हैं कि वे लड़ाईमें मरीं। कोई कहते हैं कि जब उन्होंने अपने मारनेवाले शत्रुका बदला लेकर उसे मारा तब इसी गड़बड़में उनका भी अन्त हुआ! सारांश यह कि इस विषयमें अनेक लोग अनेक तरहकी आख्यायिकाएँ बतलाते हैं। परन्तु इन बातोंका कोई प्रमाण नहीं। अनेक प्रमाणोंसे तो यही बात सिद्ध होती है कि जख़्मी होने पर उनके सेवकोंने बड़ी होशियारीके साथ उनकी आज्ञानुसार सब प्रबन्ध किया। कोई यह भी कहते हैं कि उनके मरने पर सब प्रबन्ध राव साहब पेशवाने किया; पर यह बात तो बिलकुल विश्वास-योग्य नहीं है; क्योंकि उस समय रावसाहब पेशवा उनके पास ही न थे। खुद दामोदर-राव अपने अनुभवसे और रामचन्द्ररावके बतलाने पर जो कुछ बतलाते हैं वही सबसे अधिक विश्वसनीय है। अब एक यह बड़ा प्रश्न पैदा होता है कि उस गड़बड़ और वैसी आपत्तिके समय महारानीके प्रबन्ध करनेका यह मौक़ा उन लोगोंको कैसे मिला? पर इसके समाधान के लिए बहुतसी बातोंका आधार मिलता है। पहले तो महारानीकी फ़ौजी और मर्दानी पोशाक होनेके कारण अँगरेज़ लोगोंको उनका पता ही नहीं चला। इस कारण इच्छा रखने पर भी वे महारानीको पकड़ नहीं सके। महारानीने अन्तमें जब दो-तीन सिपाहियोंको मारा तब शायद बाक़ी सवार डरकर पीछे लौट गये। जान पड़ता है कि इसी बीचमें महारानी और रामचन्द्र-

ही उन्होंने अपने परम विश्वास-पात्र सरदार रामचन्द्रराव देशमुख को इशारा किया। रामचन्द्रराव बड़े स्वामिभक्त थे। महा-

राव से बातचीत हुई और यह प्रबन्ध हुआ। एक अँगरेज़ी ग्रन्थकारने मृत्युका हाल लिखते हुए इनको फ्रान्स देशकी जान ऑफ़ आर्क नामक शूर स्त्री की उपमा दी है; उसने तो यहाँ तक लिखा है कि जख़्मी होनेके बाद महारानीने अपने लोगोंको जवाहर आदि बाँटे है! यह ग्रन्थकार लिखता है:—

" This Indian Joan of Arc was dressed in a red jacket and trousers and white turban. She wore a Scindia's celebrated pearl necklace which she had taken from his treasury. As she lay mortally wounded in her tent, she ordered those ornaments to be distributed among her troops. The whole rebel army mourned her loss."

—*Clyde and Strathnairn.*

"महारानीके जख़्मी होनेका खबर अँगरेज़ोंको बिलकुल नहीं मिली। इस कारण महारानीकी अन्त्येष्टिक्रिया उनके सेवकोंने खूब प्रबन्धके साथ की"। इस बातका एक और भी सबूत एक अँगरेज़ी ग्रन्थसे मिलता है। मि० मार्टिन लिखते हैं:—

" No English eye marked her fall. The Hussars, unconsicous of the advantage they had gained, and scarcely able to sit on their saddles from heat and fatigue were, for the moment incapable of further exertions, and retired, supported by a timely reinforcement. Then, it is said, the remnant of the faithful body-guard (many of whom had perished at Jhansi) gathered around the lifeless forms of the Ranee and her sister. who dressed in male attire,

रानी की ऐसी बुरी दशा देखकर उनका हृदय भर आया, वे रुद्ध-कंठ होकर आँसू बहाने लगे। भयकर जख्मोके कारण महा-रानीको बहुत विकल देखकर वे उन्हे संग्राम-भूमिके पास ही एक पर्णकुटी मे ले आये। यह कुटी गगादास बाबा की थी वहाँ जाते ही महारानीको बहुत प्यास लगी। उनको गंगाजल पान कराया गया। इस समय उनका शरीर रक्तसे बिलकुल लाल हो गया था, घावोकी वेदना बहुत हो रही थी, पर तो भी उनके मुख पर एक प्रकारकी अलौकिक वीरश्री खेल रही थी।

---

and riding at the head of their squadrons, had fallen together, killed either by part of a shell, or as is more probable by balls from the revolvers with which the Hussars were armed A funeral pyre was raised and the remains of the two young and beautiful women were burnt, according to the custom of the Hindus"

—*British India P 489*

"किसी अँगरेज़ने उन्हें मरते नहीं देखा। अँगरेज़ घुडसवार यह बात न जानते थे कि वे किसका पीछा कर रहे हैं। वे थकावट और कडी धूपके कारण घोड़े पर बहुत देर तक बैठ भी न सकते थे। इसलिए वे अधिक परिश्रम न करके लौट गये। उस समय रानीके विश्वास-पात्र सेवकोंने उनके और उनकी बहनके मृत शरीरको चिता जलाकर भस्म कर दिया। उनकी बहनभी मर्दानी पोशाक पहनकर उनके साथ लड रही थी, और उन्हींके साथ गोली लगनेसे मर गई।"

परन्तु इसमें दो गलतियाँ है। पहले जो कहा गया है कि महारानीके साथ उनकी बहन थी, यह बात गलत है। वह वास्तवमें उनकी बहन न

महारानीने अपने प्राण-प्रिय पुत्र दामोदरराव की ओर वात्सल्य-भावसे देखकर अपने नेत्र शीतल किये और अन्त में उनको जगत्पालक ईश्वरको सौंपकर स्वयं परलोक का मार्ग स्वीकार किया! जेष्ठ शुक्ल ७ संवत् १९१४ को ग्वालियर के पास समरांगण के बीच में हिन्दुस्तानकी अद्वितीय शौर्य-गुण-मंडित दिव्य स्त्री-रत्न झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई इस लोकको त्याग कर अक्षय सुख पाने के लिए स्वर्गलोक पधार गईं!!

थी। दूसरे इसमें लिखा है कि महारानी गोली लग कर मरी है—सो भी ठीक नहीं है। क्योंकि उपर्युक्त हाल बलवेके समय अर्थात् १८५८ के साल में प्रकट हुई बातोंके आधार पर लिखा गया है। इसलिए बहुत सम्भव है कि यह समझ गलत हो। महारानी बन्दूककी गोलीसे नहीं मरीं; किन्तु घोड़ेके धोखा दे देनेसे घायल हुई हैं। इस बातके बहुतसे सुबूत पाये गये हैं। इसके सिवाय उपर्युक्त वर्णन लिखनेवाले ग्रन्थकार हीने महारानी की मृत्युके समय हाज़िर रहनेवाले एक आदमीके कथनानुसार यह टिप्पणी की है:—

"When the Hussars surprised the camp, the ladies were seated together, drinking sherbet. They mounted and fled. But the horse of the Ranee refused to leap a canal, and she received a shot in the side and sabre-cut on the head; but she still rode on till she fell dead from her saddle, and was surrounded and burnt."

"जिस समय अँगरेज़ घड़सवारोंने डेरे पर हमला किया उस समय उसमें कुछ स्त्रियाँ बैठी हुई शरबत पी रही थी। वे घोड़े पर बैठकर भाग गईं। रानीका घोड़ा नाला पार न कर सका, तब उनके शरीरमें एक गोली और सिर पर तलवारका घाव लगा। तो भी वे भागती चली गईं। अन्तमें

महारानीका देहांत होनेके बाद रामचन्द्रराव देशमुखने अपनी स्वामिनीके आज्ञानुसार अपने कर्त्तव्यका अच्छी तरह पालन किया। उन्होंने बड़ी शीघ्रता और चतुरताके साथ पासके एक घासके गंजसे घास लेकर चिता तैयार की और उस पर महारानीका प्राण-रहित पवित्र देह रखकर अग्नि-संस्कार कर दिया! क्षण भरहीमें अग्निकी

घोड़ेसे गिर कर मर गईं। उनके साथियोंने उनके शरीरका दहन किया।"

इसमें गोली लगकर मरना आदि लिखा है; परन्तु इस बातमें सन्देह है। कुछ भी हो, किसी प्रकारसे भी वे मरी हों; पर उनके मरनेकी खबर बहुत समय तक अँगरेज़ोंको नहीं मिली। इस बातका एक और भी सुबूत सिल्वेस्टर साहबके लिखनेसे मिलता है। उन्होंने महारानीकी मृत्युका हाल लिखते हुए कहा है:—

"Memorable too for another reason is this affair: the gallant Queen of Jhansi fell from a carbine wound, and was carried to the rear, where she expired and was burnt according to the custom of Hindoos. Thus the brave woman cemented with her blood the cause she espoused. It is as well it was so, and that, she did not survive to share the ignominious fate of Tantia Topee. The fact of her death was not known to us for some days, as she was attired as a cavalry soldier. Even the report was received with doubt until Sir Robert Hamilton established it irrefutably."—*The Campaign in Central India P. 183.*

"यह प्रसंग और भी एक कारणसे स्मरण करने योग्य है। झाँसीकी रणशूर रानी कटारके घावसे गिर पड़ीं। उनके साथी उनको उठाकर ले गये। प्राण छूट जाने पर हिन्दू-धर्मके अनुसार उन्होंने उनके मृत शरीरको

ज्वाला-प्रदीप्त हुई और उसने महारानी लक्ष्मीबाईके सुकुमार शरीर खाक कर दिया! इस प्रकार उस अलौकिक पराक्रमी राज-स्त्रीने अपने क्षत्रिय-कुलके गौरवकी अच्छी तरह रक्षा करके अपना कृत-संकल्प पूरा किया!

दहन कर दिया। इस प्रकार इस शूर स्त्रीने मृत्यु-पर्यन्त अपने पक्षकी सेवा की। यह बहुत अच्छा हुआ कि उनकी मृत्यु हो गई और तात्याटोपेके समान दुर्दशा और अपकीर्त्ति करानेके लिए वे इस संसारमें नहीं रहीं। उनकी मृत्युका समाचार हमें कुछ दिनों तक मालूम ही न हुआ।"

इन सब प्रमाणोंसे इतना तो ज़रूर सिद्ध होता है कि महारानीके कहे अनुसार उनके स्वामि-भक्त सेवकोंने अपना कर्तव्य पूरा-पूरा पालन किया। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि उन्होंने अपनी स्वामिनीके पवित्र देहका म्लेच्छोंसे स्पर्श नहीं होने दिया और उनका अन्त्य-संस्कार विधि-पूर्वक किया।
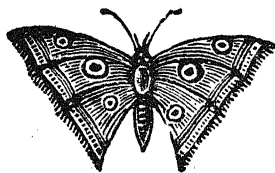
आठवाँ अध्याय
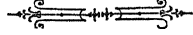
उपसंहार ।

महारानी लक्ष्मीबाईकी मृत्यु हो जानेके बाद ही रावसाहब पेशवा आदि विद्रोहियोंके बुरे दिन शुरू हो गये। महारानीकी मृत्यु का समाचार सुनकर रावसाहब पेशवा और तात्याटोपेको बहुत दुःख हुआ, वे बहुत घबराये और उन्हें मालूम हुआ कि आज उनका दहिना हाथ नष्ट हो गया। महारानीके समान तेजस्वी और पराक्रमी रत्नका दुष्ट कालके द्वारा हरण देखकर उन दोनों राजसी पुरुषोंके रणोत्साह पर कालिमा लग गई; उनकी तीक्ष्ण बुद्धि मंद पड़ गई और भागनेके सिवाय अब उन्हें दूसरा और कोई उपाय नहीं सूझ पड़ा! सच्चे सहायकके न रहने पर ऐसी दशा हो जाना कोई अचरजकी बात नहीं। रावसाहब पेशवा और तात्याटोपे अँगरेज़ी सेना के पराक्रम और अपनी असावधान सेनाके धोखेसे हताश हो गये थे और इधर सेंधिया सरकारके फ़ौजी सरदार जो बलवाइयोंमें आ मिले थे, वे ऐन मौक़े पर स्वामि-भक्ति दिखानेके लिए तैयार हो गये थे। इस कारण सर ह्यू-रोज़ आदि अँगरेज़ सेनापतियोंको ग्वालियरके जीतनेमें बहुत समय नहीं लगा! महारानीके समान युद्ध-कुशल वीरांगनाका समरांगणमें पतन होते ही बलवाइयोंकी सारी सेनामें उदासी छा गई। अँगरेज़ोंकी भयंकर मारके सामने उनके टिकावकी अब कोई आशा न रही, सब सेना इधर-उधर भागने लगी! यह देखकर अँगरेज़ सेनापतियोंको और भी आवेश चढ़ा। उन्होंने लश्कर पर बड़े वेगसे

हमला किया ! सर ह्यू-रोज़ने प्रण कर लिया था कि 'सूर्य अस्त होनेके पहले ही सेंधिया-सरकारकी राजधानी जीत लूँगा"। इसी प्रतिज्ञाके अनुसार उन्होंने सायंकाल तक बाक़ी बचे हुए बलवाइ-योंसे खब युद्ध करके लश्कर पर विजय प्राप्त करली और विद्रोहि-योंके क्षणिक यशको नष्ट कर उन्हें भगा दिया।

१६ तारीखको सर ह्यू-रोज़, सर रॉबर्ट हेमिल्टन और मेजर मैकफ़र्सन आदि विजयी योद्धाओंने सेंधिया-सरकारकी राजधानी लश्करमें प्रवेश किया और अपने परम विश्वास-पात्र मित्र महाराज जयाजीराव सेंधिया को गद्दीपर बैठाने का विजयोत्साहके साथ खूब समारम्भ किया। ग्वालियरके विजयका हाल सुनकर लार्ड केनिंगने बहुत हर्ष प्रकट किया। उन्होंने महाराज जयाजी-रावको राज्यारूढ़ करनेके लिए प्रसन्नताके साथ आज्ञा दे दी। लार्डसाहब ने चारों ओर अपने तेजस्वी राज-सूर्यका प्रकाश व्यक्त करने और धन्यवाद पानेके लिए तमाम हिन्दुतानमें इस आनन्द-समाचारके तार दौड़ाये। इतना ही नहीं किन्तु उन्होंने कलकत्तेसे एक ऐसा हुक्मनामा निकाला कि हिन्दुस्तान-के प्रत्येक शहरमें सेंधिया-सरकारका सम्मान करनेके लिए तोपोंकी सलामी दी जाय। सेंधिया-सरकार की राजधानी लश्करमें खूब रोशनी हुई, सैकड़ों भोज दिये गये और अनेक जलसे और दरबार हुए। श्रीमान् जयाजीरावने सर ह्यू-रोज़ आदि सेनाधिकारियोंको अपने फूलबाग़वाले महलमें जंगी भोज दिया और उनका बड़ा सम्मान किया।

रावसाहब पेशवा और तात्याटोपे आदि विद्रोहियोंने कुछ दिनों तक तो अँगरेज़ी सेनाको बहुत तंग किया। परन्तु अन्तमें जिस भाँति तैल-रहित दीपक निमिष मात्रके लिए प्रज्वलित होकर बुझ जाता है उसी भाँति उनके सब प्रयत्नोंका अंत हो गया! ग्वा-

लियरसे भागनेके बाद रावसाहब पेशवा, तात्याटोपे और बाँदा के नवाबके साथ जनरल नेपियरने जावरा, अलीपुरमें जो युद्ध किया उसमें उन्होंने बलवाइयोंके इन तीन अगुओंको बहुत हैरान किया। तबसे ये लोग इधर-उधर भागते ही रहे; इन्हें एक दिन भी सुख नहीं मिला। इनमेंसे बाँदाके नवाब अँगरेज़ी सरकारकी शरणमें आ गये और अभय पाकर उन्होंने अपने प्राणोंकी रक्षा की! परन्तु रावसाहब तात्याटोपे† ने बहुत दिनों तक अँगरेज़ी फ़ौजकी चपलता परखनेके लिए अथवा यह कहिए कि अपनी भागनेकी अद्भुत चतुरता संसारमें प्रसिद्ध करनेके लिए अँगरेज़ों की ओरके जनरल नेपियर, रॉबर्टस्, मिचाल, ब्रिगेडियर पार्क, समरसेट, बोम्स होनर, मीड, बेचर, और सदरलैंड आदि अनेक सेनानायकोंको वर्ष डेढ़ वर्ष तक बड़ा हैरान कर उनसे "तोबा-तोबा" बुलवा लेनेमें किसी प्रकारकी कसर नहीं की! उन्होंने सारे हिन्दुस्तानमें एक प्रकारकी गड़बड़ मचा दी; अनेक राजोंको भय-चकित कर डाला; बड़े-बड़े अभिमानी सेनापतियोंको ख़ूब नाच नचाया; सिंहके समान पीछा करनेवाले चपल वीरोंको नज़रबन्द कर दिया; क्षण-क्षणमें प्रकट और गुप्त होनेवाले पिशाचकी तरह लीला रचकर बड़े-बड़े योद्धाओंको लाचार कर दिया; और कुछ दिन तक अपने अघटित और विचित्र कृत्योंसे सम्पूर्ण

---

† रसेल नामक 'लंडन-टाइम्स' के सुप्रसिद्ध सम्वाददाताने तात्याटोपेके विषयमें ता० ४ दिसम्बर सन् १८५८ को जो कुछ लिखा है उसके पढ़नेसे सिद्ध होता है कि उस अलौकिक पुरुषके अद्भुत कृत्योंसे विदेशी लोग तक चकित हो गये थे। रसेल साहबने तात्याटोपेके बारेमें जो सुन्दर वर्णन किया है वह १७ जनवरी १८५८ के "लंडन-टाइम्स" में छपा है; वह वर्णन अलभ्य और महत्वका है, इसलिए उसे हम यहाँ पर देते हैं:—

संसारको नकू करके छोड़ा; परन्तु अन्तमें उन दोनोंकी बड़ी शोचनीय दशा हुई! ग्वालियरमें स्वराज्यकी पुनःस्थापना करनेवाले रावसाहब पेशवाने जब देखा कि अब उनका कोई सहायक नहीं रह गया तब वे संयासी-वेश धारणकर पंजाबके वनोंमें अपनी दुर्दैवकी अतर्क्य लीलाका चमत्कार देखते हुए आयु व्यतीत करने लगे। परंतु सन् १८६२ में पकड़कर वे कानपुर लाये गये और ता० ३० अगस्तको ब्रह्मावर्त (बिठूर) में उन्हें फाँसी दे दी गई! उनके सेनापति तात्याटोपेको अपने यशस्वी प्रभुका यह दुःखकारक अन्त देखने या सुननेका मौक़ा नहीं आया; क्योंकि अपने स्वामीकी मृत्युके पहले ही ७ अप्रैल १८५८ को राजपूतानाके एक

"Our very remarkable friend, Tantia Topee, is too troublesome and clever an enemy to be admired. Since last June he has kept Central India in a fervor. He has sacked stations, plundered treasuries, emptied arsenals, collected armies, lost them; taken guns from native princes, lost them; taken more, lost them! Then his motions have been like forked lightening; for weeks he has marched thirty and forty miles a day. He has crossed the Narbada to and fro; he has marched between our columns, behind them and before them. Ariel was not more subtle aided by the best stage mechanism. Up mountains, over rivers, through ravines and valleys, amid swamps on he goes, backwards and forwards, and side-ways and zigzag ways now falling upon a post-cart, and carrying off the Bombay mails, now looting a village, headed and burned, yet evasive as Proteus."

जंगलमें वे पकड़ लिये गये थे। मेजर मीड नामक एक अँगरेज़के अफ़सरने राजा मानसिंह नामक तात्याटोपेके एक मित्रको कुछ लोभ देकर उसके द्वारा उन्हें सोते हुए पकड़ लिया था और उसी महीने-की १८ तारीख़को सीपरीमें उन्हें फाँसी दे दी गई थी! इस अलौ-किक पुरुषने मरते समय बड़ी शान्तिके साथ केवल इतना ही कहा कि "मैंने जो कुछ किया वह सब अपने स्वामी पेशवाकी आज्ञासे किया है, उसमें बुरा कुछ भी नहीं किया। अब मुझे शीघ्र ही परलोक पहुँचा दीजिए!"

सन् १८५७ में अनेक राजनीतिक कारणोंसे हिन्दुस्तानमें अरा-जकताके जो भयंकर बादल उठे थे वे उस समयके अँगरेज़-वीरों और राजनीतिज्ञोंके पराक्रम और चतुराईसे बहुत जल्दी नष्ट हो

"हमारे सुप्रसिद्ध मित्र तात्याटोपे एक ऐसे शत्रु हैं कि जिनकी चतु-रता और कष्ट देने की अद्भुत शक्ति की प्रशंसा हम नहीं कर सकते। आपने गत जून महीनेसे मध्यभारतकी अत्यन्त भयानक दशा बना रक्खी है। आपने बड़े-बड़े शहर, ख़ज़ाने, बारूदख़ाने लूटे हैं, बहुत बड़ी सेना एकत्र की है और सब कुछ खो बैठे हैं। उन्होंने भयानक युद्ध किया और वे हार गये। हिन्दुस्तानी राजकुमारोंसे तोपें और बन्दूकें लीं और उन्हें खो दिया! उनकी चाल बिजलीके समान चपल है। वे एक दिन ३०।४० मीलकी दौड़ लगाते हैं। वे कई बार नर्मदा नदीके पार हुए हैं। हमारी सेनाके बीचसे, आगे और पीछेसे, वे कई बार आये-गये हैं। एरिएल (शेक्सपियरके टेम्पेस्ट नामक नाटकमें पिशाच-रूपी एक पात्र) की चपलता भी इनके सामने कोई चीज़ नहीं। पहाड़ोंके ऊपर, नदियोंके पार, घाटियों और खोहोंके भीतर वे बे-धड़क चले जाते हैं; कभी आगे बढ़ते हैं; कभी इस ओर; कभी उस ओर; कभी बम्बई जानेवाली डाक गाड़ीको लूट लेते; कभी गाँव का गाँव लूटकर और जलाकर उजाड़ देते; तो भी पीछा करनेपर कभी पकड़े नहीं जाते।"

गये। लार्ड केनिंगके समान चतुर राजनीतिज्ञ और सर ह्यू-रोज़के समान वीर पराक्रमी पुरुषोंने उस समय अँगरेज़ी राज-सत्ताकी बड़ी बुद्धिमानी और युक्तिके साथ रक्षा की। उस समय अँगरेज़ोंने अपना स्वदेशाभिमान और अपनी अलौकिक चतुरता खूब दिखलाई। यह उनके लिए गौरवकी बात है और दूसरोंके लिए उनके ये गुण अनुकरणीय हैं। सबसे अधिक राजनीतिक महत्त्वकी बात जो उस समय अँगरेज़ी-सरकारने की, वह हिंदुस्तानकी प्रजामें परस्पर प्रेम-बन्धन है।

१ नवम्बर सन् १८५८ ई० को महारानी विक्टोरियाकी आज्ञासे लार्ड केनिंगने जो घोषणा-पत्र जारी किया, उसीको हिन्दुस्तानमें ब्रिटिश-सरकारकी कृपाका पूर्ण प्रसाद समझना चाहिए। इस घोषणा-पत्रमें महारानीने अनेक वचन दिये हैं। उन वचनोंसे यह ज़रूर मालूम होता है कि महारानी विक्टोरिया हिन्दुस्तानको कितना चाहती थीं। वैसे भयंकर समयमें इस घोषणा-पत्रने बहुत काम किया। उस समय ब्रिटिश-सरकारके विरुद्ध जो प्रजाके मन बिगड़ रहे थे वे इस घोषणा-पत्रके प्रकाशित होने पर शान्त हो गये और अँगरेजी-राज्य पर लोगोंका विश्वास दृढ़ हो गया।

इस घोषणा-पत्रके बाद लार्ड केनिंग साहबने खुद कानपुर, आगरा, मेरठ, दिल्ली, लखनऊ, अम्बाला और जबलपुर आदि शहरोंमें जा-जाकर बड़े-बड़े दरबार किये और लार्ड डलहौसी साहबकी राजनीतिसे डरे हुए सब राजा-महाराजोंको अभय दिया। ऐसे संकटके समयमें जिन्होंने सरकारको मदद दी थी उन सबको लार्ड केनिंग साहबने मनसे धन्यवाद दिया और चारों ओर शान्ति स्थापित करके प्रजाके मनमें ब्रिटिश-सरकारका प्रेम उत्पन्न किया।

सन् १८५७ के बलवेका एक और परिणाम हुआ। वह यह कि सरकारको देशी राजोंकी ईमानदारी और ब्रिटिश-सत्ता-विषयक

प्रेमका अच्छा अनुभव हो गया—सरकारको इस बातका पूरा विश्वास हो गया कि संकटके समयमें वे उसकी कैसी सहायता करते हैं। इससे सरकारने इन संस्थानिकोंको बड़ी प्रसन्नताके साथ दत्तक लेनेका पूर्ण अधिकार देनेका विचार किया। सब लोग यह अच्छी तरह समझ गये कि निज़ाम, सेंधिया, हुलकर और पंजाबके सिक्ख राजोंकी मददके कारण ही इस भयंकर प्रलय का ज़ोर अधिक नहीं बढ़ा। इंग्लैंडके मौंट स्टुअर्ट एल्फ़िंस्टनके समान अनुभवी और चतुर राजनीतिज्ञने दृढ़ताके साथ क़बूल किया है कि "यदि सेंधिया, निज़ाम और सिक्ख सरदारोंकी रियासतें अँगरेजी राज्यमें मिला ली गई होतीं तो ब्रिटिश-राज-सत्ताको कहीं ठिकाना न था" * इस प्रकार जब यह सिद्ध हो गया कि इस देशकी रियासतें क़ायम रखकर प्रजाको सन्तुष्ट रखना ही अँगरेज़ी राजके दृढ़ रखनेका एक मात्र उपाय है तब अँगरेज़ी-सरकारने बड़ी उदारतासे हिंदुस्तानके सब संस्थानिकों को दत्तक लेनेकी आज्ञा दे दी †। इससे उन सबको यह जानकर

---

* एल्फिन्स्टन साहबने २२ दिसम्बर सन् १८५७ को सर एडवर्ड कोल-ब्रुकको एक पत्र लिखा है। उसमें उन्होंने साफ़तौरसे लिखा है:—

"I think the ardour for the consolidation of territory, concentration of authority, and uniformity of administration, which was lately so powerful, must have been a good deal damped by recent events. Where should we have been now if Scindia, the Nizam, and the Sikh Chiefs had been annexed ?"

Asiatic Journal Vol. XVIII P. 334.

† लार्ड केनिंगने अपने दत्तक-सम्बन्धी ठहरावमें स्पष्ट लिखा है कि "अँगरेज़ी राज्यसे ईमानदारी और विश्वासके साथ बर्ताव करनेवाले देशी

बड़ा हर्ष हुआ कि अब हमारे प्राचीन घराने क़ायम रहेंगे। सेंधिया सरकारके दरबारमें जब यह ख़बर पहुँची कि रियासतोंको दत्तक लेनेका हुकुम हो गया तब वहाँ प्रत्यक्ष पुत्र-जन्मका सा आनन्द मनाया गया। रीवाँके महाराजको जब दत्तक लेनेकी आज्ञा दी गई तब उन्होंने स्वयं लार्ड केनिंगके सामने कहा कि "हमारा क्षत्रिय-कुल आज ११०० वर्षोंसे सर्व-प्रसिद्ध हो रहा है। उसे नष्ट करनेके लिए

राजाओंकी रियासतें यदि क़ायम रक्खी जायगी तो उनके द्वारा अपना बचाव होना अधिक सम्भव है। इतना ही नहीं, किन्तु जिस समय हिन्दुस्तान पर कोई शक्ति चढ़ाई करेगी तब इन रियासतोंसे बहुत सहायता मिलेगी। इस लिए इन देशी राजों और उनके कुटुम्बोंसे उदारता और सम्मानके साथ बर्ताव करना चाहिए। और उन्हें इस बातकी शंका भी न आने देना चाहिए कि उनकी स्वतंत्रता सदैव क़ायम न रहेगी"। लार्ड केनिंग कहते हैं:—

"The safety of our rule is increased, not diminished, by the maintenance of Native Chiefs well affected towards us. Should the day come when India, shall be threatened by an external enemy, or when the interest of England elsewhere may require that her Eastern Empire shall incur more than ordinary risk, one of our best mainstays will be found in these Native States. But to make them so we must treat their Chiefs and influential families with consideration and generosity, teaching them that in spite of all suspicion to the contrary, their independence is safe, that we are not waiting for plausible opportunities to convert their country into British territory."

Adoption Minute, 30th April 1860.

इस बीचमें जो दुर्दैवका वायु बह रहा था वह आपकी अभय वाणी-से अब बिलकुल नष्ट हो गया। इसके लिए मुझे बड़ा आनन्द हो रहा है।"

सन् १८५७ के बलवेमें अनेक देशी और विदेशी वीरोंका जो पराक्रम देख पड़ा वह भी एक बड़े महत्त्वकी बात है। इस प्रकारके वीर-रत्न जिस देशमें पैदा हों उस देशको सचमुच ही धन्य समझना चाहिए। सर ह्यू-रोज़, जॉन लारेन्स, नेपियर इत्यादि जिन वीरोंने हिन्दुस्तानमें अपनी वीरता दिखाई है उनके विषयमें इङ्गलैंडको बड़ा अभिमान है और वहाँके लोग उन वीरोंका यश गानेमें सदैव तत्पर रहते हैं। इससे यह बात अच्छी तरह मालूम हो जाती है कि उन लोगोंमें स्वदेश-प्रीति कैसी जाग्रत है। हमारे देशके जिन वीर-रत्नों का बड़े-बड़े प्रतिष्ठित और गुण-वान अँगरेज़ोंने अभिनन्दन किया है उनके चरित यदि हम लोग न जान पावें तो कहना चाहिए कि अपने देशके इतिहासके प्रति हमारी बड़ी ही उदासीनता है। सन् १८५७ के बलवे में हिन्दुस्तानकी जिस स्त्री-रत्न ने अपने अलौकिक तेजसे सारे संसार को चकित कर दिया था उसके शुद्ध गुणोंके लिए अपना अभिमान दिखाकर उसे इतिहास के अग्रस्थान में भूषित करना हमारा परम कर्तव्य है। तेजस्वी हीरा यदि किसी बुरी जगह में भी पड़ा हो तो रत्न-परीक्षक उसकी योग्यता कभी कम नहीं ठहरा सकता। झाँसी राज्यकी अतुल पराक्रमी महारानी लक्ष्मीबाई यद्यपि किसी कारणसे बलवाइयोंके पक्षमें होगईथीं तोभी इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनकी तेजस्विता, स्वाभिमान, वीरता और बुद्धि-चतुरता बड़ी प्रशंसनीय थी। यह कोई साधारण बात नहीं है कि सर ह्यू-रोज़ के जैसे एक बड़े भारी रण-धुरंधर योद्धाके साथ— जिसकी वीरताका अर्ल आफ़ डर्बी, ड्यूक आफ़ केम्ब्रिज और

लार्ड पामस्टर्न ने बड़ा यश गान किया, जिसके अतुल पराक्रमका वर्णन करते-करते अनेक अँगरेज़ सम्पादक अपनेको भूल गये, अपनी चतुरता और बहादुरीके बदले जिसे "वेरन स्ट्रेद्नेर्न और झाँसीके सरदारका खिताब मिला और "फ़ील्ड मॉर्शल" की पदवी मिली—एक पर्दानशीन स्त्रीने कितने ही दिनों तक बराबर बड़ी वीरतासे टक्कर ली और अपने अपूर्व तेजसे उसे चकित कर उसके द्वारा धन्यवाद लाभ किया। इससे ह्यू-रोज़का बड़प्पन और गुण-ग्राहकता भी अच्छी तरह प्रकट होती है। ऐसे विजयी पुरुषने जिस स्त्री-रत्न का अभिनन्दन किया, उसका प्रकट होना सन् १८-५७के बलवेके शोचनीय इतिहासमें एक स्मरणीय कौतुक है और इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि यह कौतुक इतिहास-प्रिय लोगोंके लिए सदैव आनन्दका कारण होगा।

महारानी लक्ष्मीबाईने जिस पक्षको स्वीकार किया था उसे छोड़कर यदि वे अँगरेज़ी सरकारकी ओरसे लड़तीं तो अँग-रेज़ी राष्ट्रकी ओरसे उनका बहुत गौरव हुआ होता और उनके यशका पारावार न रहता। परंतु ऐसा मौक़ा नहीं आया; इसके लिए क्या किया जा सकता है। परमेश्वर जैसी बुद्धि देता है उसी प्रकार सब बातें होती हैं। परमेश्वर की कृपासे जिसका उद्देश सिद्ध हो जाता है वही चतुर कहलाता है और उसीके काम की सब तारीफ़ करते हैं। महारानी कई ख़ास कारणों से—ख़ासकर स्वराज्य के सुरक्षित रखने की लालसासे—बलवाइयों में शामिल हुई थीं। इसलिए किसी-किसी अँगरेज़ इतिहासकारने जो उनके विरुद्ध लिखा तो इसमें कोई अचरज की बात नहीं; परंतु उनमें ऐसे भी कई उदार अँगरेज़ ग्रंथकार हुए हैं, जिन्होंने महा-रानी के गुणों की बड़ी तारीफ़ की है। ऐसी हालत में हमारा कर्त्तव्य होना चाहिए कि हम उन्हें धन्यवाद दें और ऐसी सद्गुणी

महारानी को अपने देशके मानव-रत्नोंमें सबसे उच्च स्थान पर शोभित करें।

महारानीके अनुपम गुणोंके विषयमें बहुत से अँगरेजोंने आनन्द में आकर जो कुछ कहा है उस पर ध्यान देनेसे मालूम होता है कि उन्होंने 'गुणाः पूजा स्थानं गुणिष न च लिगं न च वयः', महाकवि भवभूतिकी इस उक्तिके अनुसार महारानीके गुणोंको अपने हृदयमें श्रेष्ठ स्थान देकर उनका उचित आदर किया है। उनकी यह उदार कृति अवलोकन कर प्रत्येक देशाभिमानी सज्जन आनन्दित होगा। सर ह्यू-रोज़के समान योद्धाने रहीम कविके कहे हुए :—

'रहिमन साँचे शूरको वैरिहु करत बखान'

इस पद्यके अनुसार संपूर्ण संसारमें प्रकट कर दिया कि "महारानीकी अति उच्च कुलीनता, आश्रित जनों और सैनिकोंके साथ उनकी अपार उदारता और विकट प्रसङ्गमें तनिक भी न डगमगानेवाली उनकी अद्वितीय धीरता के कारण उनका विशेष गौरव हुआ और उनके पक्षको भयंकर स्वरूप प्राप्त हुआ।" † महारानीकी मृत्यु का हाल सुनकर उसी वीर पुरुषने शोकके साथ फिर कहा कि "ग्वालियर की लड़ाईका अतिशय महत्त्वका परिणाम झाँसीकी महारानी लक्ष्मीबाईकी मृत्यु है। वे जातिकी अबला थीं तो भी प्रतिपक्ष की ओर वे अति शूर और

---

† The high descent of the Ranee, her unbounded liberality to her troops and retainers, and her fortitude, which no reverses could shake, rendered her an influential and dangerous adversary.

Despatch, April 1858.

अति उत्तम सेनाग्रणी थीं"†! डॉ० लो ने ग्वालियरकी जीतका हाल लिखते हुए कहा है कि "हमारी सर्व-व्यापक शत्रुओंकी लड़ाईमें जो सबसे महत्त्वकी बात हुई वह यह कि जी पर खेलनेवाले योद्धाओं और उनकी वीर सेनासे ग्वालियर जीता जा सका है। इस लड़ाईमें हमारे शत्रुओंका अतिशय दृढ़ निश्चयी, पानीदार और प्रबल अगुआ—झाँसी की रानी—का पतन होगया ‡" मार्टिन नामक इतिहासकारने राजपूत वीरोंसे तुलना करते हुए महारानीकी तेजस्विताके विषयमें कहा है कि "लक्ष्मीबाई तरुणाईके जोशमें और बहुत सुंदर थीं; उनका मन उत्साह-पूर्ण और शरीर सुदृढ़ था; और सुप्रसिद्ध राजपूत वीर महाराना अमरसिंह (महाराना प्रतापसिंहके पुत्र और जहाँगीरके प्रतिपक्षी) की तरह उनका प्रण था कि:—

मनस्वी म्रियते कामं कार्पण्यं न तु गच्छति " +

---

† The most important result was the death of the Ranee of Jhansi, who although a lady, was the *bravest and best military leader* of the rebels.

‡ The chefdœuvre of the campaigns in India against our ubiquitous foes was the wresting of Gwalior from the hands of these desperate leaders and their well-trained army in which victory their *most determined, spirited and influential head*—the Ranee of Jhansi—was slain.

Central India, P. 301.

+ In the prime of life, exceedingly beautiful, vigorous in mind and body Lakshmi Bai had all the pride of the famous Rajput prince the Rana Umra (the opponent of the Emperor Jahangeer) who,

" rather than be less, cared not to be at all."

Indian Empire, P. 303.

"प्राण चाहे भले ही चले जायँ पर अपनी मानहानि कभी न होने दूँगी।"

सर एडविन आर्नोल्डने बड़े अचरज और आनन्दके साथ महारानीके पराक्रमका वर्णन करते हुए कहा है कि "जिस स्त्री के विषयमें मालूम हुआ था कि वह राज-काज न चला सकेगी—वही स्त्री प्रचंड सेनाका आधिपत्य स्वीकार करनेके लिए पूर्ण समर्थ हुई!" इतना ही नहीं किन्तु उसने महारानीकी प्रशंसा कर उनकी उपमा इंग्लैंडकी बोडिशिया नामक वीर रानीसे दी है। रानी बोडिशिया प्राचीन कालमें रोमन लोगोंसे लड़ी थी†। डब्ल्यू० सी० टॉरस

---

† We found that the woman from whom we had taken, as incapable of government, the regency of a state, could at least command an army. Her name was the centre of the revolt in the North-west. She was the swarthy Boadicea of the Hindu and Mussalman levies; by her adroit intrigues Gwalior was nearly lost, and Central India with it. For weeks and months, after Delhi fell, her wonderful power of generalship kept the British columns under Sir Hugh Rose at the strain of effort and endurance, till at last she led her troops in open battle against us at Kalpee. Defeated there, she made another masterly effort against us at Gwalior, and it was not the fault of this able and passionate woman that her army broke that day, and fled in utter confusion. Armed and dressed as a cavalry officer she led, her ranks to repeated and fierce attacks, and when the camel corps, pushed at by Sir Hugh

नामक पार्लिमेण्टके एक सभासदने महारानीका वर्णन करते हुए फ्रांस देशकी जॉन आफ आर्क नामक स्त्री रत्नसे उनकी तुलना की है। यह वीर स्त्री १५ वीं सदीमें हुई और बहुत प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ-कारने बड़े अचरजके साथ कहा है कि 'तुमुल और भयंकर युद्धमें कई घंटों तक घनघोर युद्ध-परिश्रम करने पर भी महारानी किसी प्रकार रणसे पीछे न हटती थीं !"† जस्टिन मेकार्थीने अपनी सत्य-प्रिय मधुर वाणीसे प्रतापशाली वीर-मंडलमें महारानीकी गणना की है और उनका अभिनन्दन करते हुए कहा है ❀ कि "सर ह्यू-

---

in person, broke her last line, she was among those who stood when hope was gone.

Dalhousie's Administration of British India. Vol. II, P. 152.

† At the first note of insurrection in 1857, she took to horse, and for months in male attire headed bands, squadrons and at length formidable corps of the Mahrattas, until she became in her way another Joan of Arc to her frenzied and fierce followers. No insurgent leader gave more trouble to the columns of Sir Hugh Rose; but not even in desperate and deadly fight, lasting for many hours, could she be persuaded to quit the field.

Empire in Asia P. 376.

* One of those who fought to the last on the rebel side was the Ranee or Princess of Jhansi whose territory as we have already seen, had been one of our annexations. She had plunged all her energies into the rebellion, regarding it clearly as a rebellion and not as a mere mutiny. She took the field with Nanasahib and Tantia

रोजने, उदार और विजयी योद्धाकी तरह, बड़े आनन्द से, सम्मानपूर्वक, महारानीकी जो स्तुति की है वह 'गुणी गुणं वति' के न्यायसे बिलकुल ठीक है। उन्होंने कहा है:—

"शत्रु-दलकी ओरका सबसे उत्तम मनुष्य यदि कोई है तो वे झाँसीकी महारानी लक्ष्मीबाई हैं।"

इस प्रकार जिनके विमल गुणोंकी सुन्दर सुगन्धसे पश्चिमी लोगोंके अंतःकरण सन्तुष्ट होकर आनन्दसे उल्लसित हों, उन अतुल पराक्रमी, वीर्यशालिनी महारानी लक्ष्मीबाईके समान दिव्य स्त्री-रत्न यदि हमारे आर्यावर्त्तको सुशोभित करें और उनके अति उतम गुणोंके प्रकाशसे प्रत्येक राजनिष्ट और स्वदेशाभिमानी पुरुषके अन्तःकरणमें उनके विषयमें यदि अभिमान और पूज्य-बुद्धि उत्पन्न

Topee. For months after the fall of Delhi she contrived to battle Sir Hugh Rose and the English. She led squadrons in the field. She fought with her own hands. She was engaged against us in the battle for the possession of Gwalior. In the uniform of the cavalry officer she led charge after charge and was killed among those who resisted to the last. Her body was found upon the field scarred with wounds enough in the front to have done credit to any hero. Sir Hugh Rose paid her the well-deserved tribute which a generous conqueror is always glad to be able to offer. He said in his general orders, that *the best man upon the side of the enemy was the woman found dead, the Ranee of Jhansi.*

History of our own times by Justin McCarthy M. P.111.

हो तो बड़े सौभाग्यकी बात है। ऐसी अद्वितीय स्त्री-रत्नकी गुण महिमाका अधिक वर्णन करने के लिए कौन समर्थ हो सकता है।*

उस जगन्नालक प्रभुसे हम विनीत प्रार्थना करते हैं कि वह सदैव भारतवर्षको ऐसे पुरुष और स्त्री-रत्नोंसे सुशोभित करें जिनसे

*हमारे देशके भी कई सज्जनोंने महारानीके विषयमें बहुत अच्छा लिखा है। उदाहरणके लिए यहाँ पर हम दो अवतरण देते हैं:—

"The extraordinary actions and heroism of this great lady shed an imperishable lustre on the ever memorable period of 1857. Ranee Lakshmi Bai, the flower of maiden chivalry, was a lady of 26 or 30 years of age, exceedingly beautiful and endowed with high spirit, enthusiastic courage and lofty patriotic fervour. She was remarkable also for her immaculate character, strength of mind and physical activity. A few years before the out-break of the rebellion of 1857, this charming beauty was seen on the musnad of Jhansi, governing the country like an accomplished ruler for the infant adopted son of her deceased lord Gangadhar Rao. The influence which this great lady had over her subjects was immense. On all hands she was regarded as a generous and able ruler.'

The National Guardian, December 14, 1891.

अजमेरके 'राजस्थान-समाचारपत्र के सम्पादकने महारानी लक्ष्मीबाईका संक्षिप्त जीवन-चरित्र अपने पत्रमें प्रकाशित किया था। उसमें उन्होंने लिखा है:-

'प्रिय पाठक ! दुःख दरिद्रतासे पूर्ण हताश भारत की शोचनीय अवस्था में एक बार इस अपूर्व विषयका चिन्तन करो कल्पनाके सम्मोहन नेत्रोंसे एक बार इस भयंकरी महाशक्तिकी ओर देखो। हृदयमें अश्रुतपूर्व, अनास्वादित-पर्व

देशका अनन्त उपकार हो और जिनके यश-प्रकाशसे सम्पूर्ण जगत् प्रकाशित हो। हम उस परमेश्वरको इसलिए असंख्य धन्यवाद

एक कैसे अनिर्बचनीय रसक संचार होगा—लक्ष्मीबाई वीर पुरुष के वेशमें, घोड़े पर सवार होकर, अपनी मराठी सेनाको चलाने लगीं। ब्रिटिश सेनाके साथ युद्ध होने लगा। लक्ष्मीबाईने इस संग्राममें किसी प्रकारकी कातरता नहीं दिखाई। उसने कई मास तक असीम साहससे, अकुतोभयसे, अँगरेज़ोंके साथ युद्ध किया। सुदक्ष ब्रिटिश सेनापति कई मास तक इस वीर्य्यवती वीरांगनाके अद्भुत रण-कौशल और असामान्य साहससे विस्मित होकर मुक्त कंठसे उसके यशोगानमें तत्पर हुआ! प्रथम युद्धमें लक्ष्मीबाईने अपना असाधारण पराक्रम दिखलाया था। उसके संग्राम-नैपुण्यसे ब्रिटिश सेनापति सर ह्यू रोज़का सैन्यदल भी विश्रृंखल और हतवीर्य हो गया था। इस वीरांगनाके वीरत्वका यशोगान कौन करेगा?

इस निर्जीव भारतमें कौन सहृदय इस ऐतिहासिक अनंतकीर्त्तिकी कहानीको अक्षय अक्षरोंमें लिख सकेगा? भारत यथार्थ ही जगत्में अतुलनीय है। जिन्होंने महासंग्राममें नेपालियन जैसे अलोकसामान्य वीर पुरुषको भी हत-गौरव किया था; भारतकी वीर रमणी उनके सैन्य-दलको निर्मूल करनेमें कृत-हस्त हुई है। प्रचंड निदाघके भयंकर समयमें भारतकी महाशक्ति ब्रिटिश सेनापतिकी शक्ति नाश करनेमें उद्यत हुई है। इस अपूर्व भावकी गम्भीरता जानना सबको साध्य नहीं है—बहुतसी सेना नाश हो गई तो भी लक्ष्मीबाई की तेजस्वितामें किसी प्रकारकी न्यूनता नहीं हुई। उसने फिरसे, महापराक्रमसे, कालपीमें युद्ध किया; अन्तमें कालपी अँगरेज़ोंके हाथमें गई तो भी लक्ष्मीबाईका उत्साह तथा उद्यम नष्ट नहीं हुआ। जिन्होंने उसका राज्य लिया है, उसको सामान्य लोगोंकी दशामें डाला है; वे चाहे जैसे हो; उनकी क्षमताका नाश करना उसका एक मात्र उद्देश्य था। लक्ष्मीबाईने इस उद्देश्य-

देते हैं कि जिसने महाकीर्त्तिमान, स्वतंत्र्य-भक्त, ब्रिटिश-साम्राज्य हिन्दुस्तानमें क़ायम किया और अन्तमें उसीसे हम इतनी प्रार्थना

सिद्धिके लिए अपना जीवन उत्सर्ग किया। वीर रमणीकी यह प्रतिज्ञा कभी स्खलित नहीं हुई थी—वीरत्वकी इस उज्ज्वल मूर्त्तिमें किसी समय किसी प्रकारकी कालिमाकी छायाका स्पर्श नहीं हुआ था। ईस्वी सन् १८५८ की १७ जूनको लक्ष्मीबाईने ग्वालियरके आसपास अँगरेज़ी सेनाके साथ लड़ाई की। फिर भैरव-रवसे "युद्धं देहि" कहकर ब्रिटिश सेनापति सर ह्यू रोज़के सामने हुई। यह युद्ध उस वीर रमणीके जीवनका अन्तिम युद्ध था। इस युद्धकी अन्तिम घड़ीमें उस वीर रमणीका जीवन-स्रोत स्वर्गीय अमृत-प्रवाहमें मिल गया। इस युद्धमें वीरांगनाके असाधारण पराक्रमको देखकर सर रोज़ने कहा था कि "लक्ष्मीबाई थी तो रमणी तथापि वह विपक्षियोंमें सबसे अधिक साहसिनी और सबसे अधिक रण-पारदर्शिनी थीं"। वीर पुरुषको अंगनाका सच्चा गौरव मालूम था—इसीसे वह सम्मानके साथ प्रकृत वीरत्वकी ऐसी गौरव-रक्षा करता है। इस भयंकर युद्धमें लक्ष्मीबाई और उसकी बहन अपनी सेनाके आगे रहती थीं। दोनों कवचसे आच्छादित, दोनों घोड़ों पर सवार और दोनों वीर पुरुषके वेशमें सज्जित थीं। कई घंटे तक घोरतर युद्ध करने बाद दोनों भगिनी जब रणभूमिसे फिरकर लौटी आती थीं तब विपक्षी तुरक सवारकी गोली अथवा तलवारके आघातसे दोनोंके प्राण-वायुका अवसान हुआ। रणक्षेत्रमें वीरांगनाद्वय का पतन ब्रिटिश सेनापतिके नयनगोचर नहीं हुआ। अन्तमें रक्ताक्त देह पवित्र समर-क्षेत्र में दृष्टि पड़ा। मृत देहकी रक्षाके लिये स्वामिभक्त देह-रक्षक प्राणार्पण करनेको चारों ओर खड़े थे। तत्काल चिता तैयार की गई और देखते-देखते परम सुन्दरी वीर रमणी-युगलको देह भस्मसात हो गई। लक्ष्मीबाईके जीवन-नाटकका यह अन्तिम अंक कैसे गम्भीर भावका उद्दीपक है! अपनी स्वाधीनता के लिए

करके इस चरित्रको समाप्त करते हैं कि इस साम्राज्यका फल हमारे लिए चिर कल्याणकारी हो।

युवती वीर-रमणी ऐसा असाधारण आत्म त्याग करे! अहा! यह कैसे गम्भीर उद्देश्यका परिपोषक है! हा! इस गम्भीर भाव से कौन न प्रमत्त होगा! इस गम्भीर उद्देश्यके लिए कौन कान न देगा!"

हिन्दी-गौरव-ग्रन्थमाला ।

इस नामकी जो ग्रंथमाला हमारे यहाँसे निकलती है उसने थोड़े ही समयमें हिन्दी-संसारमें अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की है। इसलिए कि उसकी पुस्तकें भाव-भाषा-साहित्य, छपाई-सफ़ाई आदि सभी दृष्टिसे उत्तम और उपयोगी होती हैं। उनके चुनावमें खूब सावधानी रक्खी जाती है; और वे लब्ध-प्रतिष्ठ लेखकों द्वारा लिखाई जाती हैं। इस ग्रंथमालामें प्रकाशित पुस्तकोंकी सरस्वती, भारतमित्र, प्रताप आदि प्रतिष्ठित पत्रोंने अच्छी समालोचनाएँ की हैं। आठ आने प्रवेश-फ़ी देकर स्थायी ग्राहक बननेवालोंको इसकी सब पुस्तकें पौनी क़ीमतमें दी जाती हैं।

नीचे लिखी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं:—

१. सफल गृहस्थ। अँगरेज़ीके प्रसिद्ध लेखक सर आर्थर हेल्पसके निबन्धोंका अनुवाद। इनके पूर्वार्द्धमें मानसिक शान्ति प्राप्त करनेके उपाय, कार्य-कुशलता, कुटुम्ब-शासन, हृदयकी गंभीरता, संयम आदि अपने और अपने कुटुम्ब के सुखसे सम्बन्ध रखनेवाले विषयोंका वर्णन है और उत्तरार्द्धमें व्यापार से सम्बन्ध रखनेवाले व्यवसायी मनुष्यकी शिक्षा, व्यवसाय-संचालन, कर्मचारियोंकी नियुक्ति, उम्मेदवारोंसे व्यवहार, आदि विषय आये हैं। बड़ी उपयोगी पुस्तक है। क़ीमत ग्यारह आने।

आरोग्य-दिग्दर्शन। देशभक्त महात्मा मोहनदास-करमचन्द गांधीकी गुजराती पुस्तकका हिन्दी-अनुवाद है। पुस्तक प्रत्येक

गृहस्थके लिए बड़ी उपयोगी है। पुस्तकमें आरोग्य, हमारा शरीर, हवा, पानी, .खुराक, कसरत, स्त्री-पुरुषोंका सम्बन्ध, जल चिकित्सा, मिट्टीके उपचार, क़ब्ज़, संग्रहणी, दस्त, अर्श, छूतके रोग, शीतला, प्रसव, बच्चोंकी संभाल सर्प-बिच्छू आदिका काटना, डूबना या जल जाना आदि अनेक विषय हैं। मूल्य ग्यारह आने।

३. कांग्रेसके पिता मि० ह्यूम। कांग्रेसके जन्मदाता, भारतमें राष्ट्रीय भावोंके उत्पादक, मनुष्य-जातिके परम हितैषी, स्वार्थ-त्यागी महात्मा मि० ह्यूमका यह जीवन-चरित्र प्रत्येक देश-भक्तके पढ़ने योग्य है। यह अनेक महत्त्वके तथ्योंसे पूर्ण मि० वेडरबर्नके लिखे हुए अँगरेज़ी ग्रन्थका हिन्दी-अनुवाद है। यह एक प्रकारसे कांग्रेसका इतिहास भी है। क्योंकि मि० ह्यूम के जीवन से कांग्रेस बहुत कुछ मिली हुई है। मूल्य ग्यारह आने।

४. जीवनके महत्त्व-पूर्ण प्रश्नों पर प्रकाश। प्रसिद्ध अमेरिकन लेखक जेम्स एलनकी अँगरेज़ी पुस्तक "लाइट आन लाइफ़्ज़ डिफ़िकल्टीज़" के आधारसे इसे श्रीयुत बाबू ख़ूबचन्दजी सोधिया बी० ए०, बी० एल्, एल्० टी० ने लिखा है और इसे सर्वथा इस देशके शिक्षितोंके लिए उपयोगी बना दिया है। मूल पुस्तक जहाँ कठिन और क्लिष्ट थी, वहाँ यह सरल और सुबोध बन गई है। मूल्य आठ आने।

५. विवेकानन्द (नाटक)। मराठीके लेखक श्रीयुत अच्युत बलवंत कोल्हटकर बी० ए०, एल्, एल्० बी० के लिखे मराठी नाटकका अनुवाद। स्वामी विवेकानन्द एक बार अमेरिकाकी सार्वधर्मपरिषदकी ओरसे आमंत्रित होकर भारतसे अमेरिकाको गये थे, उस समयको लेकर इस नाटककी रचना की गई है। अमेरिकामें जाकर स्वामीजीने जो हिन्दू-धर्मका प्रचार किया, उसकी महत्ताका वहाँके लोगों पर प्रकाश डाला, इस विषयका इसमें बड़ी सुन्दरतासे चित्र खींचा गया है। देशभक्तिकी पवित्र भावनाओंसे

नव-प्राप्त आनन्दका अनुभव न करने लगो और तुम्हे यह मालूम न होने लगे कि अब तुम पहलेकी भाँति निर्बल, पद-दलित प्राणी नही रहे जैसे कि तुम अपने आपको समझा करते थे, बल्कि तुम एक कीर्त्तिशाली, देदीप्यमान सुखी प्राणी हो, तो मै कहती हूँ कि मेरा नाम श्रा इष्णु हारा नही।" मूल्य एक रुपया। सजि० १।≈)

९ जीवन और श्रम। स्वावलम्बन मितव्ययिता, कर्त्तव्य आदि पुस्तकोके मूल-लेखक सेमुएल स्माइलके सुप्रसिद्ध ग्रथ 'लाइफ एण्ड लेबर' का भावानुवाद। अनुवादक, बाबू रामचन्द्र वर्मा। मूलकी अपेक्षा इस अनुवादमे बहुत कुछ विशेषता है और वह कि इसमे इस देशके बहुतसे उदाहरण दिये गये है और इसे सब तरहसे भारतवासियोंके लिए उपयोगी बना दिया है। परिश्रम करनेसे घबड़ानेवाले और परिश्रम करनेको बुरा समझनेवाले भारतके लिए ऐसी पुस्तके सजीवनी शक्तिकी दाता है। श्रम कितने महत्त्वकी बात है, यह इसे पढ़नेसे मालूम होगा। पृष्ठ सख्या ·५० के लगभग। मूल्य डेढ़ रुपया।

१०. प्रफुल्ल (नाटक)। महाकवि गिरीशचन्द्र घोषके बँगला नाटकका हिन्दी-अनुवाद। जिस समय यह नाटक रगभूमि पर खेला गया था उस समय अँगरेजीके प्रसिद्ध पत्र 'स्टेट्समेन' मे कोई तीन दिन तक इसकी बराबर समालोचना हुई थी। हमारे घरों और समाजमे जो फूट, स्वार्थ, मुकदमेबाजी, ईर्षा, द्वेष आदि अनेक दोषोने घुसकर उन्हे नरक-धाम बना दिया है उनके सशोधनके लिए गिरीश बाबूके सामाजिक नाटकोके प्रचारकी बडी आवश्यकता है। 'प्रफुल्ल' हिन्दी-साहित्यमे इस विषयका पहला और सर्वोत्तम नाटक है। मूल्य १≈)

११. लक्ष्मीबाई (झाँसीकी रानी)। सुप्रसिद्ध इतिहास-लेखक श्रीयुत दत्तात्रय-बलवतकी लिखी हुई मराठी पुस्तकका